अन्धा

(उपन्यास)

लेखक :
रईस अहमद जाफ़री

प्रकाशक :
दिल्ली साहित्य सदन,
दिल्ली-३२

प्रकाशक—दिल्ली साहित्य सदन,
सी-२०६, अरुणा नगर, शाहदरा-दिल्ली-३२



अनुवादक—साधना प्रतापी ।



मूल्य—चार रुपये पचास नये पैसे ।



चित्रकार—राम मूर्ती



मुद्रक—राजकमल प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली ।

AANDHA Price 4.50

इस उपन्यास के पात्र एवं घटनाएं
सब काल्पनिक हैं।

DEVAL

१

आज नवाबजादी रफहतजहाँ का जन्म दिन था। इसी वर्ष उसने अच्छे अंक लेकर एम० ए० की थी। इसलिए यह जन्म दिन और भी धूम-धाम से मनाया जा रहा था। आज सिटी कालीज के प्रोफेसरों को विशेषकर बुलाया गया था। परवेज अभी नया ही दर्शन शास्त्र का प्रोफेसर नियुक्त हुआ था। वह जानता भी नहीं था कि नवाब जादी साहिबा हैं ही कौन लेकिन प्रिंसिपल खन्ना इन्हें भी अपने हाथ घसीट लाये थे।

निमन्त्रित अतिथि स्वयं ही तीन टुकड़ियों में विभक्त हो गये थे। एक ओर नवाब अशरफ उल्दोला और उसके बहुत से मित्र हवेली के एक ओर बगीचे में बैठे इधर-उधर की गापें हाक रहे थे। दूसरी ओर नवाब तलतजहाँ बेगम की सखियाँ, हिन्दू, पारसी, ईसाई, एंगलो इन्डियन, औरतें बड़ी संख्या में एकत्रित थीं—और तलतजहाँ बेगम के व्यवहार और अतिथि सेवा की प्रशंसा कर रही थीं। वह सब से हंस हंसकर बातें कर रही थीं। एक-एक से कुशल-क्षेम पूछ रही थीं और विवश करके खिला-पिला रही थीं। तीसरा झुरमुट नवाबजादी की सखियों का था। इनकी मेज और कुर्सियाँ बगीचे के बीच सब से अलग हट कर पड़ी थीं; वह आपस में हंसी-दिल्लगी कर रही थीं। इनमें कई वह लड़कियाँ थीं जो इस वर्ष कालेज में सफल हुयी थी। कई वह थीं जो अभी पढ़ रही थीं। कुछ देर तक तो खाने का कार्यक्रम चलता रहा फिर इधर-उधर की बातें होती रहीं। रफहत ने सरोजिनी से कहा—'भई, यह फीकी मजलिस तो अच्छी नहीं लगती।'

'तो फिर क्या आज्ञा है नवाबजादी साहिब दिखाऊँ अपना—' सरो-

जिनी ने कहा, 'न बाबा ! नाच तो हम नहीं देखेंगे—अगर गाना सुना दो तो मजा आजाये । क्यों शहनाज ?'

शहनाज की ओर निहारते हुये रफहत बोली—

'हां-हां, कसम खुदा की बड़ा मजा रहेगा ।'

'गाना सुनना है तो कमरे में चलें वहाँ रेडियो भी है । हर तरह के कच्चे पक्के गीत हो रहे होंगे, वहीं सुन लेना ।'

'न भई, हम तो तुम्हारा गाना सुनेंगे ।' जीनत ने भी टांग अड़ाई ।

'तुम लोग तो मेरे पीछे ही पड़ गयीं ।' सरोजिनी बोली ।

'यह इस प्रकार नहीं मानेगी ।' शोभा ने उठते हुये कहा और फिर सरोजिनी को गुदगुदाना आरम्भ कर दिया । वह हंसते-हंसते बेदम हुयी जा रही थी । बोली—'अच्छा बाबा ! छोड़ो मुझे, सुनाती हूं गाना ।'

सब सम्भल कर बैठ गये और सरोजिनी ने धीरे-धीरे गाना आरम्भ किया, आवाज उसने धीमी ही रखी ताकि आवाज दूर न जा सके । वह हल्की तानें लगा रही थी और सुनने वालों के दिल हिल रहे थे ।

वातावरण पर सन्नाटा छाया हुआ था । न कुमारी को अपनी शोखी याद थी और न मुम्ताज को अपनी शरारत । शोभा की बोटी-बोटी फड़क रही थी । पर गीत में वह इस भाँति खोई जैसे कुछ होश ही न हो ।

जीनत को अपने पर बड़ा नाज था कि सरोजिनी उससे अच्छा कहां गा सकती है परन्तु अब वह भी प्रशंसा किये बिना न रह सकी । मिस डीसूजा एक हंसमुख ईसाई लड़की थी । वह थोड़ी-बहुत उर्दू जानती थी । इस समय यह गाना उसे भी मस्ती में डुबोये हुये था । इसे अपने दिल के तार हिलते हुए अनुभव होने लगे । सरोजिनी ने गाना समाप्त किया तो सब लोग ऐसे चौंके जैसे एक सुन्दर सपना देख रहे थे । तभी कुमारी ने कहा—'खूब गाया—वाह—वाह'

रफहत ने कहा—'सरोजिनी तुम्हारी कुछ आवाज भी बदल गयी

है, कुछ तुम भी बदल गयी हो, पहले तुम हमतन साज थीं और आज मिला-जुला दर्द नजर आ रहा है, यह बात क्या है ? मैं तो पूछ कर रहूंगी।'

'ऐ—वाह, बेबात की बात पूछो तो कोई क्या उत्तर दे।' सरोजिनी ने हंसते हुये कहा ।

'मैं नहीं जानती। दाल में काला अवश्य है। यह दर्द, यह सोज तो नहीं था।'

'मैं खोल दूं यह रहस्य।' मुमताज बोली ।

'चल हट, तुझे तो हर समय मजाक सूझता है।' रफहत ने कहा ।

'अल्लाह कसम मजाक नहीं सच···'

'यह तो पगली है। सदैव बे पर की उड़ाती है। इसकी बात का क्या विश्वास।' सरोजिनी ने कहा।

'यह हजरत सरोजिनी साहिबा···'

'आशिक हो गयी है किसी पर।'

'हां।' मुमताज बोली।

'आखिर किस पर ?' रफहत ने पूछा ।

'बता दूं सरोजिनी ?' मुम्ताज ने छेड़ा ।

'मुझ से पूछ कर झूठ क्यों बोलती हो।' सरोजिनी ने नाराज सी होकर कहा।'

'हम तो इसलिये चुप थे कहीं तुम नाराज न हो जाओ, और अब नाराज हो ही गई हो तो कहे ही देते हैं जो सच्ची बात है···'

'तोबा भई, कहती क्यों नहीं ?' रफहत ने उकसाया ।

'तो सुनो, यह प्रोफेसर परवेज पर मरती हैं।'

'यह कौन साहिब हैं ?' रफहत ने पूछा ।

'नये-नये प्रोफेसर हो कर आये हैं हमारे कालेज में।'

'बहुत सुन्दर है क्या ?' रफहत ने पूछा।

'एक अन्धा यदि सुन्दर भी हो तो क्या है ?' मुमताज ने मुस्कराते

हुये कहा ।

'वह अन्धे हैं ?' रफहत ने हैरान होते हुये कहा ।

'हाँ बिल्कुल अन्धे, और बहरे भी ।' मुमताज ने मुंह बनाते हुये कहा ।

कुमारी ने एक जोर का कहकहा लगाया । दूसरी लड़कियां भी इसके साथ हंसने लगीं । इनमें यह बातें हो ही रही थी कि नवाब अशरफउल्दोला जल्दी-जल्दी इधर आते दिखाई दिये । इन्हें देखते ही सब लड़कियों खड़ी हो गयीं । नवाब साहिब ने बड़े प्यार से रफहत के सर पर हाथ रखा और कहा—'बेटी चलो अपने प्रोफेसरों को सलाम तो कर लो । प्रिंसिपल खन्ना तुम्हें पूछ रहे थे ।'

'चलिये अब्बा जान !' रफहत ने कहा ।

रफहत ने प्रिंसिपल खन्ना से हाथ मिलाया और अपने दूसरे प्रोफेसरों को सलाम करके एक कुर्सी पर बैठ गई । पास की कुर्सी पर एक नवयुवक बैठा था । सुन्दर मुखरा, अधरों पर मुस्कराहट । प्रिंसिपल ने रफहत से कहा—'यह है प्रोफेसर परवेज, दर्शनशास्त्र पढ़ाते हैं । बड़े हंसमुख और जिन्दा दिल इन्सान हैं ।'

वह मुस्करा कर उठा और आगे बढ़ कर हाथ मिलाया । हाथ से हाथ मिलते ही रफहत को ऐसे लगा जैसे सारे शरीर में बिजली सी दौड़ गयी हो—वह घबड़ा कर बोली—

'बड़ी प्रसन्नता हुई आप से मिल कर ।'

परवेज ने कोई उत्तर न दिया । वह मुस्कराया और अपनी कुर्सी पर बैठ गया । यहां से उठकर अब रफहत अपनी सहेलियों के पास पहुंची तो मुमताज ने कहा—'कहो कैसे हैं प्रोफेसर परवेज । हैं न बिल्कुल अन्धे ।'

'चल हट, पगली कहीं की । वह कोई अन्धे हैं । इतनी बड़ी-बड़ी तो आँखें हैं ।' रफहत ने कहा ।

'लेकिन मोतिया बिन्द हो गया है, बेचारे को । कुछ भी तो दिखाई

नहीं देता।

'चल हट, तू स्वयं अन्धी है। अच्छे भले आदमी को अन्धा बना रही है।'

'लो भई, प्रतीत होता है इस अन्धे ने हमारी भोली-भाली रफहत को भी अब अपने तीरे-नजर का शिकार कर लिया है।'

शोभा ने भी चिढ़ाते हुये रफहत की ओर देखते हुए कहा। सब ने एक बार जोर से कहकहा लगाया। फिर कुमारी ने बात जारी रखते हुये कहा—'अब सरोजिनी बेचारी अकेली नहीं रहेगी।'

'तो हाय दिल खो ही गया, आज किसी का हो ही गया।'

'लेकिन देख लेना वह थूकेगा भी नहीं इन दोनों पर। अन्धा जो ठहरा क्यों शहनाज ?'

'हां, और क्या ?'

रफहत ने मुमताज और शहनाज की ओर देखते हुये कहा, 'तुम दोनों पागल हो। क्यों सरोजिनी ?'

'और क्या बिल्कुल पागल।'

यह कह कर सरोजिनी भी मुस्करा दी। शहनाज ने एक जोर का कहकहा लगाया और सब इसके साथ हंसने लगीं।

२

परवेज की योग्यता का लोहा सब मानते थे लेकिन इसकी खामोशी और बेगानगी से सब नाराज थे। वह बड़े परिश्रम से पढ़ाता था। किसी से अधिक बातचीत भी नहीं करता था। कालेज की वह लड़कियां जिन्हें अपनी सुन्दरता पर गर्व था परवेज पर अदाओं के तीर चलातीं पर वार खाली जाते थे। वह उसे निगाहों के खन्जर से घायल करतीं-करतीं स्वयं घायल हो जाती थीं और वह जरा सी भी खरोंच

नहीं खाता था। वह इससे बढ़-बढ़कर मिलती थीं, हंस-हंस कर लुभाती थीं। खिच कर उकसाती थीं लेकिन वह किसी पर बुरी निगाह नहीं डालता था।

पत्थर के सीने पर जो तीर चलेंगे वह टूट जायेंगे और चट्टान ज्यों की त्यों रहेगी। मिस राधा बैनर्जी हाल ही में विलायत से डाक्टरी की उपाधि लेकर आयी थीं। देखने में वह सुन्दर थीं, वाणी में विषेश प्रकार का जादू। बेहद हसीन थीं वह। अपनी सुन्दरता पर उसे गर्व भी था। वह मिलनसार तो थीं। पर इसका मिलना-जुलना स्त्रियों तक ही सीमित था। पुरुषों में बहुत कम ऐसे थे जो उसकी ओर न खिंचे रहे हों। प्रो० आनन्द तो विशेष कर दिलो जान से उसे चाहते थे। पर क्या मजाल कि राधा इन्हें सीमोल्लंघन करने का अवसर दे। कालेज के अन्य प्रोफेसर भी किसी न किसी तरह उसे हासिल करने की कोशिश में रहते। मगर एक राधा थी, कि किसी की ओर झुकती न थी। आनन्द ने तो इसका नाम खरी रख दिया था। राधा यदि किसी के लिए कुछ कहती तो वह परवेज था। लेकिन यह साहिब कुछ इस तरह की मिट्टी के बने थे कि न मुखड़े की पुस्तक पढ़ सकते थे और न हृदय की बात समझ सकते थे।

राधा ने परवेज पर कई वार किये। यदि और कोई होता तो तिलमिला जाता, जान हार देता, लेकिन वह इन आक्रमणों से बार-बार बचता रहा। स्टाफ रूम में राधा एक कुर्सी पर बैठी समाचार पत्र पढ़ रही थी। दूसरी कुर्सी पर मिस श्यामा बैठी कुछ सोच रही थी। वह अंग्रेजी साहित्य की प्रोफेसर थीं।

श्यामा के हुस्न में भी कोई कमी न थी बड़े-बड़े नुकीले तीर और पैने खन्जर भरे पड़े थे उसमें। इसकी निगाहों के तीर जिस पर चल गये वह बच नहीं सका। वहीं गिरा और फड़-फड़ाने लगा। प्रोफेसर डाबर तो विशेष कर इसके आशिक थे। वह इसे देख लें बस हो गयी इनके इश्क की तस्कीन।

यही दशा प्रोफेसर वर्मा की भी थी उन्होंने श्यामा को देखा तो बस आहें भरने लगे, वह इन दोनों से भली-भान्ति परिचित थी, वह हंस हंस इस तरह बातें करती कि दोनों भड़क उठते, श्यामा कभी-कभी अपने आप रूठ जाती और कभी बिना कहे मान जाती, वह आशिकों की कौम को बेवकूफ की संज्ञा देती थी, परन्तु परवेज ने इसे बेवकूफ बना रखा था। श्यामा ने इस पर भी जाल फेंका परन्तु वह बच निकला। लगाव की बातें कीं, लेकिन''' खिंची और रूठी लेकिन उसने बात तक न की'''''

राधा श्यामा के दिल की दशा जानती थी और श्यामा भी राधा की दशा भली-भाँती समझती थी -- दोनों आपस में मित्र थीं — परन्तु परवेज के बारे में दोनों अनजान बनी हुई थीं। इतने में परवेज आया। इसे देख कर राधा का रंग बदल गया, उड़ा हुआ चेहरा दिल की दास्तान सुनाने लगा। दोनों को अपनी-अपनी चिन्ता थी। राधा की यह दशा श्यामा न देख सकी और श्यामा का यह रंग राधा पर न खुलने पाया। राधा के समीप एक और कुर्सी पड़ी थी परवेज उस पर बैठ गया—राधा ने मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए परवेज से कहा— 'आपकी दार्शनिकता की तो मैं कायल हो गई।'

'यदि आप वास्तव में कायल हो गयी हैं तो मानना पड़ेगा कि मैं बहुत बड़ा दार्शनिक हूं—और भाग्यवान भी।'

'यह कैसे ?' राधा ने कहा।

'आपकी नजर पर चढ़ जाना क्या कम सौभाग्य है।' परवेज बोला।

'आप जिन्दा दिल भी हैं यह तो आज प्रतीत हुआ।' राधा ने मुस्कराते हुए कहा।

'यह आपका कमाल है मेरा नहीं, आप तो मरे हुये को भी जीवित कर सकते हैं।'

'मेरे दिल का क्या कहना'''''

यह बातें सुन राधा का मुख पुष्प की भान्ति खिल उठा। श्यामा

गम्भीर सी बन उठी और चली गयी। तभी राधा ने परवेज से कहा—'अच्छा यह बातें तो होती रहेंगी एक बात बताइये, तो जानें आप बहुत बड़े दार्शनिक हैं।'

'पूछिये—अवश्य बताऊंगा।' परवेज बोला।

'प्रेम की परिभाषा क्या है ?' राधा ने प्रश्नवाचक दृष्टि से परवेज को देखा।

'यह एक रोग है।'

राधा—'इसका उपचार।'

परवेज—'शरबते वस्ल।'

राधा—'देखिये मजाक नहीं, ठीक-ठीक बताइये।'

परवेज—'इसका सबसे उत्तम उपचार फाका है।'

राधा—'मतलब।'

परवेज—'जो लोग निश्चिन्त रहते हैं उन्हें यह रोग नहीं होता।' यह कह कर परवेज हंस पड़ा।

राधा—'क्या यह सच है ?'

परवेज—'अच्छा पहले एक बात बताइये।'

राधा—'कहिये, खुदा ने वह दिन भी दिया कि आपने कुछ पूछा।'

परवेज—'कहीं आपको तो यह रोग नहीं हो गया ?'

राधा—'यदि मैं हाँ कह दूं तो आप क्या कहेंगे ?'

परवेज—'सहानुभूति के अतिरिक्त कहूंगा क्या, यह कुछ कम है ?'

राधा—'क्या हृदय के घाव मीठे वचनों से अच्छे हो सकते हैं ?'

परवेज—'हृदय का अपरेशन तो हो नहीं सकता। पर विश्वास कीजिये, मीठी बातें हृदय को शक्ति प्रदान करने वाली होती हैं।'

राधा—'आपने कभी किसी से प्रेम किया है ?'

परवेज—(गम्भीर होकर) 'नहीं।'

राधा—'आपसे किसी ने प्रेम किया है ?'

परवेज—'किसी ने नहीं।'

राधा—'यह आपने कैसे जाना ?'

परवेज—'आप इस बारे में कुछ जानती हैं ?'

राधा—'कुछ-कुछ, थोड़ा-बहुत ।'

परवेज—'तो बताइये ।'

राधा—आप अभी तक कुछ नहीं समझे ?'

परवेज—'या तो मैं अवश्यकता से अधिक बुद्धिमान हूं—या फिर बहुत मूर्ख ।'

राधा—'वास्तव में आपके सीने में दिल नहीं पत्थर है ।'

परवेज—'अरे, यह आपको क्या हो गया है ?'

राधा—'आपको क्या ?'

३

श्यामा का जी कालेज में नहीं लगा । वह घर चली आई यहाँ भी तबीयत घबराई, सिनेमा चली गयी । मध्यान्तर तक बैठना कठिन हो गया, वहां से उठी तो उसके कदम पार्क की ओर उठने लगे । वह एक कोने में बैठ गयी । इसके हृदय में इस समय हलचल मची हुई थी—परवेज औरतों से खिंचता है सम्भवतः इसलिए कि इसे अपनी सुन्दरता का अभिमान है—मैं समझती थी इसके पहलू में दिल नहीं पत्थर का टुकड़ा है, यह अन्धा है, बहरा है । यह हृदय की धड़कनें नहीं सुनता, मुहब्बत, इश्क की बातों से अनजान है—परन्तु आज भेद खुल ही गया आखिर राधा पर राल टपक ही पड़ी इसकी । उसने तीर चलाया और प्रो० साहब घायल हो गये । उसने प्रेम का जाल फेंका और यह हजरत साहिब जो अपने आपको बहुत चालाक समझते थे फंस ही गये । कैसी लगावट की बातें कर रहे थे यह दोनों । राधा तो पुष्प की भांति खिली जा रही थी । आँखों में नशा-सा छाया था । बात पीछे करती थी,

अधर पहले मुस्कराने लगते थे। और यह बहरा कितने मजे से इसकी बातों से मजा ले रहा था। अन्धा किस लगन से इसे निहार रहा था। यह पथरीला व्यक्ति किस चाव से इसकी ओर देख रहा था।

"पुरुषों का तो कोई विश्वास नहीं, न इनके प्रेम का भरोसा किया जा सकता है और न इनकी घृणा का, बड़े चालाक होते हैं यह लोग, बनना तो इन्हें खूब आता है। क्या कोई वेश्या इनके नखरों का मुकाबला कर सकेगी, वहां तो यह हाल था कि कोई औरत नजर नहीं चढ़ती थी और अब ऐसा भूत सवार हुआ कि लट्टू हो गये राधा पर किसी और पर भी नहीं।'

लेकिन मुझे क्या प्रतिदिन लाखों आदमी ऐसा स्वांग रचाया करते हैं। कौन औरत है जो जवानी में ऐसे खेल न खेलती हो। कौन न मर्द है जो जवान होने से पहले इस खेल का आदी न बन चुका हो। फिर संसार में मूर्खों की कमी क्या है कोई औरत है जो सुन्दर मर्दों पर जान देती है। कोई औरत है जो साधारण से मर्द को अपने दिल में जगह देती है। कोई मर्द है जो हुस्न की मल्लिका की पूजा करता है। कोई है जो अदाओं और फैशन पर मरा हुआ है। यह सब मूर्ख हैं। प्रेम कुछ नहीं यह सब वासना है। जब वासना का देवता यौवन का चोला पहन कर अंगड़ाई लेता है तो इस का नाम प्रेम रख देते हैं यह पहरावा वृद्ध भी पहनते हैं और जवान भी।

"अगर परवेज और राधा एक दूसरे को चाहने लगे हैं तो चाहे मैं क्यों गम करूं, लेकिन यह गम दिल के टुकड़े-टुकड़े कर रहा है – क्यों? किसलिये? क्या मैं परवेज को चाहती हूं – मैंने आज तक किसी को नहीं चाहा मैं तो ·· हमेशा ···· खुश रहने की आदी हूं—और इसी पर चलाती हूं। यह कुछ दिनों का जीवन, समाज, धर्म, जाति के बन्धनों में क्यों व्यतीत किया जाये? क्यों न हम उसके साथ रहें जो हमें अच्छा लगता है। फिर क्यों न हम इसे छोड़ दें जिससे हमारा दिल भर चुका है— मैं अगर परवेज की ओर बढ़ी तो पुजारिन बन कर नहीं व्यतीत करने के लिये। इसके दिल की तपन अपने दिल में समाने के

लिये, लेकिन वह झिझका, रुका और दूसरे मार्ग पर हो लिया। मैंने भी इसका पीछा नहीं किया। शीघ्र अपना मार्ग परिवर्तित कर लिया। सुन्दरता परवेज पर ही समाप्त नहीं हो गई है। संसार में वह पहली बार ही अकेला युवक नहीं हो गया है। क्यों इसको बुत्त बना कर पूजूँ? क्यों न दूसरे बुत्तों पर हाथ बढ़ाऊँ, और जो लग जाये हाथ उसे अपने में छिपा लूँ—मैंने यही कहा—लेकिन दिल बेताब क्यों है? दिल में जलन क्यों है? तबीयत बुझी-बुझी-सी क्यों है? विचार बन्द-बन्द से क्यों हैं? प्रसन्नता रुकी-रुकी-सी क्यों है?—और फिर जब यह पत्थर का बुत्त आंखों के सामने आ जाता है तो दिल धड़कने क्यों लगता है? आँखें चमकने क्यों लगती हैं? जबान चुप क्यों हो जाती है? नयी-नयी आवाजें पैदा क्यों होने लगती हैं? नई-नई इच्छायें क्यों मचलने लगती हैं? नये-नये विचार उमड़ने क्यों लगते हैं?

और आज तो हद ही हो गई। घुल-घुलकर बातें करते देख कर मेरे दिल में हलचल क्यों मच गई? मेरी आंखों में आंसू क्यों आ गये। मेरी तबीयत उदास क्यों हो गई?

मैं लोगों से बातें करती हूं कि परवेज और राधा का हंसता खेलता चित्र आँखों के आगे क्यों आ जाता है? मैं सिनेमा जाती हूं तो फिल्म की तस्वीर के स्थान पर परवेज की बातचीत मेरे कानों में क्यों गूंजने लगती है? मार्ग में चलते-चलते मेरे दिल में हूक-सी क्यों उठती है? राधा का चित्र मेरी आंखों के सम्मुख क्यों नाचने लगता है? क्या मैं राधा से घृणा करने लगी हूं? परवेज मेरा होकर क्यों नहीं रहता? यह बात क्या है? क्या अपने आप ही एक आदमी दिल में समा जाता है।

हाँ मेरे दिल में कोई समाया जा रहा है? और वह परवेज के अतिरिक्त कोई और नहीं है मैं अपने मन के द्वार जितने बन्द करती हूं वह इतनी ही शक्ति से इन्हें मुक्के मार-मार कर तोड़े जा रहा है, मैं इसे जैसे-जैसे धक्का देकर अपने दिल की चौखट से धकेलती हूं वैसे ही यह अपनी सबल भुजाओं के बल पर, मेरे हाथों को मरोड़ कर मेरे मन में

समया जा रहा है—कैसा अन्धेर है, यह मुझ से इतना दूर है, मेरे हृदय के इतने समीप । क्या ऐसा भी होता है ? क्या ऐसा भी हो सकता है—इस संसार में सब कुछ होता है । कैसी अनहोनी बातें संसार में फैली हुई हैं – कहते हैं दिल को दिल से राह होती है—प्रसिद्ध है प्रेम में दोनों ओर बराबर आग होती है । परन्तु फिर क्या ? मैं परवेज के प्रेम में मजनूं होती जा रही हूं और यह मेरी बात भी नहीं पूछता—दूसरों से रंग-रलियां मना रहा है । मेरी ओर नजर उठा कर भी नहीं देखता, दूसरों की आँख का तारा बना हुआ है । इन्हें सम्भवतः अपनी आँखों में और दिल में रख लेना चाहता है । अगर प्रेम में प्रभाव होता है, तो क्यों नहीं आ जाता परवेज यहाँ पर । और मेरे कदमों में सर रख कर डबडबाई आँखों और कांपती आवाज के साथ क्यों नहीं प्रेम कर लेता । मेरा हृदय इतना दयावान है कि इसे क्षमा कर देने और क्षमा कर गले लगा लेने को तैयार है । पिछली बातें क्षमा कर देने को तैयार है—परन्तु इसका हृदय तंग है– इसमें मेरा प्रेम नहीं समा सकता । इसमें मेरा विचार नहीं फंस सकता । इसमें मेरी आवाजें और तमन्नायें नहीं घर बना सकतीं, इसमें मेरी उजड़ी हुई दुनिया नहीं बस सकती । वह राधा का है और राधा इसकी है । मैं इन दोनों के मार्ग का काँटा हूं । काँटे को कोई नहीं चाहता । कोई भी इसे हृदय के समीप नहीं आने देता । कोई भी इसे हृदय रक्त से नहीं सींचता । हृदय रक्त से केवल प्रेम का पौधा सींचा जा सकता है और वह पौदा परवेज ने लगाया है, जिसे परवेज अपने हृदय रक्त से सींच रहा है—यह सोचते-सोचते श्यामा की आँखों से आंसुओं की बून्दें गिरने लगीं । फिर इसने साड़ी के छोर से आंसू पोंछे, झुकी हुई आँखें ऊपर उठायीं, तो देखा सूर्य अस्त हो चुका है, सायं का सन्नाटा बढ़ रहा है—वह उठी और चल दी ।

४

खान बहादुर अफजल अली मैम्बर कौंसल आफ स्टेट नारी शिक्षा के बड़े पक्षपाती थे, रूढ़िवादियों पर वह बड़ी बेदर्दी से ताने कसा करते थे। वह अपनी इकलौती बेटी जीनत को बहुत चाहते थे, वह इनके हृदय और मस्तिष्क पर छाई हुई थी। वह अपनी पुत्री को शिक्षा का आभूषण पहनाने के लिये पानी की तरह रुपया बहा रहे थे। वह चाहते थे जिस प्रकार उनकी लड़की सुन्दरता में बेजोड़ है। इसी प्रकार गुण भी उसके आभूषण बन जायें, वह चाहते थे कि जीनत केवल शिक्षा की ओर ही ध्यान देकर अपना नाम कमाये, इस समय वह सिटी कालिज में बी० ए० में पढ़ रही थी।

खान बहादुर ने अधिक से अधिक पैसा देकर भी परवेज को इस बात पर राजी करना चाहा कि व जीनत को ट्यूशन पढ़ा दें, लेकिन वह बराबर इन्कार करता रहा। आखिर जब खान बहादुर ने बहुत ही मजबूर किया तो वह राजी हो गया। लेकिन शर्त यह थी कि यह सेवा बिना पैसे के की जायेगी। प्रदिदिन आठ बजे रात को खान बहादुर की मोटर आ जाती थी और नौ बजे परवेज को घर वापिस छोड़ आती थी।

आज पहले-पहल परवेज जीनत के यहाँ आ रहा था, खान बहादुर भी बहुत खुश थे, और जीनत की तो बांछें खिली जा रही थीं; ऐसा प्रतीत होता था, जैसे इसे कोई खजाना मिल गया हो।

कालिज से वापिस आकर जीनत टैनिस खेलने चली जाती थी। वहाँ से वापिस आकर कुछ देर रेडियो सुना। उपन्यास और कहानी संग्रह देखे। कभी सिनेमा चली गई, नहीं तो पुस्तकें देखते-देखते सो गई। लेकिन आज वह टैनिस भी खेलने नहीं गई। इसका पढ़ने का कमरा सदैव दर्पण की भान्ति साफ रहता था, लेकिन आज इसे वही कमरा गन्दा नजर आ रहा था। टैनिस तो टैनिस रेडियो सुनने का समय भी कमरे

की सफाई के हेतु अर्पण हो गया। घर में नौकर थे, नौकरानियाँ थीं छोकरे थे, बारी-बारी सब की सेवा से जीनत ने लाभ उठाया। लेकिन किसी का कार्य भी उसे न भाया। ऊँ हूं—तोबा। यह चित्र कितना टेढ़ा लगा दिया है तू ने नहीम, और यह जामिया हरामजादी है तो जवान, इससे ठीक से झाड़ू तक नहीं दी गई, यह देखो, मूऐ मिर्जा से मैंने कहा था, जरा फर्श अच्छी तरह साफ कर लीजो, वह ज्यों का त्यों पड़ा है, हटो तुम लोग हम स्वयं अपना काम करेंगे। यह कह कर जीनत ने नौकरों को कमरे से निकाल दिया। और स्वयं ही काम में लग गईं। कमरे की सफाई में, काम करते-करते थक गई, लेकिन एक शौक था जो इसे कार्य में लगाये था। थक के चूर-चूर हो गई थी वह, लेकिन मुख पर थकावट का चिन्ह तक नहीं था।

जामिया पहले तो यह रंग देखती रही फिर इसने जोर से नहीम की एक चुटकी ली और धीरे से कहने लगी—'ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई महाराज पधार रहे हों, कौन आ रहा है रे नहीम ?' वह बोला—'मैं क्या जानूं कौन आ रहा है; सुना है आज से कोई प्रोफेसर आकर पढ़ाया करेंगे रोज।' जामिया से न रहा गया और तड़ से बोली—'ऐ, रहने भी दो बड़े आये प्रोफेसर साहिब, यह चाव और लग्न खाली फूली प्रोफेसर साहिब के लिये नहीं हो सकता, मुझे तो दाल में कुछ काला-काला दिखता है।' नहीम जल गया और बोला—'तू तो पगली है अच्छी खासी और नहीं तो क्या, जाने क्यों जल कर भस्म हुई जा रही है। तेरा क्या ? तू क्यों आपसे बाहिर हुई जा रही है री ?'

अब जीनत कमरा सफा कर चुकी थी। कमरा दुल्हिन की भान्ति सज गया, फर्श, कालीन, सोफे, मेज, कुर्सियाँ, दर्पण, पुस्तकों का सैल्फ प्रत्येक वस्तु, इस भान्ति सजी हुई थी जैसे फिल्मी शूटिंग के लिये कोई सैट तैयार किया गया हो, निवृत्त होकर जीनत ने जामिया से कहा—देख तो कितनी मैली हो गई हूं मैं। जरा पानी गर्म कर दे तो नहा लूं।'

नहा धोकर जीनत चौहदवीं के चांद की तरह चमकती और अन्धेरी रात के जुगनू की भान्ति अपनी दमक दिखाती हुई स्नानगृह से बाहिर निकली, इस समय वह काले जारजट की साड़ी बांधे थी, इसे गोरे रंग पर काली साड़ी जची जा रही थी, कमरे में जा कर दर्पण के सामने खड़ी हो अपनी सुन्दरता को देखा, मुस्करायी और कहने लगी—'जा देख ड्राईवर मोटर लेकर उन्हें लेने गया या नहीं ?' न गया हो तो शीघ्र भेज, कह दीजो वह समय के बड़े पाबन्द हैं, और स्वभाव के भी नाजुक हैं – देर सवेर हुई तो मनाना कठिन हो जायेगा, हाँ।'

नहीम आश्चर्य चकित हो जीनत का मुंह देखता, जामिया को घूरता हुआ बाहिर चला गया। वह अभी वापिस नहीं आया था, कि मोटर का हार्न सुनाई दिया, 'आ गये वह।' कहती हुई जीनत शीघ्रता से बाहिर की ओर लपकी, जामिया खड़ी उत्सुकता और बेताबी का यह तमाशा देख रही थी. वह मुस्करायी और गर्दन हिलाती हुई दूसरे कमरे में चली गई, जिसका अर्थ यह था कि हम सब कुछ समझते हैं।

जीनत ने द्वार पर परवेज का स्वागत किया। और अपने कमरे में ला कर उसे बिठाया, कमरा देख कर परवेज ने कहा—'यह कमरा तो स्वर्ग की भान्ति तुम ने सजा रखा है; यहाँ आकर वापिस जाने को जी ही नहीं चाहता।

जीनत—(शर्मा कर) कहाँ सजा पाई अच्छी तरह—समय ही नहीं मिला।

परवेज—(हंसकर) अरे अभी कुछ बाकी रह गया है ? इससे बढ़ कर और क्या होगा !

जीनत—सरोजिनी तो कहती है तुम्हें सजावट आती ही नहीं।

परवेज—'वह तो पगली है, मैं तो भाई ईमान ले आया इस सजावट पर।'

जीनत का मुखरा अपनी प्रशंसा सुन लज्जा से सुर्ख हो गया। वह कुछ कहना चाहती थी, लेकिन न जाने वह क्यों रुक गइ, परवेज ने

कहा—'मैंने खान बहादुर साहिब से कहा था वह मिस श्यामा को ट्यूशन पर राजी कर लें। अंग्रेजी साहित्य मैंने पढ़ा अवश्य है, लेकिन मेरा वास्तविक विषय तो दर्शनशास्त्र ही है।'

ग्रीवा झुका कर, आँखें नीची करके, अपने दोनों हाथों को जांघों पर रख कर, दोनों पंजों को आपस में मिला जीनत ने उत्तर दिया—'ऊँ-हूं, वह हमें अच्छी नहीं लगती जरा भी।'

'पढ़ाने वाले का अच्छा लगने से क्या सम्बन्ध? क्या मैं अच्छा लगता हूं तुम्हें?'

वैसे ही ग्रीवा झुकाये जीनत ने उत्तर दिया—'जी बहुत अधिक।'

परवेज को इस उत्तर की आशा नहीं थी। वह यह सुन सटपटा गया और विस्मय से जीनत को देखने लगा, इसकी समझ में नहीं आ रहा था, यह क्या बात जीनत कह गई?' इसका क्या अर्थ हुआ? और अब वह इसका उत्तर क्या दे? कुछ देर तक वह आश्चर्य से जीनत के मुख को देखता रहा। जीनत ने भी अनुभव कर लिया इसने वैसे ही बैठे-बैठे गर्दन को तनिक सा उठाया। परवेज की ओर देखा और मुस्करा कर पुनः गर्दन झुका ली। उसके दान्त मोती की भान्ति चमके और मुख पर लज्जा के चिन्ह बिखर गये। अब तक तो परवेज, दार्शनिक होने के कारण जीनत की एक साधारण सी बात 'अच्छा लगने' का अभिप्राय समझने का प्रयत्न कर रहा था और निरन्तर असफल हो रहा था—और अब जीनत की शर्मीली मुस्कराहट ने उसे और आश्चर्य चकित कर दिया। इसकी समस्त दार्शनिकता धरी की धरी रह गई। एक अल्हड़ लड़की ने इसका अभिमान खाक में मिला दिया।

दोनों आमने-सामने मौन खड़े थे। जीनत अपनी उंगलियों से खेल रही थी, उसकी ग्रीवा झुकी हुई थी। परवेज की आँखें नाच-सी रही थीं और दिल इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न कर रहा था जो निरन्तर उलझती चली जा रही थी। तभी परवेज ने मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए कहा—

'अच्छा भई, आज ट्यूशन का महूरत हो गया। अब कल से नियमानुसार कार्य आरम्भ होगा, अब हम चले।'

जीनत—'जी नहीं यह नहीं हो सकता।'

परवेज—'क्या नहीं हो सकता?'

जीनत—'आप अभी नहीं जा सकेंगे?'

परवेज—'क्यों—काफी देर हो गई अब तो।'

जीनत—'खाना खा कर जाइयेगा।'

परवेज—'खाना! नहीं मैं खाना नहीं खाऊँगा, यह मेरा समय नहीं है मैं दस बजे के बाद खाता हूं।'

जीनत—(मुंह बना कर) इतनी मेहनत करके हमने आपके लिये स्वयं खाना पकाया और आप खायेंगे भी नहीं। जरा सा चख ही लेते?

परवेज पुनः इन्कार करने वाला था कि उसने देखा जीनत की आँखें आँसुओं के बिन्दू बरसाने पर तुल चुकी हैं, अब तक वह हैरान था, लेकिन अब वह घबड़ा गया। उसने कहा—

'अच्छा भई, तुमने पकाया है, तो चखने से क्या अभिप्राय, भर पेट ही खायेंगे, बिछाओ। दस्तरखान हम भी देखें तुम क्या पका लेती हो?'

यह सुनते ही जीनत की आँखों के आँसू इस प्रकार गायब हो गये जैसे रेगिस्तान की नजर फरेब नदियाँ गुम हो जाती हैं, वह तेजी से मुस्कराती हुई उठी और झपक कर बाहिर निकल गई, थोड़ी देर के बाद जामिया आई, वह दस्तरखान बिछा रही थी और घूर-घूरकर परवेज को देखती जाती थी, फिर नहीम आया और मेज पर बर्तन सजाने लगा। उसकी आंखें भी परवेज के मुख को देख रही थीं।

परवेज अब तीसरी गुत्थी सुलझाने का प्रयत्न कर रहा था। जीनत ने खाने पर बाध्य क्यों किया? स्वयं खाना क्यों पकाया? और खाना पकाने का विशेष प्रसंग क्यों छेड़ा? मेरे इन्कार पर उसकी आँखें क्यों डबडबाईं? खाने का निमन्त्रण दिया, यहाँ तक तो कोई बुराई नहीं,

5501

लेकिन मेरे इन्कार पर आँसू बहाने का क्या अर्थ ? यह क्या मूर्खता है, ज्यों-ज्यों वह तीसरी गुत्थी को सुलझाने का प्रयत्न करता था इसका मस्तिष्क बुरी तरह असफल होता जाता था। अब उसमें एक प्रकार की झुंझलाहट उत्पन्न हो रही थी, अपने ऊपर भी और जीनत के ऊपर भी।

इतने में परवेज ने ध्यान जो दिया, जामिया और नहीम की आँखों को सी० आई० डी की भान्ति अपने ओर देखते पाया। वह पुनः सोच में डूब गया, यह क्या ? यह एक और समस्या मेरे सामने आ खड़ी हुई है, यह दोनों मुझे यूँ घूर क्यों रहे हैं ? मैं लोगों के हां जाता रहता हूं। लोगों मेरे हाँ आते रहते हैं, न उनके नौकर मुझे इस बुरी तरह घूरते हैं और न मेरे नौकर उन्हें उत्सुकता से निहारते हैं, आखिर बात क्या है ? नहीम उसे देखने में इतना खोया हुआ था कि रूमाल से चीनी की प्लेट साफ-साफ करते-करते फर्श पर गिर टुकड़े-टुकड़े हो गई, तब वह चौंका। यह चौथी समस्या थी जिसने परवेज को घबड़ा-सा दिया था।

इतने में जीनत आई, खाना परोसा गया, खाना वास्तव में बड़ा स्वादिष्ट था। कुछ देर के लिये वह मन में उठी सभी समस्यायें भूल गया। खाना खाकर वापिस जा रहा था कि सरोजिनी और मुमताज आतीं दिखाई दीं। सरोजिनी के हाथों में पुस्तकें थीं, इसने दोनों हाथों से पुस्तकों को पकड़ कर माथे पर रख लिया। परवेज सलाम का उत्तर संकेत से देकर मुस्कराता हुआ बाहिर चला गया।

परवेज को देखकर सरोजनी का चेहरा सफेद पड़ गया था। सरोजनी को देखकर जीनत का रंग उड़ गया। सम्भवतः दोनों एक दूसरे के दिल का चोर पकड़ रही थीं। मुमताज ने वहीं खड़े-खड़े कड़क कर पूछा—

'मैं पूछती हूं वह अन्धा यहाँ क्यों आया था ?—बताओ।'

जीनत – 'मुझे पढ़ाने—क्या तुम समझी थीं कि चोरी करने आया है ? मुमताज गम्भीर हो गई। उसने कहा—'क्या सच ही यह अवकाश खोर पढ़ाने आया था ?

जीनत—'हाँ और क्या—कह तो रही हूं ?'

मुमताज—'राजी हो गया यह ? वह हठधर्मी क्या हुई ?'

जीनत—स्वयं देख चुकी हो, बाकी रही हठ धर्मी वह तुम जानो।

मुमताज—'फीस क्या लेगा ?'

जीनत—'कुछ नहीं—फीस का नाम भी नहीं सुनना चाहता।'

मुमताज—'यह कुर्बानी—(गर्दन हिला कर) न बाबा, हम नहीं मानते मामला कुछ और है। क्यों सरोजिनी ?'

सरोजिनी ध्यान पूर्वक इन दोनों की बातें सुन रही थी। उसने मुमताज को उत्तर दिया—'मैं नहीं जानती भई।'

'जल गई' मुमताज ने चुटकी ली।

'ऐं-वाह, मैं क्यों जलूँगी, वे मेरे लगते कौन हैं ?'

'यह अपने दिल से पूछ कि कौन लगते हैं तेरे ?'

'तू ही कह दे।'

'प्रियतम' दोनों हाथों में सरोजिनी के कन्धे पकड़ आँखों में आँखें मिला मुमताज ने कहा। यह कह कर वह जोर से हँसी पर जीनत और सरोजिनी दोनों में से किसी ने उसका साथ न दिया।

५

सरोजिनी महिला कान्फ्रेन्स में भाग लेने गई थी, वहाँ मुमताज मिल गई और वह इसे अपने साथ जीनत के यहां पकड़ लाई। यहां आकर उसने आशा के विपरीत परवेज को देखा। फिर जीनत से ट्यूशन का हाल मालूम हुआ तो इसके दिल पर जैसे बिजली-सी गिर पड़ी। कठिनता से वह थोड़ी देर वहाँ बैठी फिर अपने घर चली गई। घर आई तो वह बुझी-बुझी-सी थी। उससे न खाना खाया गया, न पुस्तकों में मन

लगा। चुपचाप अपने कमरे में गई और मुंह ढांप कर पड़ रही।

वह परवेज को दिल ही दिल में पूजती थी। इसकी आँखों में परवेज ने प्रेम अनुभव न किया हो। यह हो सकता है—परन्तु कक्षा की कई लड़कियाँ भाँप चुकी थी। जीनत भी इससे परिचित थी। वह सोच रही थी मेरी सखी होकर जीनत ने मेरे प्रेम पर कैसा डाका डाला ? क्या संसार के समस्त पुरुष मर गये थे ? जीनत को परवेज के अतिरिक्त कोई मर्द नहीं भाया था।

और हाँ परवेज को तो देखो—वैसे तो हजरत बड़े साधु बने रहते हैं। कक्षा में आयेंगे तो क्या मजाल किसी लड़की से आँख भी मिला लें। किसी को नजर भर देख लें। किसी से प्रेम पूर्वक बात कर लें। वैसे बड़े मासूम हैं—जैसे कुछ जानते ही नहीं। इसीलिये तो मुमताज ने जल कर जनाब को अंधा प्रसिद्ध कर दिया है। लेकिन जीनत के यहाँ किस मजे पर ट्यूशन पर राजी हो गये और वह भी मुफ्त में। फीस भी नहीं लेंगे। प्रेम में व्यापार कहाँ चलता है। फीस तो उस समय ली जाती, जब पढ़ाने का उद्देश्य होता। लेकिन प्रेमोपदेश देना हो तो फीस क्यों ली जाये ? तोबा है ! यह मर्द भी न जाने किस मिट्टी के बने होते हैं। तनिक भी तो इनका विश्वास नहीं किया जा सकता। अगर यह होता कि परवेज वैसे ही रहता जैसे नजर आता है तो मुझे तनिक भी बुरा न लगता। परन्तु जो बगुला भक्त बनते हैं वह मुझे एक आंख नहीं भाते। लोगों के दिखाने से औरत से बेजार, बेपरवाह और जीनत के घर पर कुर्बानी करने वाले आशिक, यह है चरित्र इस व्यक्ति का।

मैंने सोचा था, इस पुरुष के कदमों पर अपना दिल रख दूंगी और इसे देख-देखकर जीवित रहूंगी, इसकी प्रेम भरी लाठी पर संसार को त्याग दूँगी और इसी की हो रहूंगी। मैंने इसे देखा और मेरा दिल इसका हो गया। इसका मनमोहक बातें सुनीं फिर किसी की बातों में मुझे आनन्द न आया — मैंने इसकी आकृति देखी और इसकी आकृति मेरी आँखों में उतर गई—मैं तो इस तरह मूर्ति बना कर पूजती रही पत्थर को, लेकिन मेरे

लिए यह पत्थर और जीनत के लिए यह देव, प्रतीत हो गया हजरत कितने पानी में है दिल भी दिया तो जीनत को, ऊँ, जैसे वह बड़ी सुन्दर है ? आधी रात व्यतीत हो गई और सरोजिनी इसी विचार में करवटें बदलती रही, नींद का कहीं कोसों पता न था ।

जीनत आज बड़ी प्रसन्न थी, परवेज के जाने बाद वह रेडियो के सामने बैठ गई, इस समय 'दाग' की कोई गजल गाई जा रही थी। 'दाग' की प्रेम भरी नजमें इसने कई बार पढ़ीं और सुनी थीं, उसने आनन्द प्राप्त भी किया था लेकिन आज रंग ही कुछ और था। आज संसार बदला हुआ नजर आ रहा था—आज से पहले इसने प्रेम के बारे में क्यों नहीं सोचा कि प्रेम में इतना आनन्द होता है और आज प्रेम की हर फाँस क्यों बड़ी सुगमता से हृदय में उतरी चली आ रही है, पुष्प बन कर !

नहीम को वह सदैव डाटा करती थी आज जब जामिया ने शिकायत की कि देखिये सरकार इस मूऐ ने इतनी अच्छी प्लेट तोड़ दी, तो बिना उसे सजा दिये या उसपर नाराज होने के उल्टा जामिया को झिड़क दिया, चल हट तुझे तो हर समय लगाई-बुझाई की पड़ी रहती है, यह भी तो देख वह बेचारा काम कितना करता है, आदमी ही तो है हो गई हानि तो क्या इसे तोप से उड़ा दूँ । जामिया बेचारी अपना-सा मुँह लेकर रह गई और नहीम उसे आँखों ही आँखों में चिड़ाने लगा, और कर मेरी शिकायत । क्या बिगाड़ लिया तूने मेरा ? इतने में जामिया किसी काम से पुनः कमरे में आ गई, उसे एक हसीन अंगड़ाई लेकर आज्ञा दी, हमारा बिस्तर कर दो, आज हम बहुत थक गये हैं, नींद आ रही है । जमिया ने बिस्तर कर दिया, जीनत उस पर जा लेटी लेकिन नींद का कहीं पता नहीं था, रह-रह कर परवेज याद आ रहा था और दिल धड़कने लगता था । एक विचित्र-सा आनन्द उसें अनुभव हो रहा था ।

लोग कहते हैं कि परवेज के सीने में दिल नहीं पत्थर है, इसकी आँखें

नहीं वह अन्धा है, मैं तो कहती हूं कि कहने वाले स्वयं अन्धे और पत्थर हैं, अगर इसके सीने में दिल की जगह पत्थर है तो वह यहाँ क्यों आया। पिताजी उसे तीनसौ रुपये ट्यूशन के दे रहे थे, क्यों छोड़ दी इतनी बड़ी पूँजी ? हजरत खाने से इन्कार कर रहे थे, मगर जब मैंने कहा—हमने पकाया है यह खाना अपने हाथ से तो कैसे शीघ्र तैयार हो गये ? यह बातें क्या वह कर सकता है, जिसके सीने में दिल के स्थान पर पत्थर हो—कभी नहीं यह बातें कर सकता। इसके सीने में कोमल और भावुक हृदय है, जो दूसरे के दिल की धड़कन सुनता है। केवल सुनता ही नहीं, इस धड़कन का अर्थ भी समझता है।

और फिर भई यह तो अपनी-अपनी तबीयत है, रीझे हुये हैं, मुमताज जहाँ पर प्रो० अनवर। यही तो आशा वह परवेज से भी कर रही थी। जिसने फूटी आँखों से भी नहीं देखा था, बस फिर क्या था। जल कर कबाब ही तो हो गई, परवेज तो अन्धा है, क्या खूब जो इन्हें न देखे वह अन्धा ? तुम्हारी आदत है ताक-झांक की, तुम करो ताक-झांक यह भी अच्छी जबरदस्ती है, जिसे अपनी नजर पर काबू हो वह अन्धा।

और हाँ, सरोजनी भी आज कैसे जल रही है, यह तो आती थी और बुलबुल की भाँति चहका करती थी, मैं धकेल कर बाहिर निकालती थी कि जाओ भई हमें पढ़ने दो मगर वह ढीठ साफ इन्कार कर देती थी जाने से, आज परवेज को देखते ही ऐसी रूठी कि न मुँह से बोले न सर से खेले। प्रतीत होता था किसी ने अधर सी दिये हैं, जरा सी देरा बैठी और जाने के लिए खड़ी हो गई। मुमताज ने रोका, तो उसे उत्तर भी नहीं दिया और चल खड़ी हुई। मैंने भी नहीं रोका, जब वह इतना जल रही थी और मुझे देखकर भस्म हुई जा रही थी तो मैं क्यों पूछती उसकी बात ? जाती है तो जाओ भई, कुछ जोर थोड़ ही है कि कोई रोक ले तुम्हें जबरदस्ती और। फिर हम तो मित्रता और प्रेम में जबरदस्ती को नहीं मानते।

पिताजी भी परवेज से मिलकर बहुत प्रसन्न हुए थे, वे उस दिन बड़ी देर तक माताजी से उनकी तारीफ करते और गुण गाते रहे और कहते थे, अभी तो बिल्कुल ही नौजवान है विवाह भी नहीं हुआ है उसका— मैं समझ गई कि पिताजी ने यह बात क्यों कही आखिर इन्हें क्या पड़ी थी कि यह रट लगाते फिरें किसका किस के साथ विवाह हुआ है और कौन अभी तक कुँवारा है ? अम्माँ भी कितने शौक से सुन रही थी।

जीनत भी जाग रही थी, और सरोजिनी भी, एक के हृदय से आहों के शोले उठ रहे थे और दूसरे का हृदय प्रेम का घर बना हुआ था।

६

यूनियन की ओर से प्रायः कालिज में सभायें हुआ करती थीं, विद्यार्थी और अध्यापक बढ़-चढ़ कर इन सभाओं में भाग लिया करते थे। वर्ष समाप्त हो रहा था। यह यूनियन की अन्तिम सभा थी इसलिए संख्या बहुत अधिक थी। नगर में रहने वाले कुछ पुराने विद्यार्थी भी उपस्तिथ थे।

नवाबजादी रफहत्त जहाँ भी डाईक के एकदम सामने कुर्सी पर बैठी थीं। सरोजिनी ने बहस आरम्भ की—इसने एक लम्बे चौड़े भाषण में नारियों की अच्छी खासी वकालत करदी। बार-बार इसके भाषण पर तालियाँ बजायी जाती थी, इसने कहा, हमारे देश में अब भी ऐसे महानुभाव उपस्तिथ हैं जो नारी को एक खिलौना समझते हैं, इन्होंने नारी को वासना पूर्ति का साधन समझ रखा है। वह इसे पराधीन बनाये रखते हैं और सांसारिक कार्यों में भाग नहीं लेने देते, पर भारत की नारी अब पूरी तरह जाग उठी है, वह जीवित रहना चाहती है, वह जीवित रहेगी—नीच बन कर नहीं, अपितु देवी बन कर।'

मिस श्यामा भाषण देने खड़ी हुई तो बड़ी देर तक हाल तालियों से

गूँजता रहा। उन्होंने कहा–'साहित्यकारों और कवियों ने नारी को पुष्प बताया है ताकि रात को इसे गले का हार बनाये और प्रातः कुचल कर फेंक दे, नेताओं और महापुरुषों ने इसे पवित्रता की देवी कहा है, ताकि वह एक विशेष बन्दी की भाँति घर के कारावास में बन्द रखी जा सके, धर्म के ठेकेदारों ने इसे मां और बहन के रूप में देखा है ताकि वह बंधनों में जकड़ी रहे और लज्जा की आड़ बना कर इसके गले में गुलामी की रस्सी बाँधी जा सके। पर मैं कहती हूं, नारी पुष्प है न देवी, न केवल माँ और बहिन। वह इसी भाँति इंसान है जैसे पुरुष। और जीवन में भाग लेने का इसे इतना ही अधिकार है जितना कि पुरुषों को। वह अब पराधीन नहीं रह सकती। पुरुष को जन्म देने वाली वह है। फिर वह पुरुषों से पीछे क्यों रहे, उनकी गुलाम क्यों बने, उनके अत्याचार क्यों सहे ?''

तालियों की गूँज से प्रो० आनन्द स्टेज पर आये। इन्होंने कहा–'मैं तो केवल इतना जानता हूं कि नारी न हुई तो दुनियाँ न हुई। जब वह इतने उच्च पद पर आसीन है तो इससे बढ़कर कृतघ्नता और स्वार्थ क्या होगा कि इसे लौंडी बनाकर रखा जाय। वह कानून, वह समाज और वह धर्म घृणा के योग्य है जो नारीको बेबस और मजबूर बनाकर रखना चाहता है। अब समय आ गया है कि नारी मजबूरी की जंजीरों को तोड़ फेंके।'

अब परवेज़ की बारी थी। वह स्टेज पर आया, इसका भी तालियों से स्वागत किया गया, इसने कहा—''मैं लम्बा चौड़ा भाषण नहीं दूँगा। केवल एक बात कहूंगा, नारी किसी युग में भी मजबूर नहीं रही। वह स्वयं हीन भावना से भरी हुई है, नारी की मजबूरी का रोना रोया जा रहा है, किन्तु इतिहास के प्रत्येक युग में नारी ने जो चाहा वह किया। वह राज सिंहासन पर भी बैठ चुकी है। राजाओं के दिलों पर भी राज्य कर चुकी है, सेनापतियों और सैनिकों को भी गुलाम बना चुकी है। फिर अपनी हकूमत से उसने लाभ क्यों नहीं उठाया, और उसने नारी जाति को वह स्वतन्त्रता क्यों नहीं दी, जिसे वह अपना अधिकार समझती थी। जिस प्रकार नारी को वेश्या बनने से संसार की कोई शक्ति नहीं

रोक सकी है, उसी प्रकार यदि वह सैनिक बनती, मधुर गान न गाकर तलवार की झंकार सुनाती, और आकर्षक नृत्य के स्थान पर युद्ध-भूमि में पैंतरे बदल-बदल कर सूरमाओं और वीरों के गले काटती तो कौन उसे रोक सकता था।

" जिस भाँति प्रत्येक स्त्री घर में झाड़ू दे सकती है, बर्तन साफ करने की नौकरी कर सकती है, अपने और दूसरे के बच्चों को दूध पिला सकती है, खाना पका सकती है, कपड़े सी सकती है इसी प्रकार यदि वह चाहती तो सर पर बोझा लाद सकती थी, स्टेशन कुली बन सकती थी, जहाज की खलासी और गोदी की मजदूर भी बन सकती थी, वह क्यों नहीं बनी ?

" दुनियाँ में स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक ही होगीं फिर इस बहु संख्या के बावजूद वह क्यों पराधीन है, क्यों बेबसी और विवशता का जीवन बिताती रही, क्या दुनियाँ के पुरुषों में इतना साहस था कि वह सारी स्त्रियों की हत्या कर देते। निर्दयी पुरुष का हाथ यदि उठ सकता है तो अधिक-से-अधिक अपनी पत्नी पर या पुत्र पर, लेकिन संसार में पत्नी और पुत्र से कहीं अधिक संख्या माताओं और बहनों की है। प्रत्येक पत्नी न जाने कितनों की माँ और बहन है। इस प्रकार प्रत्येक बेटी पत्नी बनने के बाद माँ की ममता और बहन की उच्चता प्राप्त कर लेती है। फिर इस ममता और उच्चता से इसने लाभ क्यों नहीं उठाया ?

" पुरुष, पुरुष से उतना नहीं जलता, जितनी स्त्री, स्त्री से जलती है। भाई भाई का सम्मान करेगा, परन्तु दोनों की बीवियाँ आपस में झगड़ेंगी, पति पत्नी से घर के किसी पुरुष की शिकायत नहीं करेगा लेकिन पत्नी घर की औरत की शिकायत करते-करते इनका नाक में दम कर देगी। ससुर बहु से स्नेह का व्यवहार करता है, देवर भाभी का सम्मान करता है परन्तु सास बहु से जलती क्यों है ? बहु ननद के खून की प्यासी क्यों होती है ? क्या यह सब हीन भावनायें नहीं हैं ?

" आपने ट्राम, बस या रेल यात्रा में प्रायः देखा होगा कि मोटी ताजी और सुडौल स्त्री बहुत से पुरुष यात्रियों की भाँति सीट न मिलने के कारण

खड़ी है। किसी बैठे हुए यात्री ने अपना स्थान इसके लिए खालीकर स्वयं खड़ा हो गया। वह इस प्रकार क्यों अधिकार करे जैसे वह इसकी अधिकारी थी जो इसे मिल गया। आखिर यह क्यों ? क्यों नहीं वह दूसरे पुरुषों की भाँति खड़े-खड़े यात्रा करे ?

नारी का सबसे बड़ा शास्त्र रोना क्यों है ? इसी आँखों में शीघ्र आँसू क्यों आ जाते हैं ? क्या इससे बढ़ कर बेबसी और निर्बलता का कोई और दर्जा हो सकता है ? नारी को रोने पर विवश कोई नहीं कर करता, लेकिन बाप की झिड़क, माँ की डाँट, भाई का दुर्व्यवहार, पति की कठोरता, ननद या सास के ताने वह रो-रोकर क्यों सहती है—और आप मानिये, यह कमजोरी आपकी है। समाज में बड़े अत्याचार जहाँ नारियों के लिए हैं वहाँ पुरुषों के लिए भी हैं, यह एक तलवार है जिसकी तेजी से यह स्त्रियों पर वार कर जख्मी कर देती है इसी प्रकार वह पुरुषों के सर पर भी बिजली बन कर गिरती है, फिर क्या बात है कि पुरुष समाज के अत्याचारों का सामना भीख माँग कर, नौकरी करके, मजदूरी को अपना धंधा बना कर, भूखा रह कर भी कर लेता है, लेकिन एक खास औरत यदि वृद्धा है तो अधिकतर दलाल बन कर और यदि जवान है तो शरीर बेचकर समाज से क्यों प्रतिशोध लेती है ? क्या वह इस कार्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं कर सकती ? एक स्त्री यदि पुरुष से संबंध रखना चाहती है तो मुझे इस पर कोई ऐतराज नहीं है जिस प्रकार पुरुष को आवारगी का अधिकार है। इसी प्रकार नारी भी आवरागी करने का अधिकार प्राप्त कर सकती है। लेकिन पुरुष चरित्रहीन स्त्रियों के हाथ शायद ही बिकता है औरतें चरित्रहीन व्यक्तियों के हाथ अधिकतर क्यों बिक जाती हैं ?

प्रथम तो मैं यह मानता नहीं कि नारी को शरीर बेचने पर जबरदस्ती मजबूर किया जा सकता है। तो एक आध बार और फिर यह विवशता मनमर्जी का व्यापार क्यों बन जाती है ? नाचने वाली नारियों और

वेश्याओं का इतिहास ;अपहरण, व्यभिचार और विवशता से आरम्भ होता है। लेकिन समाप्त होता है एक निपुण शिकारी और एक व्यापारी शिकारी पर ! यह क्यों ? क्या वह स्त्री जिसका बहला-फुसला कर अपहरण किया जाता है, या जिसकी इज्जत जबरदस्ती लूटी जाती है, कभी भी पुलिस तक नहीं पहुंच सकती ? कभी भी इसे कोई जीवन साथी नहीं मिलता ? बहुत कम नारियाँ ऐसी हुई हैं जो जीवन साथी की खोज करती हैं। अधिकतर ऐसी होती हैं जो अपनी प्राथमिक विवशता को स्वयं ही व्यापार बना लेती हैं। जीवन साथी की चिन्ता नहीं करतीं। पुलिस का नाम भी नहीं सुनना चाहतीं। शरीर का ही सौदा करना चाहती हैं, और इसी व्यापार की उन्नति में लगी रहती हैं। इसे आप क्या कहेंगे ? मैं तो इसे हीनता ही कहूंगा। और जब तक यह हीन भावना दूर न हो जाये तब तक नारी न उन्नति कर सकती है और न स्वतन्त्र हो सकती है। लेकिन सत्यता यही है कि वह स्वयं बन्धनों को पसन्द करती है। वह सदैव बन्दी ही रहना चाहती है। वह स्वयं सलाखों को मनोरंजन का पर्दा बना लेती है। यह कार्य पुरुषों का नहीं है। यह स्त्रियों का कार्य है कि वह आगे बढ़ें और इस निर्बलता से अपने नारी समाज को स्वतन्त्र करायें।"

परवेज का भाषण समाप्त हुआ। जोश, और बेताबी के साथ नवाबजादी रफअतजहाँ ने ताली बजाने के लिये हाथ उठाये। लेकिन उन्होंने देखा, वातावरण पर सन्नाटा छाया है, सब मौन हैं। कइयों के चेहरों पर क्रोध की रेखायें विराजमान हैं। कोई भी परवेज के भाषणका स्वागत करने का इच्छुक नहीं है। फिर भी वह चैन से न बैठ सकी। उसने ताली बजा ही दी। वातावरण पर साधारण सी हलचल हुई पर शीघ्र ही सन्नाटा छा गया।

जीनत, सरोजिनी और मुमताज के साथ ताली बजाना चाहती थी; इसने मुमताज को हाथ उठाकर और सरोजिनी को संकेतों ही संकेतों में उकसाया। लेकिन कोई तैयार न हुआ। इसी खींचातानी में समय गुजर

गया। वह प्रशंसा की ताली न बजा सकी। इसे दुःख हुआ कि रफहत इससे बाजी ले गयी।

७

प्रोफेसर वर्मा अभी कुछ दिन हुये विवाह करके देश से लौटे थे। पत्नी को साथ ही ला रहे थे। लेकिन कुछ पारिवारिक मजबूरियाँ ऐसी आयीं कि अकेले ही वापिस आ गये। यहाँ आते ही मित्रों ने दावत का तकाजा शुरू कर दिया। उन्होंने लाख-लाख कहा, अरे भई, पत्नी को तो मेरे पास आने दो लेकिन मित्रों के सामने एक न चली। आखिर दावत करनी ही पड़ी। कालेज के समस्त प्रोफेसरों ने उसके घर धावा बोल दिया। प्रो० आनन्द, प्रिंसिपल खन्ना, मिस राधा, मिस श्यामा, प्रो० बैनर्जी, परवेज और बहुत से लोग एकत्रित थे। वर्माजी आज बहुत खुश थे और बुलबुल की भाँति चहक रहे थे। वर्मा ने परवेज से कहा—'यार अगर मानों तो एक बात कहें।'

परवेज—'कह डालो। क्या कहते हो?' मानने न मानने का फैसला बाद में होगा।

वर्मा—'नही भई यूं नहीं, मान लेने का वायदा करो तो कहेंगे।'

परवेज—'हां-हां मान लूंगा। कहो तो, नजर आता है कोई अच्छी ही बात कहोगे।'

वर्मा—'शादी कर डालो तुम भी।'

परवेज—'बस, यही इतनी सी बात।'

वर्मा—'हां बस, यही इतनी सी बात, बोलो है मंजूर?'

परवेज—'शादी तो अवश्य करूंगा, लेकिन कब? यह नही कह सकता।'

वर्मा---वाह भई, इसकी आवश्यकता नहीं, अब तुम वायदा कर चुके हो।

परवेज---तो मैं वायदा से कब फिर रहा हूं ?

वर्मा---फिर शीघ्रता से कर डालो।

परवेज---आखिर क्यों ? इतनी चिन्ता क्यों है ?

वर्मा---हमने जो कर ली है।

इस पर फरमाईशी कहकहा पड़ा, प्रिंसिपल खन्ना ने कहा---'यह तो वही बात हुई। एक कुबड़ी बुढ़िया से लोगों ने पूछा---तू क्या चाहती है ? वह बोली, मैं चाहती हूं कि मेरी तरह सारी दुनिया कुबड़ी हो जाये। आपने शादी क्या कर ली ? सारी दुनिया को इस जंजाल में फाँसने का प्रयत्न कर रहे हो, अच्छी रही भई यह भी।'

परवेज ने कहा---'बात यह है कि मैं विवाह अब तक कर चुका होता, लेकिन मेरी पसन्द की बीवी कहीं नहीं मिलती।'

'आखिर आपकी पसन्द क्या है आखिर हम भी तो सुनें ? बैनर्जी बोले।

'होगी बड़ी ऊँची पसन्द, हूर की परी ढूंढ रहे होंगे हजरत।' वर्मा ने जल कर कहा।

'भई स्वयं भी तो सुन्दर है, फिर अगर सुन्दर पत्नी ढूंढता है तो तुम क्यों जलते हो, बदसूरत कहीं के।' प्रो० आनन्द बोले।

उपस्थित जनों ने फिर एक कहकहा लगाया। परवेज ने कहा---'यही तो मुसीबत है मैं सुन्दर स्त्री नहीं चाहता।'

वर्मा ने हैरान होकर कहा---'क्या कहा ? सुन्दर स्त्री नहीं चाहते तुम।'

'बिल्कुल नहीं।'

'फिर।'

'मैं बदसूरत स्त्री से विवाह करना चाहता हूं। समझ गये आप वर्मा साहिब ?'

वर्मा—(सर खुजा कर) नहीं भाई मैं बिल्कुल नहीं समझा क्या बक रहे हो तुम ?'

'भई, यह बात तो हमारी समझ भी में नहीं आई।' खन्ना ने कहा—'अमां यह सुन्दरता तुम्हारे हृदय पर प्रभाव नहीं करती क्या ?' वर्मा ने पूछा।

'बिल्कुल नहीं ?' परवेज बोला—'यही तो आपत्ति है।'

''किसी के (कनखियों से श्यामा की ओर निहारते हुये) पतले-पतले रसीले होंठ, कोमल शरीर, गोरा रंग, बड़े-बड़े बाल, पुष्प-सा मुखड़ा, दिल को मोह लेने वाली अदायें, सुरीली आवाज, हंस की सी गर्दन, हरिणी की सी आँखें, चीते की सी कमर। यह कुछ तुम्हारे हृदय पर प्रभाव नहीं करता ?' वर्मा ने कहा।

'कह तो रहा हूं, कितनी बार कहूं नहीं ?' परवेज ने कहा।

'परवेज तुम गम्भीरता से बातें कर रहे हो ?'' प्रिंसीपल खन्ना ने पूछा।

'हां।' परवेज ने कहा।

'आश्चर्य है।' बैनर्जी बोले।

'इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? यह तो अपनी पसन्द है। एक वस्तु यदि आपको अच्छी लगती है तो क्या ? यह आवश्यक नहीं कि मैं भी उसे पसन्द करूं ?' परवेज ने उत्तर दिया।

वर्मा—भई, यह एक वस्तु का प्रश्न नहीं है। प्रश्न है, सुन्दरता का, संसार का वह कौन सा हृदय है जो सुन्दरता के सम्मुख सर नहीं झुकाता ? वह कौन सी आँख है। जो सुन्दरता की जगमगाहट का मुकाबला कर सकती है ? वह कौन सा सर है जो सुन्दरता के व्यापार से शून्य हो ? सुन्दरता तो वह मूर्ति है जिसके सम्मुख सब सर झुकाते हैं ? सुन्दरता न हो तो जीवन व्यर्थ है। जीवन की रंगीनी व्यर्थ है, जीवन की बहारें व्यर्थ, जीवन की बहरों की प्रातः व्यर्थ।'

परवेज ने वर्मा की बात काटते हुये कहा—'कब तक व्यर्थ की यह

बक-बक किये जाओगे ? आखिर इस शायरी का सिलसिला समाप्त भी होगा या नहीं ?' वर्मा ने परवेज की ओर देखे बिना, बैनर्जी के कन्धे पर जोर से हाथ मारा और कहा—'सुन रहे हो इस दीवाने की बातें ? यह सुन्दरता का दीवाना नहीं है—'जरा आंखें खोल (श्यामा की ओर देखकर) और सुन्दरता का पान कर, तू खुदा के हुस्न को नहीं मानता, तू काफिर है। हम खुदा पर विश्वास न करने वाले को क्षमा कर सकते हैं। परन्तु हुस्न के न मानने वाले को माफ नहीं कर सकते। हम धर्म विरोधी को क्षमा कर सकते हैं। परन्तु सुन्दरता के विरोधी की आँखें फोड़ देंगे, अन्धा कहीं का।'

प्रो० वर्मा के इस वक्तव्य पर सब को हंसी आ गई। लेकिन प्रो० वर्मा इस समय जोश में थे। और इन्होंने किसी की हंसी की चिन्ता भी न की। कहते रहे अपनी ही। 'अगर हुस्न न होता तो यह दुनिया न होती। प्यार मुहब्बत के अफसाने न होते, जिन्दगी की यह बहार न होती। राजनैतिक नेता हो, या सामाजिक कार्यकर्ता। कौन हुस्न के मन्दिर में सर के बल हाजिर नहीं होता ? बादशाह हो या सेनापति। कौन हुस्न की चौखट पर माथा नहीं झुकाता। मन्दिर का पुजारी हो या खानकाह का सूफी, कौन हुस्न को देख कर देखता नहीं रह जाता ? कालिज हो या यूनिवर्सिटी कहाँ हुस्न की पूजा नहीं होती ? दार्शनिक हो या वैज्ञानिक, किस की निगाहों में हुस्न का जलवा, जवानी और मस्ती की चमक नहीं पैदा करता ? पूंजीपति हो या मजदूर, जमींदार हो या किसान, खान बहादुर हो या रायबहादुर, अगर तुम्हारी तरह पागल है तो हुस्न का पुजारी अवश्य है। फिर तुम्हें क्या हो गया है परवेज ? कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो तुम ? तुम हुस्न को, खूबसूरती को ठुकराते हो—बदसूरती और भौंडेपन को जीवन साथी बनाना चाहते हो ? तुम्हें किसने प्रोफेसर बना दिया ?'

परवेज—'यह तो प्रिंसिपल खन्ना से पूछिये कि मुझे प्रोफेसर किस ने बना दिया ? लेकिन आप जो कह रहे हैं, यह सब बकवास है। मैं

हुस्न का विरोधी नहीं हूं, खूबसूरती का दुश्मन नहीं हूं । हुस्न तो प्रकृति की देन है । खुदा की सबसे बड़ी गौरवमयी उपज, अपितु कला-कृति है ।'

वर्मा—'खुदा का शुक्र है कि आप हुस्न के विरोधी नहीं हैं, लेकिन अब तक जो बकवास की जा रही थी इसका मतलब क्या था ?'

परवेज—'यही तो मैं कहता हूं, तुम मतलब नहीं समझे ।

वर्मा—'तो समझा दीजिए न प्रो० साहिब, थोड़ी देर के लिये अपना मतलब । हमें शिष्य बना लीजिये ।'

परवेज—'तुम्हारे मध्य परखने का अन्तर है ।'

वर्मा—'क्या मतलब ? भई यह दर्शन हमारी समझ में नहीं आया ।'

परवेज—'जिसे तुम हुस्न समझते हो वह मेरे समीप बदसूरती है । जिसे मैं हुस्न समझता हूं उसे तुम बदसूरती कहते हो ।'

वर्मा—'अर्थात् खूबसूरती बदसूरती है, और बदसूरती खूबसूरती है, क्यों ?'

परवेज—'यही समझ लो ।'

वर्मा—'तुम क्या कह रहे हो परवेज ?'

परवेज—'कुछ कम सुनने की शिकायत भी है आपको ? सब कुछ सुन कर बहरे क्यों बने जाते हो ?

वर्मा—'आखिर तुम्हारा मतलब क्या है ?'

परवेज—'वही जो मैंने कहा ।'

वर्मा—'अर्थात् हम, दुनिया के लोग जिसे खूबसूरत समझते हैं तुम उसे बदसूरत समझते हो ?'

परवेज—'हां, भई हां, कहो तो सौगन्ध खा लूँ ।'

वर्मा—'यह हैं तुम्हारे हुस्न की पसन्द ?'

परवेज—'हां, यही है ।'

वर्मा—'यह है आपके हुस्न का दर्शन ?'

परवेज—'हाँ-हाँ-हाँ ।'

वर्मा—'बस, तो सिद्ध हो गया कि तुम पागल हो।'

परवेज—'यह किस तरह ?'

वर्मा—'ऐसी बात कोई दीवाना ही कर सकता है।'

परवेज—'आखिर क्यों ?'

वर्मा—'तुम्हें कौन समझा सकता है क्षमा करो भई।'

परवेज—'अगर समझा नहीं सकते हो, तो समझने का प्रयत्न करो।'

वर्मा—(कानों पर हाथ रखकर) न बाबा, अपनी समझ में तुम्हारी दार्शनिकता नहीं आती।'

परवेज—'देखो वर्मा बहकी-बहकी बातें न करो। जब एक समस्या गम्भीर हो गई हो—तुम अपनी भी कह चुके हो, तो दूसरे की बात भी तुम्हें समझनी चाहिये।'

वर्मा—'यह भी क्या बात हुई कि दिन को रात कहने लगो। और रात को दिन।'

परवेज—'यही शिकायत तो मुझे तुम से है।'

वर्मा—'अर्थात मैं प्रकाश को अन्धकार, और अन्धकार को प्रकाश कहता हूँ।'

परवेज—'हां और क्या ? बिल्कुल यही बात है।'

वर्मा—'वह कैसे जनाब प्रो० साहिब ?'

परवेज—'वास्तविकता यह है कि लोग भावनाओं और झूठे [illegible] में बह कर सत्यता पर विचार नहीं करते।'

वर्मा—'कहे जाओ।'

परवेज—'लेकिन आप ध्यान दें तो मेरी बातें आप [illegible] से समझ जायेंगे।'

वर्मा—'समझ में तो अब भी कुछ नहीं आया [illegible] जारी रखो।'

परवेज—'यह सारी खराबी नासमझी की [illegible] होती है कि

हम अपनी रुचि और विचारों को त्यागना नहीं चाहते। एक आदमी चटपटा खाना खाता है। मांस न हो तो कौर नहीं तोड़ता। परन्तु दूसरा व्यक्ति जो मांस को छूना तक नहीं। फीकी सी ही सब्ज़ी खाता है और बड़े मजे से खाता है।'

वर्मा –'तो इससे क्या सिद्ध हुआ ?'

परवेज—'पहले व्यक्ति को यदि तुम फीकी सी ही सब्जी खिला दो तो दो कौर भी नहीं खा सकेगा वह। दूसरे व्यक्ति को स्वादिष्ठ कोरमा खिलाओ। तो वह कै कर देगा।'

वर्मा—'हां-हां, तो अभिप्राय क्या है ?'

परवेज— यह क्यों होता है ? इसलिये कि दोनों विचार और रुचि की एक दुनिया बसा ली है और उससे बाहिर नहीं निकलना चाहते।'

वर्मा—'तुम सिद्ध क्या करना चाहते हो ?'

परवेज—'वही कह रहा हूँ सुनो। इस समया पर बारीकी से सोचो।'

वर्मा—,कर रहे हैं विचार कहो ?'

परवेज—'कुछ समय के लिये स्वाद देने वाली प्रत्येक वस्तु—हानिकारक सिद्ध होती है और बेमजा और बेस्वाद वस्तु लाभदायक सिद्ध होती है जो लोग चटपटे, चिकने और स्वादिष्ट पदार्थ खाने के आदी हैं वह बीमार पड़ते हैं। बीमारी का सामना नहीं कर पाते और शीघ्र मर जाते हैं। इसके विरुद्ध जो लोग सादा हल्का हल्का फुल्का पदार्थ खाते हैं। उनकी पाचनशक्ति सुदृढ़ रहती है। वह बहुत कम बीमार पड़ते हैं। बीमारी का सामना खूब करते है और प्रायः अधिक आयु पाते हैं।'

वर्मा—'इससे किसे इन्कार है ?'

परवेज—'तुम्हें! मेरा अभिप्राय है तुम जैसे मूर्खों को।'

वर्मा—'बिल्कुल नहीं! झूठे हो तुम!'

परवेज—'फिर वही धांधली।'

वर्मा—'[illegible]! तो व्यर्थ ही मान लूं तुम्हारा दोष ?'

परवेज—'वह हुस्न जिसे तुम हुस्न कहते हो चटपटा होता है। चिकना होता है। स्वादिष्ट होता है। शीघ्र नहीं पचता। पाचनशक्ति कमजोर कर देता है और हैजा तक हो जाता है। उस हुस्न से। और वह बदसूरती जिसे में हुस्न कहता हूँ शीघ्र पचने वाली होती है। इससे न तो पाचनशक्ति कमजोर होती है। और न ही हैजा ही। वह तुम्हारे हुस्न की भाँति शीघ्र बुझने वाले शोला नहीं। टिकाऊ होती है। यह कभी समाप्त नहीं होती। इस पर कभी बुढ़ापा नहीं होता। वह सदैव स्वस्थ और ताजा रहती है। मैं उसका पुजारी हूँ। तुम्हारे हुस्न और खूबसूरती का नहीं। तुम्हारे हुस्न में आनन्द है, पर स्थिर नहीं। मेरे हुस्न में देखने में मजा कम है। पर वह है स्थायी और जीवन देने वाला। समझे?'

वर्मा—'समझा तो नहीं समझने का प्रयत्न कर रहा हूं।'

'तो आप हुस्न को भावुकता के दृष्टिकोण से नहीं अपितु वास्तविकता से देखते हैं?'

'निश्चिन्त! प्रत्येक वह वस्तु जिसका जीवन के स्वभाव से सम्बन्ध है। इसी योग्य है कि इसकी भावुकता शीघ्र ही त्याग दी जाये और केवल वास्तविकता को केन्द्र बिन्दू बनाया जाये, हमारे जीवन में घुन लगा है और यह इसी भावुकता का लगाया हुआ है। इसी ने हमारे समाज की यह दशा कर दी है। इसी कारण हमारा घरेलू जीवन दुख-मय है। सच पूछिये तो पुरुष की सबसे बड़ी निर्बलता यही है और जो लोग इस निर्बलता के शिकार नहीं है। वह हमारे और आप के मुकाबले में कहीं अधिक स्वस्थ। अधिक प्रसन्न चित्त और अधिक उन्नतिशील हैं।' परवेज ने उत्तर दिया।

'यार तुम प्रो० के स्थान पर हकीम क्यों न हुये। पाचनशक्ति, चिकनाई, हैजा की बकवास लगा रखी है। अब समाप्त भी करो यह भाषण।' वर्मा ने कहा।

'मैंने तो यह बहस नहीं छेड़ी थी तुम कहते हो तो समाप्त किये देता हूं यह प्रसंग । हाँ यह बताओ कब आ रही हैं मिसेज वर्मा ? ताकि इससे दावत का प्रोग्राम बनाया जाये ।' परवेज बोला ।

'वाह दोस्त ! खूब फंस गये हो, तुम तो । अब दावत-वावत नहीं होने की ।' वर्मा साहिब चहके ।

'कैसे नहीं होगी मैं स्वयं घर में घुस जाऊंगा । और भाभी से हठ करूंगा । फिर देखूंगा तुम कैसे इन्कार करते हो । और वह कैसे इन्कार करती हैं ।' परवेज ने जवाब दिया ।

'यह बातें तो होती रहेंगी । लेकिन प्रोफेसर साहिब एक बात बताइये ?' प्रिंसिपल खन्ना ने कहा ।

'कहिये ।'

'हुस्न और इश्क का सम्बन्ध दिल से है या पाचनशक्ति से ?' वर्मा ने जोर का कहकहा लगा ।

'खूब कही भई, हाँ बताइये परवेज साहिब—इश्क हुस्न का सम्बन्ध दिल से है या पाचनशक्ति से ?

'मैं कह चुका हूँ हर वह वस्तु जिसका सम्बन्ध जीवन और जीवन के स्वभाव से है । दिल से अर्थात भावुकता से नहीं देखी जानी चाहिए। हर दृष्टिकोण से इसे परखना चाहिये । हुस्न और इश्क बुरी तरह जीवन पर छा जाते हैं । इसलिये इन पर हमें प्रत्येक दृष्टिकोण से सोचना चाहिये । मैंने पाचनशक्ति और चिकने पदार्थों का जो उदाहरण दिया है वह गलत नही था । वह जीवन की प्रत्येक समस्या पर । जीवन के प्रत्येक कार्य पर । जीवन की प्रत्येक घटना पर । यहाँ तक कि हुस्न और इश्क पर भी लागू होता हैं । (वर्मा की ओर देखते हुए) अब आप पूछिये कैसे ?'

'हां कैसे ?' वर्मा ने पूछा ।

'जो वस्तु स्वादिष्ट होगी । चिकनी होगी, चटपटी होगी । अधिक प्रयोग की जायेगी । यही रोग का कारण होती है । आप देख लीजिये ।

जो व्यक्ति आकृति के पुजारी होते हैं, तमाशबीन होते हैं, वह शीघ्र ही वृद्ध हो जाते हैं। और समय से पूर्व ही मर जाते हैं। और जो व्यक्ति गुणों के पुजारी होते हैं। वह आवश्यकतानुसार खाते हैं। वह अधिक खाने के रोग से मुक्त रहते हैं। अतः इनका यौवन बुढ़ापे स्थिर रहता है। और समय से पूर्व वह मरते भी नहीं।' परवेज ने उत्तर दिया।

'आप की बातों का सारांश यह निकला कि स्वादिष्ट होना, चिकना होना, चटपटा होना, स्वयं हानिकारक नहीं है। अर्थात अधिक प्रयोग करने से हानिकारक सिद्ध अवश्य होती है। यदि कोई व्यक्ति अधिक प्रयोग न करता हो। तो स्वादिष्ट, चिकनी और चटपटी वस्तुएं खा कर भी स्वास्थ्य बनाये रख सकता है और अधिक समय तक जीवित रह सकता है ?'

'ठीक है मेरा अभिप्राय यही है।'

'फिर आप हुस्न के विरोधी क्यों हैं ? विरोध कीजिये तो इसका कि हुस्न के स्वाद का अधिक आनन्द न प्राप्त किया जाये।'

'जी, यह नहीं हो सकता। आवश्यकता इस बात की है कि स्वाद का स्तर। हुस्न की पसन्द और सुन्दरता का अर्थ बदल दिया जाये। खान हुस्न के मुकाबले में कम स्वादिष्ट है। लेकिन जब स्वादिष्ट खाना खाने वाले, नियमानुसार नहीं खा सकते। फिर स्वाद जिसकी कोई सीमा नहीं। इसे पा कर क्यों कर समय से जीवन व्यतीत किया जा सकता है। मैं फिर वही कहूँगा कि पसन्द और पसन्द का स्तर परिवर्तित कर दिया जाये।'

'तो हजूर के कहने का अभिप्राय यह हुआ कि दुनिया में जितने हसीन (श्यामा की ओर तिरछी नजर से देख कर) औरतें हैं सब आत्म-हत्या कर लें ?'

'मेरा अभिप्राय यह तो नहीं है।'

'जी, नहीं आपका अभिप्राय यही है। आप हुस्न से चिढ़े हुये प्रतीत होते हैं। और प्रतिशोध इस प्रकार लेना चाहते हैं कि हुस्न की सर-

कार को हटा दें। और गंगादीन चपरासी की नई नवेली, मोटी ताजी, चेचक के दाग वाली, बदसूरत, असभ्य, काली कलूटी बड़े-बड़े दांत और छोटी-छोटी आंखों वाली दुल्हिन जो आई है। उसे और उस जैसी दूसरी स्त्रियों को मलिका हुस्न बना कर सिंहासन पर बिठा दें। थू।'

थूक कर वर्मा ने कुछ इस प्रकार मुँह बनाया कि श्यामा और राधा को भी हंसी आ गई। जो अब तक गम्भीरता से बैठी परवेज की बातें सुन रही थीं। प्रिंसिपल खन्ना भी हंसते-हंसते लोट-पोट हो गये। लेकिन वर्मा का चेहरा पहले की ही तरह गम्भीर था। आनन्द बोले—'भई, एक बात तो है।'

'वह क्या ?' बैनर्जी ने पूछा।

'अगर परवेज के दर्शन को मान लिया जाये तो दुनिया से अपहरण का सदा-सदा के लिये अन्त हो जाये। द्वेष का रोग बिलकुल जाता रहे। यह जो हुस्न और इश्क के लिये चाकू चलते रहते हैं। छुरियां चलती रहती है। और पिस्तोल चलते रहते हैं। हगामे होते रहते हैं। मित्रों और सम्बंधियों में जो रक्तपात होता रहता है। यह सब बन्द हो जाये ? और दुनिया बिलकुल गांधीजी का आश्रम बन जाये। बल्कि इससे भी अधिक शांत और पवित्र स्थान बन जाये। क्योंकि गांधीजी की अध्यक्षता में भी कभी-कभी ऐसी घटनाएं घट ही जाती हैं। वहां भी इश्क और मुहब्बत की कोई ना कोई घटना होती जाती है। और वह बेचारे भी।'

'इश्क पर जोर नहीं है वह आतिश गालिब
जो लगाये न लगे और बुझाये न बुझे।'

कह कर मौन हो जाते हैं—कैसे मजे की होगी वह दुनियां।'

'ऊँ-होगी—परवेज यह यह बताओ, तुमने अपनी शादी का क्या सोचा।'

'(परवेज की ओर देख कर) अगर कहो तो गंगादीन से कह दूँ, अपनी सजनी की तरह तुम्हारे लिए भी कोई अछूता माल ढूंढ लाये,

क्यों भई है आज्ञा —?' वर्मा साहिब बोले।

इतने में राधा उठी, उसने खड़े हो कर अंगड़ाई लेते हुये कहा—बहुत देर हो गयी चलेंगे अब।'

सब उठ खड़े हुए, 'हाँ भाई रात कभी हो गयी अब चलो।' खन्ना ने परवेज का हाथ पकड़ उठाते हुए कहा और यह सभा समाप्त हो गयी।

८

परवेज कालिज के वातावरण पर छाया हुआ था, यहा वह छात्राओं के दिल का राजा था। हुस्न उसके पीछे-पीछे चलता था। उसे प्रेम निमन्त्रण देता था। कभी-कभी वासना पूर्ति का निमत्रण भी, परन्तु वह विचित्र सा युवक था वह, उसकी दृष्टि में हुस्न का कोई मूल्य न था, वह हुस्न को प्रेम करने योग्य नहीं समझता था। कभी झिड़क देता था। कभी आंखों-आखों में ठुकरा देता था। वह सबसे हसता बोलता था। लेकिन दिल का लगाव जिसे कहते हैं। इससे वह परिचित ही न था।

कोई इससे प्रेम, की इकरार करें, या संकेतों ही सकेतों में प्रेम निमन्त्रण दे, या तो वह कुछ समझता ही न था। अथवा समझ भी जाता तो इस प्रकार जैसे इन बातों पर सोचने के लिए उस के पास समय ही नहीं हैं।'

सिटी कालेज की छात्राओं और अध्यापकाओं में अनेकों ने परवेज को अपना बनाना चाहा, उसे जुल्फों में कैद करने का प्रयत्न किया लेकिन वह किसी के हाथ न आया। मुस्करा-मुस्करा कर, और हंस-हंसकर दिलों पर अधिकार करता रहा।' मुस्करा-मुस्करा कर और हस-हंसकर दिलों

को मसलता और कुचलता रहा, मुस्करा-मुस्करा और हंस-हंसकर दिल को प्रत्येक बार से बचाता रहा इसका परिणाम यह हुआ प्रेमी हृदय उससे घृणा करने लगे प्रतिशोध लेने की सोचने लगे प्रम जब घृणा में परिवर्तित हो जाता है तो वड़ा भयानक रूप धारण कर लेता है, इसी भयानकता का अब परवेज को सामना करना पड़ रहा था।

अभी कुछ दिन पूर्व नारी समस्या पर जो भाषण इसने यूनियन में किया था, और प्रोफेसर वर्मा के घर हुस्न और इश्क पर जो विचार प्रकट किये थे, वह बम का गोला सिद्ध हुये, कालिज में उसका विरोध आरम्भ हो गया जो उसे चाहती थी ; उस पर जान देती थीं, वही सब उसकी विरोधी थीं।

श्यामा की अध्यक्षता में छात्राओं और अध्यापकाओं की एक सभा हुयी, इस में बड़े-बड़े जोशीले भाषण परवेज के विरुध किये गये उसका यूनियन वाला भाषण आज की सभा का विषय था, श्यामा ने अपने भाषण मे कहा 'परवेज साहिब ने नारी समाज का जो अपमान अपने भाषण में किया है इसे सहन नहीं किया जा सकता, इन्होंने मीठे बोल बोले हैं मगर बड़ी कड़वी बातें कहीं हैं।' मुम्ताज ने अपने भाषण में कहा—'प्रोफेसर साहिब इस योग्य नहीं कि हमें पढ़ायें। वह हमारा दिल (सरोजिनी की ओर देखकर) दुखाते हैं हमें (श्यामा को देखकर) बदनाम करते हैं हमें (राधा को अर्थ पूर्ण दृष्टि से देखकर) प्रेम के योग्य नहीं समझते ऐसे व्यक्ति से पढ़ना समय खोना और चरित्र को दूषित करना है अतः मैं परामर्श देती हूँ। कि प्रोफेसर परवेज की कक्षा का बायकाट किया जाय। और प्रत्येक लड़की उनसे शिक्षा न लेने का निश्चय करे। मुझे आशा है जीनत मेरे परामर्श को मानेगी।'

जीनत ने कहा—'मुझसे अच्छी स्वीकृति सरोजिनी दे सकेगी।'

सरोजिनी क्रोध से उठी और उसने भाषण देते हुए कहा—'मैं इस परामर्श का सहर्ष समर्थन करती हूँ।' इतना कह कर जब वह जीनत के पास आकर बैठी तो उसने अपने आप कहा—'हम किसी के दबाव

में तो नहीं ।'

फिर अध्यक्ष की ओर से प्रस्ताव रखा गया कि परवेज का सदा सदा के लिए बायकाट किया जाये। अध्यापकाये इससे किसी प्रकार का मेल-जोल न रखें और प्रिंसिपल की सेवा में कुछ सदस्य भेजे जायें बो उन्हें वर्तमान दशा में परिचित करायें राधा एक कोने में मौन बैठी थी, श्यामा ने इससे पूछा—'तुम्हारी क्या राय है ?' वह बोली—'ठीक है, परन्तु यदि परवेज साहिब क्षमा माँग ले तो बात समाप्त कर देनी चाहिये।'

राधा बोली—'नहीं माँगेगें तो भुकतेगें, अपना क्या है ? हम तो कर्तव्य से पूरा कर देगें।'

श्यामा की अध्यक्षता में कुछ सदस्य प्रिंसिपल खन्ना के सम्मुख उपस्थित हुए। इन सदस्यों में कुछ कालिज की छात्रायें थी। और कुछ अध्यापकायें, उन्होंने प्रिंसिपल साहिब से शिकायत की कि प्रोफेसर परवेज स्त्रियों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं, अभी कुछ दिन पूर्व एक भाषण दिया और नारी जाति का ऐसा अपमान किया जिसे सहन नहीं किया जा सकता अतः या तो वह क्षमा माँगें। अन्यथा अध्यापकायें उनके सामाजिक विच्छेद पर और छात्रायें उनकी कक्षा से हड़ताल कर देने पर विवश हो जायेंगी।

प्रिन्सिपल खन्ना को कुछ-कुछ यह तो प्रतीत था कि कालेज का एक समूह परवेज से अप्रसन्न है । परन्तु यह अनुमान उन्हें आज हुआ कि अप्रसन्नता का कारण क्या है। और इस अप्रसन्नता की जड़ें कितनी दूर तक फैली हुई हैं और कितनी मजबूत हैं ।

सदस्यों को विदा करने के बाद प्रिन्सिपल साहब ने, परवेज को अपने कमरे में बुलाया और मुस्कराते हुए कहा—'अब तो आप झगड़े की जड़ बनते जा रहे हैं ?'

'क्यों ? क्या कोई विशेष बात है ?'

'हाँ साहिब, बहुत विशेष बात है।'

'तो कहिये न।'

'आपके विरुद्ध हड़ताल हो रही है। आपसे सम्बन्ध-विच्छेद किया जा रहा है।'

'क्यों किस अपराध पर?'

'आपने नारी समाज का अपमान किया है।'

'मैंने! मुझ पर यह दोष निराधार है।'

'जी हां, आपने और क्या मैंने?' यह कहकर वह जोर से हँसे फिर उन्होंने सभी कुछ बता दिया।

परवेज ध्यानपूर्वक प्रिन्सिपल साहब की बातें सुनता रहा। फिर मुस्कराते हुए बोला—'इस बात का समाधान कैसे होगा?'

'क्षमा माँग लीजिये।'

'यदि अपराध ही न किया हो तो क्षमा किसलिये माँगू?'

'तो भी क्षमा मांग लो। बात दब जायगी।'

'नहीं, खन्ना साहिब यह नहीं हो सकता।'

'झगड़ा निपट जायगा और विरोध का तूफान थम जायगा।'

'यह तो कोई बात न हुई। मैं अपनी आत्मा का खून नहीं कर सकता।'

'क्यों जिद करते हो। बुद्धिमता से काम लो।'

'मैंने कोई अपराध नहीं किया हैं। फिर क्षमा क्यों माँगू।'

'इसलिये कि विरोध समाप्त हो जाये।'

परवेज ने अभी कोई उत्तर न दिया था कि प्रिंसिपल साहिब ने कहा—'नारी समाज के सम्मुख नत मस्तक होना एक कला है। मैं इस से बड़ा कलाकार किसी को नहीं समझता। जो इस कला में निपुण हो।

'परन्तु मैंने कलाकार होने का दावा कब किया है?'

'आप दावा करें या न करें लेकिन आप उच्च कोटि के कलाकार हैं। यह सब जानते हैं।'

'लेकिन मैं परिचित नहीं हूं ?'

प्रिंसिपल साहिब ने कहकहा लगाते हुये उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। परवेज ने कहा।

'बात यह है कि मैं बिन अपराध किसी के आगे सर नहीं झुका सकता।'

'नियम तो अच्छा है। लेकिन इस नियम से आपने नारी समाज को परखा तो यह आपका अन्याय होगा।'

'यह दोष मुझे स्वीकार है।'

'फिर क्या सोचा है आपने।'

'मैं प्रत्येक पहलू पर विचार करलूं। कल आपको अपना फैसला बताऊंगा।'

'कोई बात नहीं।'

६

आज श्यामा बन-ठन कर कालेज आई थी। रात भर वह सोचती रही थी कि आज परवेज को क्षमा मांगनी पड़ेगी। नारी को वह मुँह नहीं लगाता आज इसे नारी ही के सामने सर झुकाना पड़ेगा। कल्पना में वह परवेज के अभिमानी सर को झुकते हुये देख कर वह मुस्करा दी। राधा भी आज बड़ी प्रसन्न थी। वह भी मन ही मन में सोच रही थी कि परवेज ने जाने अपने आप को क्या समझता था ? न दिल की जबाँ समझे न आँखों की दास्तान, आज भरी महफिल में जब नारी समाज से क्षमा मांगनी पड़ेगी। उस नारी समाज से जिसके हुस्न और खूबसूरती को वह प्रेम के योग्य नहीं समझता था। और वह गालिब का यह शेर गुनगुनाने लगी—

भरम खुल जाये जालिम तेरी कामत की दराजी का,

अगर इस तुर्रह का पुर पेच-ओ खम-निकले !

वह भी अपनी मुस्कराहट न रोक सकी। वह मन ही मन यह सोच कर प्रसन्न हो रही थी कि वह व्यक्ति जो अपनी आन के सम्मुख किसी को कुछ नहीं समझता, सबके सम्मुख अपना अपराध स्वीकार करेगा तो क्या दशा होगी उसकी ?

सरोजिनी प्रसन्न थी और पूरी उत्सुकता के साथ परवेज के क्षमा मांगने का दृश्य देखने आई थी। लेकिन अन्दर ही अन्दर कुढ़ भी रही थी। वह जब यह सोचती थी, कि परवेज की उठी हुई गर्दन आज झुक जायेगी। तो उसके दिल में खटक सी होने लगती थी, यह अच्छा नहीं हुआ। मुझे परवेज के विरुद्ध किसी आन्दोलन में भाग नहीं लेना चाहिए था। माना कि मैं उसे चाहती हूँ। और वह मुझे नहीं चाहता। लेकिन यदि मैं वास्तव में उसे चाहती हूँ। तो मेरे प्रेम को क्या हो गया था। कि उसके विरुद्ध भाषण देने खड़ी हो गई ? अब परवेज को कौन सा मुँह दिखाऊंगी ? मेरी आंखें उसके सम्मुख किस तरह उठेंगी ?

जीनत कालेज से घर वापिस गई तो कुछ बुझी-बुझी सी थी। वह सोच रही थी। यदि वास्तव में ही लड़कियों ने हड़ताल कर दी और परवेज की कक्षा में नहीं गईं तो मैं क्या करूँगी ? यह तो हो नहीं सकता कि हड़ताल में भाग लूँ ! और अगर पृथक रहती हूँ तो सारे कालेज में बदनाम हो जाऊँगी। जिधर जाऊँगी, मेरी ओर उँगलियाँ उठेंगी। मुमताज अब भी कोई कसर उठा नहीं सकती। फिर तो मेरा उठना बैठना दूभर कर देगी मारे तानों के। कालेज से एक दिन की छुट्टी क्यों न कर लूँ। हाँ बस, यह ठीक है। न परवेज की शिकायत होगी और न मुमताज और सरोजनी को मेरी जान खाने का अवसर ही मिलेगा। अभी वह आते होंगे। कह दूँगी सर में दर्द है। आज नहीं पढ़ती। फिर इधर-उधर की बातें कर के टोह लूँगी कि इस घटना का प्रभाव उनके हृदय पर क्या है ?

लेकिन कुछ देर बाद मोटर वापिस आ गई। ड्राईवर ने कहा—'प्रोफेसर साहिब कहीं बाहिर गये हैं। घर पर नहीं हैं। नौ बजे तक मैंने प्रतीक्षा की, आखिर वापिस चला आया।'

अब जीनत और भी चिन्तित हो उठी। रात भर उसे नींद नहीं आई। वह इस उलझन में फंसी रही कि वह क्या करे और क्या न करे? प्रातः जब कालेज जाने का समय हुआ तो वह कालेज चली गई। उसने निश्चय कर लिया था कि चाहे कितनी जबरदस्त हड़ताल क्यों न हो? मैं तो परवेज की कक्षा में अवश्य जाऊँगी। सरोजिनी और मुमताज चाहे जितना मुझे तंग करें मैं परवेज के विरुद्ध किसी का साथ नहीं दे सकती भई।

कालेज पहुँची तो विचित्र सी चहल-पहल देखी। अध्यापकाओं की टोली सामाजिक विच्छेद के लिये तैनात खड़ी थी। श्यामा और राधा इस टोली की लीडर थीं। छात्राओं की टोली हड़ताल करने पर तुली हुई थी। मुम्ताज और सरोजिनी—मुमताज केवल शरारत के लिये और सरोजिनी न तो निगली जाये और न उगली जाय के अनुसार इस टोली की लीडर थी। दोनों टोलियाँ इस प्रतीक्षा में थीं कि अब परवेज आता ही होगा। और आते ही या तो क्षमा माँगेगा या फिर सामाजिक विच्छेद के तीर और हड़ताल के खन्जर इसके सीने पर चलेंगे। छात्राओं और अध्यापकाओं की इस उत्सुकता और प्रतीक्षा ने अपने आप मौनता का रूप धारण कर लिया। ठीक उसी समय की उत्सुकता और प्रतीक्षा अपनी सीमा पर पहुँच चुकी थी। परवेज का मुस्कराता हुआ मुखड़ा दृष्टिगोचर हुआ। अधरों पर वहीं हल्की सी मुस्कराहट। आँखों में वही मासूम सी शोखी। अन्दाज में वही शरारत। वह प्रिंसिपल के कमरे से आ रहा था। उसे आते देख कर, इस भीड़ में खामोश सी हलचल मच गई। सब इसी प्रतीक्षा में थे कि अब क्या होता है?

परवेज टोली के निकट आ गया। उसने श्यामा, राधा, मुमताज और सरोजिनी की ओर देखा। मुस्कराया और कहा—'आप को यह

सुन कर प्रसन्नता होगी कि आप सब के विरोध के पश्चात भी अपनी बात पर स्थिर हूं । लेकिन आप सब की शान्ति के लिये मैंने त्याग पत्र दे दिया है । अब जाइये आप कक्षा में । 'आदाब अर्ज !'

यह कह कर वह मुस्कराता हुआ बिदा हुआ । यह शब्द सुनते ही श्यामा और राधा का चेहरा सफेद पड़ गया । सरोजिनी की आँखें उस समय तक परवेज का पीछा करती रहीं जब तक वह आँखों से ओझल न हुआ । जीनत की आखों में आँसू आ गये । मुमताज खिसियानी हंसी हंसने लगी । लेकिन उससे अच्छी तरह हंसा भी न गया । सारी भीड़ पर एक शोकमय सन्नाटा छाया हुआ था ।

१०

परवेज के जाने के पश्चात सारे वातावरण पर सन्नाटा सा छा गया । आज परवेज की उठी हुई गर्दन झुक जायगी । सोचा यह था हुआ कुछ और । सब से अधिक शोक श्यामा और राधा के चेहरे पर बरस रहा था । सब से अधिक सरोजिनी के हृदय पर चोट लगी थी । सब से अधिक खिसियानी मुमताज थी । जीनत की आँखों में आँसू भरे हुए थे । कोई किसी से बोल नहीं रहा था । राधा अपने मोती के से सफेद दाँतों से खून के से सुर्ख अधर चबा रही थी । श्यामा अपने लाल-लाल नाखूनों पर नजर जमाये थी । सरोजिनी एक अपराधी की भाँति नजर जमाये हुए थी । मुमताज एक असफल नायिका की भाँति सामने के बगीचे पर नजरें जमाये थी । और जीनत बगल में पुस्तकें दाबे, पृथ्वी को इस भाँति घूर रही थी । जैसे परवेज इसमें समा गया हो ।

इतने में प्रिन्सिपल खन्ना आते हुये दिखाई दिये । शिष्टाचार वश

सब खड़े हो गये। इन्होंने जमघट पर एक नजर डाली। और किसी को संकेत किये बिना बोले—'अरे भई! अब क्या है? झगड़ा ही समाप्त हो गया परवेज के त्यागपत्र देने से। अब तो जाओ अपनी-अपनी कक्षा में।'

सरोजिनी बोली—तो हमारा यह मतलब कब था कि वह त्याग पत्र दे दें?'

राधा ने कहा—'उनका (परवेज़ का) दिमाग न जाने क्यों सदैव आसमान पर रहता है। चल दिये नौकरी छोड़ के। वाह भई! यह भी अच्छी रही।'

श्यामा चहचहाई—'वह तो उड़ने को पर तोड़ रहे थे। मिल गया बहाना दे दिया त्याग-पत्र।'

मुमताज ने मुस्कराने का प्रयत्न करते हुये कहा—'हम ने तो यूं ही छेड़ा था। यह क्या पता था कि इसका परिणाम यह होगा?'

प्रिन्सिपल साहिब ने फरमाया—'खैर अब तो जो होना था हो गया। तुम सब की नीयत क्या थी? वास्तविक बात क्या थी? इस पर बहस व्यर्थ है। परवेज चला गया हमारा कालेज एक अनोमोल रत्न से वंचित हो गया।'

'आपने भी रोकने का प्रयत्न नहीं किया?' सरोजिनी ने भोलेपन से पूछा।

'वह ठहरा एक दार्शनिक। कोई निर्णय वह कर ले फिर तो पत्थर की चट्टान बन जाता है वह।' प्रिन्सिपल साहिब ने उत्तर दिया।

'बड़ा बुरा हुआ है यह।' मुमताज ने बातचीत में भाग लेते हुये कहा।

'जी हां, बुरा हुआ। परन्तु इसका कारण आप ही के सर है।'

मुमताज—(मुस्कराकर) जी, नहीं सरोजिनी के सिर।'

'वाह! बड़ी आई मेरा नाम लेने वाली। स्वयं ही तो भाषण दिया था विष में बुझा हुआ—हमें नहीं अच्छी लगती यह बातें।'

'भाषण अकेले मैंने ही नहीं दिया था । (श्यामा और राधा की ओर देख कर) सब ही ने किया था । फिर सारी बुराई मेरे ऊपर क्यों थोप रही हो ? कहो तो सब को कहो; और हाँ समर्थन किसने किया था ।'

ज़ीनत ने ग्रीवा उठाई और रुआँई सी आवाज में बिना किसी को देखे कहा—'भई हमारा नाम कोई न ले । हमें नहीं अच्छी लगती यह बातें ।'

प्रिन्सिपल साहिब ने कहा—'अब केवल एक उपाय है ।'

'वह क्या ?' मुमताज ने पूछा ।

'तुम्ही लोगों ने यह तूफान उठाया था । तुम ही सब जा कर परवेज को मनाओ ।'

'मैं भी जाऊँ प्रिन्सिपल साहिब ?' श्यामा ने पूछा ।

'केवल तुम ही क्यों ? तुम भी, राधा भी, सरोजिनी भी, मुमताज भी और बाकी सब लड़कियाँ, बस यही एक उपाय है उसे वापिस लाने का । मैं तो अपनी ओर से पर्याप्त प्रयत्न कर चुका हूँ । परन्तु सफल नहीं हुआ ।'

'मुझ से तो नहीं जाया जायेगा ।' श्यामा ने कहा ।

'मैं तैयार हूँ जाने को ।' राधा बोली ।

'और मैं भी ।' सरोजिनी ने कहा ।

'हाँ, मैं भी ।' मुमताज बोली—फिर उसने ज़ीनत को घूरा । घूरती रही । फिर मुस्कराते हुए उससे बोली—'तुम भी चलोगी ज़ीनत ?'

'चले चलेंगे ।' ज़ीनत ने उत्तर दिया ।

राधा ने श्यामा की ओर देखा और कहा—'तुम्हें भी चलना पड़ेगा ।'

'मुझे ले जा कर क्या करोगी । और चिढ़ जायेंगे वह ?'

'कुछ भी हो हमारे साथ चलोगी तुम ?'

'और अगर मैं न जाऊँ ?'

'तो हम जबरदस्ती ले चलेंगे।'

'सोच लो भई, कौन जायेगा। कौन नहीं जायेगा। मैंने सम्मति दे दी है।' यह कह कर प्रिन्सिपल साहिब वापिस चले गये। उनके जाने के पश्चात मुमताज ने सरोजिनी से कहा—'तो चलो न।'

सरोजिनी ने कहा—' ऐ-वाह ! अकेली मैं तुम ?'

राधा बोली—'नहीं भई, अकेली तुम दोनों क्यों ? हम भी चलेंगे। श्यामा भी चलेंगी। जीनत भी हमारे साथ होंगी। पूरी टोली की टोली चलेगी।'

'आप लोग हो आइये। मैं जा कर क्या करूंगी ?' जीनत ने कहा।

'ऐ-वाह ! अभी तो तैयार थीं।' सरोजिनी ने कहा।

'तैयार तो थीं परन्तु एक बात है ?' मुमताज बोली।

'वह क्या ?' राधा ने पूछा।

'अभी बच्चा हैं। जरा लज्जा आती है पुरुष के सामने जाते हुये।' सब लोग कहकहा लगा कर हंस पड़े। जीनत भी मुस्कराने लगी। राधा ने पूछा—'तो कब चलोगी श्यामा ?'

'भई, मैं नहीं जाने की।'

'तोबा ! फिर वही बच्चों की सी बातें।'

'तुम जाओ मैं नहीं रोकती। परन्तु मैं किसी प्रकार भी नहीं जा सकती। चाहे किसी को बुरा लगे या भला लगे।'

'आखिर क्यों ?'

'सच पूछो तो मुझे इसका दुख भी नहीं है कि परवेज ने कालिज छोड़ दिया।'

'यह बात भी है ? अच्छा क्यों ? बताओ तो सही।'

'खुली हुई बात है। जो नारियों को नीच और जलील समझता हो। उनको अपमानित करता हो। जो अपने से सब को छोटा समझता

हो। जो सुन्दरता का उपहास करता हो। जो असुन्दरता को सुन्दरता समझता हो। उससे महानुभूति क्यों? उसका ख्याल किसलिये?'

'अरे! छोड़ो भी इन बातों को। वह तो दीवाना है। उसकी बातों का बुरा मानना किया और फिर उसकी बातों से विरोध है। तो हमें यह कब शोभा देता है कि हम उसके शत्रु हो जायें। और उसे नौकरी तक छोड़ देने पर विवश कर दें। यह भी कोई मानवता है, जरा सोचो तो।'

'खूब सोच लिया मैंने। तुम्हारा जी कुढ रहा है। तो चली जाओ तुम अभी। लेकिन बाबा मैं तुम्हारे साथ नहीं हूँ?'

'यह लो, जली-कटी बातें आरम्भ कर दीं।'

'फिर क्यों मेरे पीछे पड़ी हो—तुम क्रोध भी कर सकती हो और गर्दन भी झुका सकती हो। लेकिन मेरी गर्दन किसी के आगे नहीं झुक सकती। वह सब के सामने ऊँची भी रहेगी। चाहे वह तुम्हारे परवेज साहिब हों या कोई और साहिब। समझ गईं राधा?'

'खूब! यह तुम्हारे 'परवेज साहिब' का क्या मतलब हुआ? वह मेरे कौन होते हैं? तुम कैसी बातें कर रही हो श्यामा?'

'फिर इतनी बे अधीर क्यों हुई जा रही हो उनके लिये?'

'श्यामा, तुम्हें नहीं जाना है तो न जाओ। कोई जबरदस्ती तो नहीं कर रहा है। लेकिन ऐसी जली-कटी बातें न करो। तुम तो जान पड़ता है बहुत समय से दिल में गर्मी लिये बैठी थीं। आज अवसर मिला, उबल पड़ी। जरा यह समझा होता किस के सामने बातें कर रही हो?'

'कौन बैठा है यहाँ?'

'तुम्हें सरोजिनी, मुमताज, जीनत किसी की भी चिन्ता नहीं है?'

'कैसी चिन्ता?'

'क्या कह रही होंगी यह लड़कियां अपने दिल में हमें तुम्हें?'

'मुझे क्या कहेंगी? कहेंगी तो तुम्हें कहेंगी। स्वयं ही देख रही हैं अपनी आँखों से।'

'(ज़रा ऊँची आवाज से) क्या देख रही हैं ? क्या किया मैंने ?'

'सब जानते हैं। दोहराने से क्या लाभ ?'

'तुम मेरा अपमान कर रही हो। मैं इसे कदापि सहन नहीं कर सकती।'

'क्यों अपनी मंजिल खोटी करती हो। जाओ परवेज साहिब अभी मिल जायेंगे घर। अन्यथा कहीं नगर छोड़ कर न चले जायें। उनके लिये यह भी कोई बड़ी बात नहीं।'

श्यामा झुंझलाती हुई स्टाफ रूम की ओर चली गई। राधा ने मुमताज और सिरोजिनी को संकेत कर कहा—'तो आओ चलें।'

'चलिये।'

'सब लोग, परवेज के घर की ओर चल पड़े। जीनत पहले ही खिसक गई थी। वह अपने घर चली गई।

११

परवेज इस शान्ति से जैसे कोई घटना ही नहीं घटी अपने घर आया। पढ़ने के कमरे में आराम कुर्सी पर लेट कर प्रसिद्ध दार्शनिकों की पुस्तकें निकाल कर पढ़ने लगा। वह लेखक की दार्शनिकता और व्यक्तित्व दोनों को ग्रहण कर रहा था। इतने में धम-धम करता हुआ सीढ़ियों से गिर के कोई दरवाजे के सम्मुख आ खड़ा हुआ। परवेज ने पुस्तक पर से दृष्टि उठा कर, देखा तो मुमताज खड़ी थी। उसने वैसे ही कुर्सी पर से लेटे-लेटे पूछा :

'कुशल तो है। तुम कैसे आ गई मुमताज ?'

'जी, मिस राधा भी आई हैं।'

'अच्छा कहाँ हैं वह ?'

'और सरोजिनी भी आई हैं।'

'वाह भई ! पूरा काफिला का काफ़िला आया हैं। तो आओ न अन्दर।'

. सब लोग अन्दर चले आए। परवेज ने घन्टी बजाई। नौकर आया। उसे चाय तैयार करने को कह वह राधा से बोला—'कहाँ भूल पड़ी आप ?'

वह आयें घर में हमारा खुदा की कुदरत है
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते है।'

राधा न जाने क्या-क्या सोच कर आई थी। परन्तु परवेज की इन बातों ने उसके दिल की धड़कन तेज कर दी। वह घबरा सी गई। उसने कहा—'यूं ही।'

'आईए तशरीफ रखिए।'

'अगर बुरा लगा हो मेरा आना तो वापिस चली जाऊं अभी उल्टे पांव।'

'ऐसा गजब न कीजिएगा। आपका आना किसे बुरा लग सकता है। तुम्हारे आने से तो रौनक और भी बढ़ गई।'

'आज तो तबीयत बहुत हाजिर है आपकी।'

'हां भई, आज कुछ मूड अच्छा है।'

'कालेज छोड़ देने से ?'

'हां, और क्या ?'

'लेकिन कालेज आपको नहीं छोड़ेगा।'

'क्यों नहीं छोड़ेगा, क्या जबरदस्ती है ?'

'यही समझ लीजिए।'

'हम आपको लेने आए हैं। मुमताज ने बातचीत में भाग लेते हुए कहा।

'आपको हमारे साथ चलना पड़ेगा।' सरोजिनी बोली।

'हां, बस उठिए।' राधा ने कहा।

'क्यों, क्या अभी नाटक अधूरा है ?'

'क्या मतलब है आपका ?'

'यही चाहती हो कि मैं वहाँ आऊं तो यह हमारी सरोजिनी साहिबा और मुम्ताज बेगम, कक्षा के द्वार पर आ जर कहें—तशरीफ ले जाइये प्रोफेसर साहिब। हम आपसे नहीं पढ़ना चाहते और जब मैं स्टाफ रूम में में जाऊं तो तुम और श्यामा, आओ और कह दो, उठ जाइये यहाँ से आप अछूत है। हमने आपका सामाजिक बायकाट कर रखा है। यही मतलब है न तुम्हारा राधा ?'

'बिल्कुल नहीं हमें इतना गिरा हुआ न समझिये।'

'फिर क्या बात है ?'

यह कि चलिये वह बात समाप्त हो गयी। वह क्षणिक क्रोध था आपने व्यर्थ ही उसका इतना प्रभाव लेलिया।'

'मैं तो यूं ही मजाक कर रही थी सच।' मुम्ताज ने कहा।'

'तुम बहुत शरारती हो मैं जानता हूँ।'

'मैं भी यूं ही सम्मिलित हो गयी थी। कुछ जी से थोड़े ही सम्मिलित हुई थी।' स रोजिनी बोली।'

तुम बड़ी नेक हो सरोजिनी मुझे मालूम है।'

'बस एक बुरी मैं हूँ क्यों श्रीमानजी ?' राधा ने आँखों से शराब बरसाते हुए कहा।

'किस में साहस है कि तुम्हें बुरा कहें तुम तो बड़ी अच्छी हो, विश्वास न हो तो उठो। वह सामने दर्पण रखा है, उसे देख लो।'

१२

राधा परवेज के इस बर्ताव से कटी जा रही थी। यह बनावट की बातें उसके दिल के टुकड़े-टुकड़े किये जा रही थीं। था उसका जी चाह रहा था कि एक धक्का देकर सरोजिनी और

मुम्ताज को कमरे से निकाल दूं और परवेज के आगे सीना चीर कर अपना जख्मी दिल रख दे, और कह दे साफ-साफ कि यह है मेरा दिल जिसे तुम्हारी निगाहों ने सदैव ठुकराया, परन्तु यह तुम्हारी पूजा ही करता रहा, उसकी आँखों में आँसू डबडबा आये। परन्तु वह आँखों ही आँखों में उन्हें पी गयी, उसने अपनी आवाज और आँखों पर काबू पाते हुए कहा—'यह बातें छोड़िये कालेज वापिस चलिए।'

'तुम्हें यह कहने का क्या अधिकार है ? तुम तो अधिक से अधिक यही कह सकती हो कि मेरा बायकाट न करो। लेकिस सरोजिनी और मुमताज ने अपने सब साथियों सहित यदि हड़ताल कर दी तो क्या होगा ?'

'यह बात होती तो सरोजिनी और मुमताज मेरे साथ आती ही क्यों ?'

'तुम नहीं जानतीं, मुमताज बड़ी शरारती है। जब चाहे भीगी बिल्ली बन जाय, और जब चाहे विद्रोह की आग लगा दे। और यह सरोजिनी तो बड़ी नेक लड़की है। इसलिए मेरे दिल में इसकी मुहब्बत भी है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यह नियमों की बड़ी पक्की है। जो भी फैसला करेगी, पहाड़ की तरह इस पर दृढ़ रहेगी। क्या मजाल कि वह अपने निश्चय से फिर जाय। वह निश्चय कर चुकी है कि मेरी कक्षा का बायकाट करेगी और इस निश्चय से उसे संसार की कोई भी शक्ति नहीं हटा सकती।'

राधा अनायास हँस दी। उसने कहा—'क्यों काँटों में घसीट रहे हो आप बेचारी सरोजिनी को। आपने तो इतना जोशीला भाषण कर डाला कि सरोजिनी के स्थान पर कोई और होता तो सचमुच भड़क ही जाता। आप भी अजीब आदमी हैं, बड़े मजे की बात रही यह भी।' कहकर वह फिर हँसने लगी। परवेज ने सरोजिनी से कहा—'क्यों भई, मैं गलत तो नहीं कह रहा। सच-सच कहना, अपितु याद रखना, श्यामा तुम्हें जीवित नहीं छोड़ेगी, हाँ।'

सरोजिनी ने परवेज की ओर नजर भर कर देखा और टप-टप उसकी आँखों से आंसू गिरने लगे। परवेज उठ खड़ा हुआ। उसने स्नेह पूर्वक उसकी ठोड़ी ऊपर उठायी और कहने लगा—'अरे, तुम रोने लगीं। पगली कहीं की, कोई मजाक में रोता है। मैं तो हँसी में यूं ही बातें कर रहा था।'

मुमताज ने उठकर सरोजिनी के आंसू पोंछे और परवेज से कहा—'यह जितनी नेक है, उतनी ही डरपोक भी है। यह डर रही है, अब कहीं आप मार न बैठें—देखिए मारिएगा नहीं बेचारी को, हो गई गल्ती, अब नहीं करेगी, ऐसी गल्ती कभी।'

'मार खाने के योग्य तो तुम हो, शरारती कहीं की। सरोजिनी तो बड़ी नेक लड़की है। जो नेक होते हैं, वह कभी मार नहीं खाते हैं, आ गया समझ में।'

इतने में नौकर चाय लेकर आ गया। परवेज, राधा और मुमताज ने अपने अपने लिए चाय बनानी आरम्भ की। लेकिन सरोजिनी वैसी की वैसी बैठी रही। उसकी आँखें रोने से सुर्ख हो रही थीं।

परवेज ने कहा—'अरे भई, चाय तो पिओ, ठण्डी हुई जा रही है।'

'पी लूंगी, आप पीजिए।' सरोजिनी ने उत्तर दिया।

परवेज ने अपनी प्याली सरोजिनी के सामने रख दी और उसके सामने जो खाली प्याली रखी थी, उसे उठाकर अपने सामने रख लिया।

सरोजिनी अब भी मौन थी, वह चाय की ओर तनिक भी नहीं देख रही थी। मुमताज ने एक ठोंगा मारा सरोजिनी के, 'अरी पी ले पगली इन्होंने दी है यह तो ध्यान कर।'

सरोजिनी के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना मुमताज ने आगे कहा—'न पिओ, हमारा क्या है, नाराज हो जाएँगे वह तुमसे, यह बताए देते हैं भई हम।'

इतने में परवेज ने सरोजिनी से फिर कहा—'पिओ न चाय।'

सरोजिनी ने प्याली उठा ली और धीरे-धीरे चाय पीने लगी। मुमताज ने फिर एक ठौंगा लगाया और धीरे से कहा—'अच्छा, ठहर जा, देख कैसा बदला लेती हूँ।'

सरोजिनी ने गर्दन झुकाकर और मुँह मुमताज की ओर मोड़कर, इस प्रकार कि कोई सुन न ले कहा—'अरे वाह, काहे का बदला लोगी क्या किया मैंने, जरा बताओ तो सही।'

'जब हमने कहा था, तब चाय क्यों नहीं पी थी और अब क्यों पी ली है ?'

'चल हट तुझे क्या ?'

सरोजिनी ने चाय की प्याली खाली कर दी। मुमताज ने फिर धीरे-से कहा—'यह प्याली क्यों छोड़ दी, इसे भी चबा जाओ न।'

'क्यों कोई दिमाग खराब है मेरा ? हम तो नहीं चबाते तुम स्वयं ही चबा जाओ।'

'अरी चबा ले। इसके टुकड़े हलवा सोहन की तरह मजा देंगे।'

'तू क्यों नहीं चबा लेती ?'

"मैं यूँ नहीं चबाती कि मेरे लिए इसमें कोई आकर्षण नहीं है। और तू इसलिए चबा ले कि इसमें परवेज साहिब का हाथ लगा है। उन्होंने अपने हाथ से इसमें चाय बनाई है और चाय बना यह प्याली तेरे सामने रख दी। फिर इसकी जगह तो तेरे दिल में होनी चाहिए, न कि इस मुई ट्रे में। अल्लाह कसम, यदि तेरी जगह मैं होती तो यह पिर्च ऐसे चबा जाती जैसे बच्चे बताशे खाते हैं। ले, अभी वह दोनों (राधा और परवेज) बातों में लगे हैं, नहीं तो देख लेंगे।'

यह कह कर उसने वह खाली प्याली फिर खिसका कर सरोजिनी के सामने रख दी। सरोजिनी झेंप सी गई। उसने चाहा कि प्याली हटा दे। परवेज ने राधा से बातें करते-करते इधर देखा तो मुमताज ने

बड़े भोलेपन से कहा—'और पियेंगी यह चाय, आज नाश्ता करके नहीं आई थीं घर से ?'

सरोजिनी ऐसी सिटपिटाई कि वह न इन्कार कर सकी और न ही हां कर सकी। मुमताज ने पूरी प्याली चाय से भरी और उसके सामने रख दी। सरोजिनी ने चुपके से कहा—'मैं तो नहीं पीती।'

'पी ले चुपचाप, नही तो कहती हूँ, यह प्याली चबाने की चिन्ता में है।'

आखिर सरोजिनी को चाय पीनी ही पड़ी।

राधा ने पूछा—'तो क्या निर्णय किया आपने परवेज साहिब ?'

'निर्णय बार-बार तो नहीं किया जाता। जो निर्णय कर चुका हूं वह तुम्हें मालूम है।'

'आप अपनी जिद पर कायम रहेंगे ?' राधा ने पूछा।

'हम सब का अनुरोध ठुकरा देगें।' मुम्ताज ने पूछा।

'क्या आप हमारी गलती किसी तरह क्षमा नहीं कर सकते।' सरोजिनी ने कहा परवेज हंसा उसने कहा—'यह जिद नहीं है। सोचा समझा निर्णय है, अनुरोध ठुकराने का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता। मैं तुम लोगों की किसी सेवा से बाहिर नहीं हूं, (सरोजिनी को सम्बोधित करके) रही क्षमा, तो तुमने अपराध ही क्या किया है जो क्षमा किया जाय। एक राय थी जो तुमने बता दी, बड़े स्पष्ट शब्दों में, यह तो प्रशंसा के योग्य बात है, और इसका मेरे दिल में कोई विचार ही नहीं हमारे बाह्य प्रबन्ध वैसे ही बने रहेंगे जैसे अब तक हैं—मुझे सरोजिनी तुमसे ही नहीं अपितु मिस श्यामा तक से कोई शिकायत तक नहीं हैं।'

'आखिर अब आपने सोचा क्या है ?' राधा बोली।

'क्या मतलब ?'

'कालिज तो आप जायेंगे नहीं।'

'ठीक, नहीं जाऊंगा।'

'फिर क्या करेंगे ?'

'यह तो अभी मैंने सोचा नहीं है ।'

'फिर भी कुछ तो विचार होगा ?'

'सोचता हूँ कि बीमा का काम करूँ ।'

राधा जोर से हँस पड़ी । उसने कहा—'सिटी कालेज का दर्शन का प्रोफेसर और बीमा का काम ।'

'तो क्या हुआ ?'

'यह आपका अपमान है ।'

'कोई काम, यहाँ तक कि गन्दी नालियों को साफ करना भी अपमानजनक नहीं है । हाँ, काम न करना मानवता का अपमान है ।'

'तो मैं समझूं, यह आपका अन्तिम निर्णय है ?'

'हाँ भई, कितनी बार पूछोगी ।'

'हमें सबसे बड़ा दुःख एक बात का है ।' मुमताज ने कहा ।

'काहे का ?' परवेज ने पूछा ।

'हमारे कालेज की एक छात्रा दार्शनिक बनते-बनते रह गई ।'

'यह क्यों ?'

'सरोजिनी को दार्शनिकता का बड़ा शौक था ।'

'तो क्या वह शौक जाता रहा ।

'अब कौन पढ़ायेगा इन्हें ।'

'यह क्यों, क्या मेरी जगह सदैव खाली रहेगी । अरे भई कोई न कोई मेरी जगह आयेगा ही और उससे पढ़ेगी यह दर्शन जी भर के ।'

'मगर आपकी सी बात कहाँ ।'

'परन्तु मैंने कहा न कि मैं किसी सेवा से बाहिर नहीं हूं । कालेज से मेरा सम्बन्ध विच्छेद हो गया यह सच है, परन्तु तुम लोगों से तो मेलजोल पहले की ही भांति रहेगा । यदि (सरोजिनी को सम्बोधित करते हुए) तुम्हें कोई कठिनाई हो तो मेरे द्वार सदैव तुम्हारे लिए खुले रहेंगे ।'

सरोजिनी का मुख प्रसन्नता से चमक उठा। मुमताज ने पूछा—'अगर यह आपसे रोज पढ़ने आया करें तो आप इन्हें पढ़ायेंगे।'

'क्यों नहीं।'

'यदि रोज आएं तो।'

'तो मैं रोज पढ़ाऊंगा। पढ़ना और पढ़ाना मेरा सब से प्रिय शौक है।'

सरोजिनी से पूछे बिना राधा की ओर निहारते हुए मुमताज ने परवेज से कहा—'तो कल से आएँ यह।'

'कल से नहीं, आज ही से, अभी से।'

राधा ने परवेज को मीठी नजरों से देखते हुए कहा—'अच्छा, विदा।'

'राधा मैं तुम्हारी बात न मान सका, लेकिन तुम्हारे इस प्यार का बड़ा आभारी हूँ। क्षमा करना मुझे।'

राधा ने शीघ्रता से प्रणाम किया और आगे बढ़ गई। उसकी आँखों में आंसू उमड़ रहे थे।

१२

खान बहादुर दिल ही दिल में निश्चय कर चुके थे कि जीनत का विवाह परवेज से करेंगे। इसकी आकृति और गुण उनके दिल में घर कर गये थे, वह उसके व्यक्तित्व से दब से गए थे। उनके पास दौलत की कमी नहीं थी। वह उन पूंजीपतियों की भांति नहीं थे, जो पूँजीपतियों से ही सम्बन्ध करना पसन्द करते हैं।

यह उनकी सोची-समझी राय थी कि अगर जीनत का होने वाला पति यदि धनवान न हो तो कोई बुराई नही है । परन्तु वह उसे योग्यता और चरित्र की पूंजी से भरपूर देखना चाहते थे और इस पूंजी की निधि परवेज के पास थी ।

मुसलमानों में यह रीति है कि सम्बन्ध जोड़ने की बात लड़के की ओर से होती है । और लड़की वाले बड़ी मिन्नतों के बाद उसे स्वीकार करते हैं । लड़की का इससे बढ़ कर कोई अपमान नहीं हो सकता कि सम्बन्ध की बात लड़की वालों की ओर से हो । शरीफ अच्छे घरानों में तो इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती । हाँ, संकेतों संकेतों में कुछ रहस्य की बातें हो जायें तो यह दूसरी बात है ।

खान बहादुर साहिब ने इन रीतियों को अधिक बल न दिया । इन्होंने एक पत्र परवेज के नाम लिखा । और साफ-साफ लिख लिख दिया । मैं तुम्हें चरित्र, योग्यता, व्यक्तित्व, शराफत प्रत्येक दृष्टिकोण से पसन्द करता हूँ । जीनत के लिये मैंने ऐसे ही पति को चुना था । यदि तुम जीनत को इस योग्य समझते हो कि इसे अपनी पत्नी बना सको । तो झिझकने की आवश्यता नहीं । साफ-साफ अपने विचार लिख दो मैं बुरा नहीं मानूंगा ।

यह पत्र परवेज को उस समय मिला । जब वह राधा, सरोजिनी और मुमताज को बिदा कर के अपने पढ़ने के कमरे में बैठा था । उसने ध्यान से पत्र को पढ़ा फिर वह कुछ सोचने लगा—सोच रहा था । खान बहादुर मेरे साथ बच्चों जैसा व्यवहार करते हैं उनके हाँ कोई मुझसे पर्दा नहीं करता । सब मेरा सम्मान करते हैं । लिहाज करते हैं; मेरी अतिथि की भाँति सेवा करते हैं । खान बहादुर साहिब और उनकी पत्नी तो मेरे लिये बिछ जाती हैं । जीनत भी मेरा बहुत ख्याल करती लेकिन क्या मैं उससे शादी कर सकता हूँ ? जीनत सुन्दर है जैसे गुलाब का फूल । नाजुक है जैसे फूल की पंखुरी । शिक्षित है, सभ्य है । उसमें वह समस्त गुण हैं जो एक शरीफ लड़की में होने चाहियें । लेकिन मैं

निश्चय कर चुका हूँ हुस्न के आगे सर नहीं झुकाऊँगा। ज़ीनत अगर बदसूरत होती और गुणवान होती तो अवश्य उससे विवाह कर लेता। परन्तु दुर्भाग्य से जितनी अधिक वह गुणवान है। उससे अधिक सुन्दर भी। और मेरे समीप यही सबसे बड़ी खराबी है। ज़ीनत की वह हुस्न और खूबसूरती के आगे अपने सर नहीं झुकाऊँगा।। हाँ बदसूरती और खूबसूरती का जहाँ संगम हो केवल वहाँ मेरा सर झुक जायेगा।

उसने कलम दवात उठाई और खान बहादुर साहिब को खत लिखने बैठ गया।

श्रीमान,

पत्र आपका मिला। आपकी मेहरबानी का शुक्रिया किस तरह अदा करूं। ज़ीनत के लिए आपने मुझे चुन कर मेरा सम्मान किया। लेकिन मैं बड़े दुख से आपको सूचित करना चाहता हूँ कि मैं सम्मान को स्वीकार नही कर सकूंगा। एक कारण तो यह है कि मैंने कालेज की नौकरी छोड़ दी है। मुझे अपने भविष्य पर कोई भरोसा नहीं। मैं हर प्रकार की आपत्ति सहन कर सकता हूँ। परन्तु अपने साथ किसी दूसरे को क्यों सम्मिलित करूं। आप यह कह सकते है कि आपके पास धन की क्या कमी है। यह सच है। परन्तु वह धन मेरा नहीं आपका है या ज़ीनत का। मैं उस पर किसी प्रकार के अधिकार की कल्पना मात्र भी नहीं कर सकता।

दूसरा कारण यह है कि मैं नियमानुसार यह विवाह नहीं कर सकता। यह क्या आवश्यक है? कारण लिख कर आपका समय व्यर्थ करूँ। मुझे आशा है आप मुझे क्षमा कर देंगे। नोट—(आज के पश्चात मैं ज़ीनत को पढ़ाने न आ सकूँगा।)

आपका सेवक

परवेज

खान बहादुर साहिब को यह पत्र मिला। उन्होंने इसका वर्णन किसी से नही किया। यहाँ तक कि अपनी पत्नी तक नहीं। उन्होने घर

में किसी पर को इस बात का परिचय ही नहीं दिया था कि परवेज को जीनत के लिए पसन्द कर चुके हैं। उन्होंने सोचा।

व्यर्थ का झंझट पैदा करने से क्या लाभ ? क्यों इस पत्र का वर्णन किया जाए ? यह सोच कर वह मौन हो गए। उन्हें सदमा तो बहुत हुआ, परन्तु इस चोट को वह चुपचाप सहन कर गए। अच्छाई इसी में थी। अतः उन्होंने कोई कदम उठाना उचित न समझा।

जीनत प्रसन्न-चित्त कालेज से वापिस आई थी। उसे आशा थी। राधा, सरोजिनी और मुमताज की टोली परवेज को मना लायेगी। वह फिर कालेज में पढ़ाने लगेगा। वह बहुत प्रसन्न थी। दिल ही दिल में श्यामा का मजाक उड़ा रही थी। ऊँ-ह, बायकाट करेंगी परवेज का। बड़ी आईं कहीं की। मिस राधा बेचारी दिल की अच्छी है। शीघ्र ही राजी हो गईं, परवेज के यहाँ जाने पर। और श्यामा की जिद, प्रतीत होती है। कलोपत्रा रानी यही हैं। अभिमान और जलना तो समाप्त है इस औरत पर।

आज वह बड़ी बेचैनी से शाम होने की प्रतीक्षा कर रही थी कि शाम हो और परवेज आए। तो मालूम हो कि उसने त्याग पत्र वापिस लेना स्वीकार किया है या नहीं ? शाम हो गई, परन्तु परवेज नहीं आया। उसने ड्राईवर से पूछा—'तुम परवेज साहिब को लेने नहीं गए ?'

'जी नहीं।'

'क्यों ?'

'सरकार ने मना किया है।'

'अब्बाजान ने मना किया है ?'

'जी !'

'कुछ कारण भी बताया होगा ?'

'कह रहे थे। वह कुछ दिन तक नहीं आयेंगे।'

यह सुन कर जीनत के दिल पर चोट सी लगी। उसका दिल चाहा,

वह फूट-फूट कर रोने लगे। वह सीधी खान बहादुर के कमरे में पहुंची। वह सोच के गई थी कि अब्बाजान से पूछूँगी कि मामला क्या है। कहीं खुदा न करे उनकी तबीयत तो खराब न हो गई ? तोबा! मैं भी कितनी मूर्ख हूँ। सरोजिनी और राधा के साथ चली क्यों न गई उनके हाँ ? बस उस मुमताज का डर था। खूब मनाती उन्हें यदि चली जाती मैं।

कमरे में खान बहादुर साहिब नहीं थे। कहीं बाहिर गए हुए थे। मेज पर कागज बिखरे पड़े थे। उसने सोचा कि उन्हें समेट कर रख लूँ। वह उन्हें सम्भालने लगी। इतने में उसकी नजर एक लिफाफे पर पड़ी। जो दरवाजे के पास पड़ा हुआ था। उसने सोचा अब्बाजान का पत्र होगा। सम्भवतः जाते समय उन्हीं की जेब से गिर पड़ा हो। यह सोच कर वह लिफाफा उठा लाई। लेख कुछ जाना-पहचा प्रतीत हुआ। पत्र खोला तो परवेज का था। एक ही नजर में वह सारा पत्र पढ़ गई। उसने फिर पढ़ा और फिर पढ़ा। उसके चेहरे पर एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था। किसी निर्दोष को फांसी की आज्ञा सुना दी जाए। जो उसकी दशा होगी वही इस समय जीनत की थी। उसने पत्र सम्भाल कर लिफाफे में रखा।' अब वह सोच रही थी कि वह इस पत्र का क्या करे ? इतने में खान बहादुर साहिब आते दिखाई दिए। जीनत ने लिफाफा उनकी ओर बढ़ा दिया।

'यह दरवाजे के समीप पड़ा हुआ था। आप ही की जेब से गिरा होगा। मैं उठा लाई थी कि आपकी मेज पर रख दूँ।'

'बड़े काम की है हमारी बेटी—बताओ तो यह किस का पत्र है ?'

'मैं क्या जानूं अब्बाजान ?'

खान बहादुर साहिब को सन्तोष हुआ कि जीनत इस रहस्य को नहीं जान सकी। जीनत ने उनसे विदा होते हुए पूछा—'ड्राईवर कह रहा था प्रोफेसर साहिब अब पढ़ाने नहीं आयेंगे ? क्यों अब्बाजान ?'

'हां बेटा, यह तो तुम्हें मालूम ही है कि वह कालेज छोड़ चुके हैं, यहां से न वह कुछ लेते थे और न कुछ लेने पर राजी होंगे। अतः अब

वह नहीं आएँगे। हमें भी अपने लाभ के लिए उनकी हानि नहीं करनी चाहिए।'

'ठीक है।'

यह कह कर जीनत अपने कमरे में चली आई। दरवाजा अन्दर से बन्द किया और खूब फूट-फूटकर रोई। उसने सोचा मैं क्यों रो रही हूँ। जो व्यक्ति मेरे साथ जोवन नहीं बिता सकता, जो मुझसे प्रेम नहीं कर सकता उसके लिए रोऊँ क्यों।

यह सच है कि मुझे उससे प्रेम है। परन्तु प्रेम रो-रोकर प्राप्त नहीं किया जा सकता। भीख माँगने से नहीं मिलती। अगर उसके दिल में मेरे लिए प्रेम है तो मैं उसके पीछे क्यों पड़ूँ। यह बहुत अच्छा हुआ कि यह बात चुपचाप समाप्त हो गई। और यह और भी अच्छा हुआ कि मैंने परवेज पर प्रेम प्रकट नहीं किया। फिर मैं यह अपमान नहीं सहन कर सकती थी। फिर आत्महत्या के अतिरिक्त कोई उपाय ही नहीं था मेरे लिए।

मैं अपने दिल से परवेज का प्रेम समाप्त करने का प्रयत्न करूँगी। यदि ऐसा न कर सकी तो प्रेम अवश्य करूँगी। परन्तु अपनी आकृति से नहीं प्रकट होने दूँगी कि मैं उसे चाहती हूं। जब वह मेरी चाह को नहीं पहचान सका। जब मेरा प्रेम उसके दिल तक न पहुँच सका। जब मेरा प्रेम आकर्षित न कर सका। तो फिर अब मैं जो कुछ कर सकती हूँ वह यह कि उसके प्रेम को अपने दिल के पिंजरे में कैद कर लूँ और उसे बाहिर निकलने का अवसर न दूँ। यह मैं कर सकती हूं यह मैं अवश्य करूँगी। इस निर्णय से कुछ सन्तोष हुआ। वह अब भी करवटें बदल रही थी। नींद अब भी उससे कोसों दूर थी। परन्तु पहले की भांति विकलता भी नहीं थी। जिसका भय था। वह यह समझती थी कि यदि परवेज ने उसे ठुकरा दिया तो वह जीवित नहीं रहेगी। लेकिन अब जब कि परवेज उसे ठुकरा चुका था। उसका अपनत्व अंगड़ाई लेकर जाग

चुका था। वह उसे एक साधारण घटना समझ कर, बाह्य दृष्टिकोण मे सफल हो रही थी। और ठीक उसी समय जब जीनत अपने कमरे में अकेली पड़ी यह सब कुछ समझ रही थी। राधा भी अपनी चारपाई पर अकेली लेटी नींद से युद्ध कर रही थी। वह सोच रही थी, परवेज मिलता तो बहुत अच्छी तरह है। चरित्र और व्यहार इसका चित्र है। परन्तु न दूसरों का दिल टटोलता है और न अपना टटोलने देता है। कुछ समझ में नही आता यह किस प्रकार का पुरुष है? बहुत से दार्शनिक देखे, परन्तु ऐसा आँखों का अन्धा भी कोई नही देखा। जो हुस्न और शबाब को देख कर आँखें बन्द कर लेता हो। जो सुन्दरता का मूल्य न जानता हो—डाल ले अपने मुँह पर तेजाब और बन जाए बदसूरत तो जानूँ। स्वयं तो गुलफाम बने हुए हैं और बीबी चाहिए हजरत को चुड़ैल। जैसे रूह वैसे फरिश्ते। मैं क्यों अपनी जवानी, अपनी सुन्दरता को खाक में मिलाऊँ। मैंने जान लिया यह मेरे हाथ नहीं आ सकता। फिर थकने और थकाने से क्या लाभ?

लेकिन मैं श्यामा जैसी कठोर और संगदिल भी नहीं बन सकती। वह तो परवेज की जान की ग्राहक हो गई है। कुछ ऐसी सुन्दर भी तो नहीं है। फिर न जाने इतनी इतराती क्यों है? अरे भई, पूछो। जब परवेज ने मेरे फंदे में फंसने से इन्कार कर दिया। फिर वह तुम्हारे हाथ कैसे आएगा। तनिक मुँह तो देखो दर्पण में और भई मान लिया। बड़ी सुन्दर हो। लेकिन सुन्दरता तो इसके समीप कुछ भी महत्व नहीं रखती। फिर वह इसे कैसे जीवन साथी बना ले।

यह तो जिन्दगी है और जिन्दगी गुजारने का उपाय यही है कि हंस खेल कर गुजार दो. जो हम से प्रेम नहीं कर सकता, हम उससे घृणा क्यों करे, अधिक से अधिक जो हम कर सकते हैं, वह यह कि स्वयं हम भी प्रेम न करें परवेज को मेरे दिल ने मेरी चाह को स्वीकार न किया, अब दोषी हूँ तो मैं, क्योंकि मैंने इसे क्यों चाहा न कि वह कि उसने मुझे क्यों नहीं चाहा?

७०
DEVAL

१४

सरोजनी आज पुष्प की भांति खिली जा रही थी पाँव रखती कहीं थी पड़ते कहीं थे, जो कुछ इसके दिल में था उसे वह कभी जबान पर लाने का साहस न कर सकी, दिल ही दिल में किसी को याद करती रही पूजती रही, याद करके रोती रही, पूजा करके अपने आप को न्योछावर करती रही कभी उसकी जबान पर एक भी शब्द न आ सका था, लेकिन मुम्ताज ने हसीं हसीं में अनहोनी बात को सम्भव बना दिया।

वह सोच रही थी, माना वह जीनत को चाहते हैं, परन्तु घृणा तो वह मुझसे भी नहीं करते, मैं रोने लगी तो वह व्याकुल हो उठे, स्वयं अपने हाथों से चाय बना कर मुझे दी, और फिर सीधी साधी भी तो समझते हैं मुझे क्या इन बातों से यह सिद्ध नहीं होता, कि उसके दिल के किसी कोने में कुछ थोड़ी बहुत जगह मेरी भी है जीनत के बराबर न सही, इससे कम सही, लेकिन है कुछ न कुछ, यही बहुत है मैं इसी को बहुत कुछ समझती हूँ।

जीनत को प्रतिदिन इन से भेन्ट करने का अवसर मिलता है, दावतें हो रही हैं, बीझी बीझी जा रही हैं कौनसा दिन होगा जो सदव्यवहार का उत्तर सदव्यवहार से नहीं देगा मुझे तो इसमें भी सन्देह है कि वह जीनत को चाहते है चाहते होते तो मुझे अपने घर आने की आज्ञा न देते, और पढ़ाने का प्रण न करते, हाँ यह भी तो उन्होंने कहा था, मेरे बारे में कि सीधी साधी और नेक है और मेरे दिल में इससे मुहब्बत है, इस समय तो मेरा चेहरा सुर्ख होगया था—अच्छा हुआ कि मुम्ताज नहीं देख पाई, अन्यथा मार ही डालती मुझे, मारे तानों और चुटकियों के और मिस राधा तो अपनी चिन्ता में थीं वह क्या देखती की मेरे चेहरे पर कैसी सुर्खी दौड़ रही थी, अब मैं प्रतिदिन इनके यहां जाया करूंगी, एक दिन मेरी जबान पर आ जायेगा, मेरे चेहरे पर मुहब्बत का नूर बनकर

चमकने लगेगा, इस दिन वह सब कुछ समझ जायेगा, फिर वह होंगे और मैं हूंगी।

आंखें इन्हे देखने को तरसा करती थीं कान इनकी बातें सुनने को बेचैन रहते थे दिल इनकी याद में मछली की भांति तड़फता था, लेकिन अब मैं प्रतिदिन वहाँ जाऊंगी, इनका चांद जैसा मुखड़ा देखूंगी इनकी जादू भरी बातें सुनूँगी, इनकी मदभरी आंखों को चोरी चोरी देखूंगी, इनके घुंघरिया बालों की बलायें लेती रहूँगी, फिर आखिर कब तक वह मेरे प्रेम का उत्तर प्रेम से नही देगें दिल इनके सीने में भी वही है जो मेरे सीने में है, जहाँ इतना हो गया कि इन्होंने मेरे प्रेम को स्वीकार कर लिया, वहां एक दिन इससे आगे जो कुछ होता है वह भी हो जायेगा।

ज़ीनत की ओर जो यह अधिक खिंचे नजर आते हैं इसका एक कारण और भी तो है; ज़ीनत का समाज और इनका समाज एक ही तो है, वह इन्हें सुगमता से मिल सकती है मेरे और इनके समाज में शत्रुता है। हम दोनों का मिलना बहुत कठिन है। लेकिन मैं इस कठिनता को दूर कर लूंगी। समाज को तो दिलों के तोड़ने में मजा आता मैं इस समाज को ठुकरा दूंगी जो मेरा दिल तोड़ने का प्रयत्न करेगा, समाज नहीं हुआ भगवान हुआ, जो वह कर दे पत्थर की लकीर, मैं नहीं मानती ऐसे समाज को, प्रेम समाज को नहीं देखता, हम दोनों यदि प्रेम करते हैं तो समाज का क्या बिगड़ता है, वह कौन होता है हमारे मध्य आने वाला हम नहीं मानते ऐसे समाज को, भाड़ मे जाये ऐसा समाज, अच्छा समाज है यह मान न मान मैं तेरा महमान।

यह बातें सोचते सोचते उसके सम्मुख ज़ीनत का चित्र आ उपस्थित हुआ इसने हरकत की, इसके होंठ हिले, और इसके मुंह से निकला :

'क्यों सरोजनी यह बातें ?'

'क्या हुआ क्या किया मैंने ?'

'किसी और पर भी नहीं मुझ पर डाका डालोगी क्यों ?'

'कैसा डाका ? मैं क्यों डालने लगी ? कुछ बावली हुई हो ?'

'कल तुम परवेज के पास जाओगी, प्रेम पाने ?'

'हां जाऊँगी । फिर तुम कौन होती हो पूछने वाली ?'

'तुम्हें यह शोभा नहीं देता ।'

'क्यों नहीं देता । तुम ने जब पढ़ना आरम्भ किया तो मुझ से परामर्श लिया था। प्रेम करना आरम्भ किया तो मुझ से पूछा था। यह सोचा था मेरे दिल पर क्या गुजरेगी ? यह जानने का प्रयत्न किया था कि मेरे घायल हृदय का क्या हो रहा होगा । तुम जो कुछ करो सब उचित और मैं वही करने लगूँ तो बुरी हो गई ।'

'मुझे क्या मालूम था तुम परवेज को चाहती हो । यदि मुझे मालूम होता तो कदाचित इसे अपना दिल न देती । लेकिन तुम्हें तो मालूम है मैं इसे चाहती हूँ । इस पर जान देती हूँ । मेरी जिन्दगी का सहारा तुम मुझ से क्यों छीन रही हो ।'

'प्रेम पर बस किसका चलता है । प्रेम में पूछताछ कब की जाती है । प्रेम तो अपने आप हो जाता है । मैं अपने दिल से किस भाँति इस का प्रेम निकाल दूँ ।'

'जो काम तुम नहीं कर सकतीं वह मैं कैसे कर लूँ ? तुम्हीं कह दो सच सच ।'

'वहाँ न जाओ ।'

'वहाँ न जाऊँ परवेज के यहां ?'

'हाँ वहाँ न जाया करो ।'

'तुम भी इसे अपने यहाँ बुलाना क्यों नहीं छोड़ देतीं ?'

'मैं इससे सच्चा प्रेम करती हूँ ।'

'यही दशा मेरी भी है ।'

'फिर मैं निराश हो जाऊँ ?'

'मुझसे क्या पूछती हो जीनत ? जो तुम्हारे जी में आया तुम ने

किया। जो मेरे दिल में आया वह मैं कर रही हूँ।'

'यदि तुम मेरा दिल तोड़ोगी तो तुम्हें भी शान्ति नहीं मिलेगी।'

'और दे लो बद्दुआयें।'

'यह बददुआ नहीं है आह है!'

'आह हो या वाह। मैं भी इसी तरह मजबूर हूँ जिस तरह तुम।'

जीनत का चित्र कांपने लगा। इसकी बड़ी-बड़ी आँखों में मोटे-मोटे आँसू तैरने लगे। ऐसा प्रतीत होता था। अब गिरी अब गिरी। इसी भाँति उसके पांव डगमगा रहे थे। जैसे किसी शराबी के। फिर वह चित्र आँखों से ओझल हो गया।

सरोजिनी का मुखड़ा खिला हुआ था। पुस्तक सामने खुली रखी थी। इसने पुस्तक बन्द की। कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द किया। बिजली बुझाई। एक शानदार अंगड़ाई ली। नाईट सूट पहना और सोने के लिए लेट गई। लेकिन जिस प्रकार बेचैनी के कारण नींद नहीं आती उसी प्रकार अधिक प्रसन्नता पर भी नहीं आती। वह बार-बार आँखें बन्द करती थी। करवटें बदलती थी। झूठ-मूठ सो भी जाती थी। लेकिन नींद का कहीं कोसों पता नहीं था।

यह रात जीनत पर सितम ढा रही थी। राधा बेचैनी से इस रात को काट रही थी। लेकिन सरोजिनी के लिए यह रात दीवाली की रात थी। इसके दिल की सड़कों पर, महलों पर, दुर्गों पर दीपक जल रहे थे। और बड़ी अलबेली रोशनी हो रही थी। कमरे में अँधेरा घुप रहा था। लेकिन इसका दिल जगमग-जगमग कर रहा था।

१५

प्रातः सरोजिनी खुशी-खुशी बिस्तर से उठी। कल रात तक वह एक कली थी और आज वह महकता हुआ फूल बन चुकी थी। इसने

दर्पण में अपने आपको को देखा । शर्मा कर वह सामने से हट गई। इसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे दर्पण में परवेज खड़ा हो और इसे ललचाई निगाहों से घूर रहा हूँ। इसने निश्चय कर लिया था कि वह आज ही परवेज के यहाँ जायेगी। और इससे पढ़ना आरम्भ कर देगी। इसने जल्दी-जल्दी नाश्ता किया। कपड़े बदले, और पिताजी के कमरे में पहुंची। इनसे पूछे बिना यह एक नई जगह पढ़ना कैसे आरम्भ कर सकती थी। पिताजी ने इसे देखते ही बड़े चाव से कहा—'आओ बेटा आओ!'

'आई पिताजी कोई काम है?'

'हाँ बहुत जरूरी काम है।'

'तो कहिए न?'

'कहता हूं बेटी इसलिए तो बुलाया है तुम्हें।'

'जल्दी कहिए हमें देर हो रही है।'

'देर-वेर काहे की?'

'मुझे बाहिर जाना है जरा।'

'कहा? क्यों?'

'वह हमारे कालेज के प्रोफेसर परवेज हैं न?'

'हां-हाँ, कहे जाओ।'

'इन्हीं के यहाँ जा रही हूँ।'

'वही तो पूछ रहा हूँ क्यों?'

'पढ़ने।'

'उनके घर पर जाओगी।'

'जी, वहीं जा रही हूँ।'

'कालेज की शिक्षा का कोई लाभ नहीं हुआ?'

'नहीं पिताजी बात यह है कि मैं दर्शनशास्त्र में कमजोर हूँ। और वह दर्शन के प्रोफेसर। कल मिस राधा ने, जो हमारे कालेज में पढ़ती हैं प्रोफेसर साहिब से कहा, तो वह राजी हो गए मुझे पढ़ाने के लिए।'

'बेटी मैं तो तुम्हें आगे और पढ़ाना चाहता था कि तुम इस योग्य बन जाओ कि अपने पाँव पर खड़ी हो सको।'

'जी, फिर ?'

'लेकिन अब इसकी जरूरत नहीं रही ।'

'क्यों न रही ?'

'इसलिए कि तुम्हारा विवाह सेठ जुगलकिशोर से हो रहा है। तुम ने इनका नाम तो सुना ही होगा। बड़े धनवान और दयालु आदमी हैं। जायदाद बहुत बड़ी है। बड़ी-बड़ी कम्पनियों के हिस्सेदार हैं। इन्हें है अब शादी की जल्दी। बल्कि इन्होंने स्पष्ट लिख दिया है कि यदि एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर विवाह न हुआ तो वह कोई और प्रबन्ध कर लेंगे।'

सरोजिनी ने साहस बटोरा जरा रुक-रुक कर उत्तर दिया—'तो क्या हो जाएगा ? कर लें।

'बेटी तुम्हें लज्जा नहीं आती यह बातें करते।'

'पिताजी !, इतना कह सरोजिनी बच्चों की भांति रोने लगी। इतने में इसकी माताजी भी आ गई। इन्होंने सरोजिनी को रोता हुआ देखा तो आव देखा न ताव स्वयं भी इसके गले से लग रोने लगी। जैसे सरोजिनी का विवाह हो रहा है और अब वह सुसराल जा रही है।

यह दृश्य देख पिता जी को क्रोध आ गया। इन्होंने अपनी पत्नी को जोर से डाँटा।

'यह क्या मूर्खता है ?'

'तो क्या मैं रोऊँ नहीं।' इन्होंने आँसू पोंछते हुए उत्तर दिया।

'रोने की क्या बात है ?'

अब तनिक इसमें शक्ति आ चुकी थी। इन्होंने सम्भल कर कहा।

'मैं या तुम ?'

'अच्छा रोती रहो जी भर के। मैं जाता हूँ। प्रबन्ध करने यह विवाह होगा और शीघ्र ही होगा। बस एक सप्ताह के अन्दर।

यह कह कर वह चले गए और माताजी फिर सरोजिनी के गले लग रोने लगीं। जब जी भर कर रो चुकीं तो इन्होंने कहा।

'बेटी रोना तो जीवन भर का है। कुछ दिन तो इस घर में हँस खेल कर व्यतीत कर दें।'

इतना कह कर वह चली गई किसी काम से और सरोजिनी बैठे-बैठे सोचने लगी कि यह हुआ क्या है? माताजी क्यों रो रही थी। इतनी शीघ्र विवाह की बातचीत पिताजी ने क्यों कर ली। और हाँ माताजी ने यह क्यों कहा रोना तो जीवन भर का है। दो चार दिन तो हँस बोल ले। वह समस्या का समाधान सोचने का प्रयत्न कर रही थी, कि इसकी मामा की लड़की शोभा आई और आकर चुपचाप इसके साथ बैठ गई। इसे कुछ मालूम नहीं था कि यहाँ अभी-अभी क्या हो चुका है इसने कहा।

'और कुछ सुना?'

'क्या?'

'तुम्हारी शादी हो रही है।'

'हाँ सुन लिया।'

'प्रसन्न हो तुम?'

'बिल्कुल नहीं शोभा।' यह कह सरोजिनी फिर रोने लगी।' शोभा ने इसके आँसू पोछे और कहा—'हां बात भी तो ऐसी है।'

अबतो सरोजिनी के कान खड़े हुए। इसने पूछा—'क्या बात है?'

'तुम्हें कुछ नहीं मालूम!'

'बिल्कुल नहीं।'

'तो अब हम से न अड़ो।'

'सच शोभा।'

'सेठ जुगलकिशोर बन रहे हैं तुम्हारे दुल्हा।'

'नाम तो मैंने भी सुना है लेकिन यह है कौन?'

'बड़े अमीर आदमी हैं।'

'और।'

'बूढ़े बहुत हैं।'

'चल हट तुझे हर समय दिल्लगी सूझती रही।'

सच सरोजिनी।'

'क्या आयु होगी ?'

'है कोई साठ-पैंसठ वर्ष के।' शोभा मौन हो गई फिर उसने अपने आप कहा—'मोटे भी बहुत हैं।'

'छोड़ो इन बातों को जी घबड़ाता है।'

'घबड़ाये या कुछ हो—विवाह तो होकर रहेगा।'

'यह क्यों ? कुछ जबरदस्ती है।'

'तुम्हारे पिता पर कर्जा है। कुछ जानती हो कितना है ?'

'हां है—बहुत है।'

'बस तो समझ जाओ। उसे और कौन अदा करेगा ?'

'तो मैं बेची जा रही हूँ।'

'यही समझ लो।'

'मैं मर जाऊंगी—विष खा कर।'

शोभा सीधी उठी और सरोजिनी की माताजी के पास जा कर बैठ गई। इन्होंने पूछा।'

'क्या है बेटा ?'

'कुछ और सुना ?'

'क्या बेटी ?'

'सरोजिनी को यह विवाह स्वीकार नहीं है रोक दो।'

'मैं कैसे रोक दूँ इसके पिताजी सुनते हैं किसी की ?'

'तो वह विष खा लेगी।'

'ऐ-चल हट !

'सच, वह विष खा लेगी।'

'तुझे कैसे मालूम ?'

'कह रही थी मुझसे अभी।'

यह सुन कर माताजी घबड़ाई। इन्होंने सरोजिनी को आवाज दी— वह आ कर चुप माताजी के पास बैठ गई। माताजी ने प्रेम से इसके सर पर हाथ फेरा और पूछा—'शोभा सच कह रही थी।'

'हाँ, माताजी।'

'तो विष खालेगी।'

'अवश्य खाऊंगी।' मैं रो-रो कर मरना नहीं चाहती। एक ही बार समाप्त हो जाना चाहती हूँ।' यह कह सरोजिनी फूट-फूटकर रोने लगी। माताजी ने इसे गले से लगा लिया और स्वयं भी रोने लगी। फिर इन्होंने अपने आँसू पोंछे। और सरोजिनी की आंखों पर भी अपना काँपता हाथ फेरा। फिर इन्होंने कहा—'बेटा! थोड़ा सा विष मुझे भी दे देना। भला होगा तेरा।'

'तुम क्या करोगी ?'

'जब तुझे दुनिया में रहना नहीं है तो मैं रह कर क्या करूंगी। तेरे तो जीने के दिन हैं। जवान है, मैं आज मरी कल दूसरा दिन। मैं तो बूढ़ी हो चुकी।'

'माताजी यह सच है—लेकिन जो जिन्दगी तुम मुझे दे रही हो इससे तो मौत ही अच्छी है मेरे लिये।'

'यह सच है लेकिन अपने वृद्ध पिता को देख, अपनी बूढ़ी मां को देख। अपने मासूम भाइयों को देख। सोच इन सब का क्या होगा ? वह सब कहाँ सर छिपाने जायेंगे। यह घर नीलाम हो जायेगा। जो थोड़ी बहुत जायदाद है कौड़ियों के भाव बिक जायेगी। यह थोड़ा बहुत सामान छीन लिया जायेगा। यह ही नहीं होगा। तेरे पिताजी जेल भेज दिये जायेंगे। इनके कमजोर और बूढ़े हाथों में हथकड़ियां पहनाई

जायेंगी । क्या तू यह सब कुछ देख सकेगी ? कोई बाप अपनी सन्तान को जान बूझकर आग में नहीं झौंकता, कुयें में नहीं धकेलता । अगर तेरे पिता तुझे कुयें में धकेल रहे हैं, तो स्वयं समझ ले ऐसे ही मजबूर हो गए होंगे वह । कौन अपने दिल के टुकड़े और आंखों के तारे को यूं, अन्धे कुयें में झौंकेगा । जैसे वह तुझे झौंक रहे हैं ।'

सरोजिनी खामोशी के साथ मां की यह बातें सुनती रही । वह सोचने लगी यदि पिताजी जेल गए तो मेरे मासूम भाईयों और बूढ़ी माँ का क्या होगा । क्या करेंगे यह लोग, कहां जायेंगे यह सब । इसकी आँखों के बहते आंसू सूख गए । इसने कालेज जाना छोड़ दिया था । घर इसे काटने को दौड़ता था । लेकिन वह घर से जाती कहाँ । एक तो उसे बिना पूछे बाहिर जाने की आज्ञा नहीं थी । यदि घर से इजाजत मिल भी जाती तो वह जाती कहाँ । किसके पास कौन इसका दिल रखता । कौन था जो इसकी निराशा को आशा में परिवर्तित कर देता ।

जैसे-जैसे विवाह के दिन समीप आते जाते थे, वह कमजोर होती जा रही थी, मां यह रंग देखती थी, आँसू पी जाती थी, बाप यह दशा देखता था, खीझ कर रह जाता था, वह डरता था कहीं इसका बना बनाया खेल न बिगड़ जाये, इसकी योजना पर पानी न फिर जाये, कहीं इसे हथकड़ियाँ न पहननी पड़ें, जेल न जाना पड़े, अपमान जनक जीवन न व्यतीत करना पड़े, भूखों न रहना पड़े, लड़की पराया धन है, वह तबाह होती है तो होजाये, लड़के दिल की अमानत हैं इन्हें कोई आँच न आने पाये, इन्हें कोई कष्ट न हो, इनका भविष्य कहीं अन्धकार मय न हो जाये ।

पिता जी घर पर बहुत कम आते-जाते थे, वह डरते थे कहीं पत्नी बिगड़ न जाए, और इनकी दुखती हुई रग न छेड़ दे, इन्हें यह भी आशंका थी कि कहीं लोग लड़की को न भड़का दें, और वह विरोध कर बैठे ।

आखिर वह दिन आ गया जिसकी प्रतीक्षा थी, सरोजनी की आज शादी थी, आज इसे सुन्दर परिधानों से सजाया गया था। सोने और चाँदी की जंजीरों में इसे जकड़ दिया गया था, इसकी आँखों में सुरमा माथे पर सिन्दूर, और गाल पर तिल लगाया गया था। आज इसका खरीदार इसे लेने आ रहा था आज वह अपने घर में बेची जा रही थी, भारत की बेबस और बेजबान लड़की में और इन लड़कियों में क्या अन्तर है, जिनका बदमाश अपहरण करते हैं और मुँह माँगे पैसों पर बेच देते हैं, यही तो यहाँ हो रहा है। वह रुपये के लिये दूसरे की लड़की का सौदा करते हैं और यह माँ-बाप, किसी की अन्य की नहीं अपनी लड़की को बेचते हैं, आज मैं बिक रही हूँ। और अब मेरे ग्राहक आता ही होगा।

विवाह हो गया सरोजनी सेठ साहिब के शयनगृह में पहुँची। एक पलंग सुगन्धित पुष्पों से सजा था, उस पर उसे गुड़िया की तरह लिटा दिया गया। उसके स्वागत के लिये गीत गाये गये। बाजे बजाये गये, परन्तु उसका दिल रो रहा था, और खून के आँसू रो रहा था।

रात के बारह बज गये तब सेठ साहब कमरे में आये। बे डौल कद, तोन्द आगे को बढ़ी हुई, मुँह से शराब की बदबू के भभके, आयु पैंसठ साल से भी अधिक, बाल सफेद रंग काला। वह आये और सरोजनी के पास बैठ गये। इसी तरह वह कभी अपने पिता के समीप बैठा करती थी। परन्तु यह पिता से आयु में कुछ अधिक होने पर भी, उसके पास थे। जीवन साथी। उसने एक दृष्टि सेठ पर डाली। और आह! कह कर गर्दन डाल दी—वह बेहोश हो चुकी थी।

१६

सरोजनी के बेहोश होते ही सारे घर में तहलका मच गया। सेठ साहिब बहुत घबड़ाये हुये थे। वह कहना कुछ चाहते थे और मुँह से निकलता कुछ था। कितने चाव और प्रेम से इस बुढ़ापे में एक नई नवेली, अलबेली गुड़िया खरीद कर लाये थे। सोचा था इससे अपना जी बहलायेंगे। यह शराब का काम देगी, उसे देखेंगे और मस्त हो जायेंगे। यह शक्ति की औषधि बन जाएगी। इसे आँखों ही आँखों में पियेंगे। और दिल की दुनिया में हलचल मच जायेगी। परन्तु कैसी विचित्र थी यह गुड़िया। कैसा अनोखा था यह खिलौना। कैसा नाजुक था यह फूल। परन्तु आते ही काँटा बन गया। और कहीं और भी नहीं, हृदय में चुभने लगा। कमजोर और बूढ़ा दिल। इस घटना को सहन न कर सका।

'सागर को मेरे हाथ से लेना, कि चला मैं।

इतना कहकर वह वास्तव में दुखी और बेचैन हो उठे। दिल उन का पहले से ही कमजोर था, सरोजनी की यह दशा देख वह डाँवा डोल होने लगा, बहुत सम्भालने का प्रयत्न किया। बहुत सीने पर हाथ रख रख कर उसे बाहिर निकलने पर रोका। परन्तु वह एक मुँह जोर घोड़े की भाँति सीने की खिड़कियाँ तोड़ कर बाहिर निकलने के लिए पूरा-पूरा जोर लगा रहा था। सीने पर हाथ रखे रखे वह भी बेहोश हो गए, अभी तक सब सरोजनी की बेजान मूर्ति पर झुके हुए थे। अब सारा घर मैडिकल कालेज के लड़कों की भाँति सेठ साहिब का निरीक्षण कर रहा था। शीघ्र ही डाक्टर आ गए। सब लोगों को कमरे से बाहिर निकाल दिया गया। और सेठ साहिब तो एक ही इन्जैक्शन के पश्चात ही सम्भल गए। परन्तु सरोजनी अभी तक बेहोश थी, डाक्टरों का

कहना था कि—इसे कोई अकस्मात सदमा पहुँचा है। सहन न हो सका और बेहोशी छा गई। कोई घन्टा डेढ़ घन्टा के पश्चात सरोजनी ने भी आँखें खोल दी। दोनों रोगियों के लिए डाक्टर ने कहा था कि चुपचाप पड़े रहें और शरीर का कोई अंग न हिलाये। अन्यथा स्थिति बिगड़ जाने का भय है।

सेठ साहिब, डाक्टरों की आज्ञानुसार बिस्तर पर लेटे हुए थे। परन्तु उनका जी कुढ़ रहा था। कि रात इसलिए थी। कि हुस्न से अठखेलियाँ, यौवन की मस्तियों, और जवानी की रंगनियों में व्यतीत हो। वह इस तरह व्यतीत हो रही है कि शिकार (सरोजिनी) सामने पड़ा है। मगर शेर मर्द, (सेठसाहिब) उसे दुःख और हसरत से देखने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकता। क्या हकीमों की बूटियाँ, वैद्यों की सुनहरी रूपैली गोलियाँ और डाक्टरों के इन्जैक्शन इसी दिन के लिये अधिक से अधिक मूल्य पर प्राप्त किए गए थे? यदि आज की आशाओं भरी रात इसी तरह, मनहूस की तरह कटनी थी। तो वह रुपया क्यों व्यर्थ खोया? इससे बढ़कर दुख, हसरत, नाकामी की कोई बात हो सकती है।

दिन गिने जाते हैं जिस दिन के लिए वह दिन आया। और इस तरह बीता जा रहा है। न कोई उमंगे हैं न मस्ती। क्या यह शयन गृह इसीलिये सजाया गया था कि आँखें हुस्न का नजारा करें। दिल हुस्न के मन्दिर में सर झुकाये, परन्तु हाथों में हथकड़ियाँ और पाँव में बेड़ियाँ पड़ जायें। सेठ साहिब चुपचाप पड़े थे और यही सोच रहे थे।

सरोजिनी अब स्वप्न से जाग चुकी थी। उसका स्वर्ग एक दिन में बना और एक पल में नरक बन गया वह सोच रही थी। आशाओं और खुशियों की फुलवाड़ी देखते देखते कैसे झुलस गई। वह कौनसी आग थी, जिसने इसे जला डाला? फिर मैं क्यों न जल गई उसी के साथ? जब दिल सुलग रहा हो। आँखें बरसाती नदी की भाँति उमड़ रही हों,

तो जीने का आनन्द क्या ? जहाँ मैं बेहोश हुई थी। वहां मर ही क्यों न गई ?

अकस्मात आँखों के सामने जीनत का चित्र उभरा. आज उसकी आँखों में खुशी चमक रही थी। चेहरा फूल की तरह खिला हुआ था। जैसे उसे ससार की सबसे बड़ी निधि मिल गई हो। वह मुस्कराई और उसने कहा—'क्यों सरजिनी।'

'क्या है जीनत।'

'मेरी आह का नतीजा देख लिया।'

'हाँ देख लिया. अब तो खुश हो तुम।'

'बहुत खुश।'

'मेरा दिल जलाके, मेरा सुख छीन कर। मेरी जिन्दगी बर्बाद करके।'

'फिर क्या बात है। बातें क्यों बनाती हो, सीधे मुँह से क्यों नहीं कहती कि यही बात है।'

'बात यह है कि मैंने तुम्हारा दिल जलाया नहीं; अपने दिल को जलने से बचा लिया। तुम्हारा सुख बर्बाद नहीं की। अपने सुख को बर्बाद नहीं होने दिया। तुम्हारी जिदगी को तबाह नहीं किया, हाँ अपनी जिन्दगी को तबाही से दूर कर लाई।'

'अच्छा यही सही, लेकिन तुम यहाँ आई क्यों हो।'

'आ गई यूँ ही।'

'यूँ ही भी कोई आती है।'

'मैं जो चली आई।'

'तुम मेरा मज़ाक उड़ाने आई हो। मेरी नाकामी पर ठहाका लगाने आयी हो। क्यों है न यही बात।'

जीनत की आँखों में आंसू भर आए। वह रोने लगी। उसने रोते रोते कहा—'सरोजिनी अब बस करो।'

'क्या बस करूँ ? क्या किया है मैंने ?'

'मेरा दिल यह प्रहार नहीं सहन कर सकेगा । अब चुप रहो तुम ।'

'अच्छा मैं चुप हुई जाती हूँ । लेकिन एक बात तो बताओ ?'

'पूछो !'

'मेरे दिल को, मेरी आँखों को, मेरी आत्मा को, क्योंकर चुप करा सकोगी तुम !'

'सरोजिनी मैं तेरी हंसी उड़ाने नहीं आई, तेरे साथ मिल बैठ कर रोने आई हूँ, सच ।'

'यह मेहरबानी क्यों है ।'

'मेरा तेरा दुख एक है, एक ही घाव है जो तेरे दिल पर भी है और मेरे दिल पर भी, उतना ही गहरा, उतना ही बड़ा ।'

'यह क्या कहने लगी तुम !'

'सरोजिनी मैं झूठ नहीं कहती ।'

'मैं कैसे जानूँ तुम्हारा सच !'

'औरत, औरत के दिल को पढ़ सकती है, 'यह ले तेरे सामने एक पुस्तक की भाँति मेरा दिल खुला है । पढ़ ले इसे और देख ले यह कितना फटा-फटा नुचा-नुचा है ।'

'कैसे ।'

'तू इतनी भोली क्यों है पगली ' आज तू सेठ साहिब के पिंजरे में कैद कर दी गई, कल मैं किसी आदमी के महल में बन्द कर दी जाऊँगी ।' न तुम परवेज को प्राप्त कर सकी, न मैं ही प्राप्त कर सकूँगी ।

'मैं तो विवश हूँ, परन्तु तुम तो विवश नहीं हो ।'

'बना लो न उसे अपना ।'

'नहीं बना सकती।'

'क्यों।'

'खूबसूरत जो हूँ।'

'तो।'

'यही तो मेरा अवगुण है।'

'हां मैं समझ गई, परवेज खूबसूरती से चिढ़ता है, हुस्न के आगे गर्दन झुकाना अपना अपमान समझता है, वह हुस्न से न भीख माँग सकता है, न हुस्न को भीख दे सकता है—वह इतना ऊँचा है कि उस तक आकाश के तारे भी नहीं पहुँच सकते।' चाँद भी नहीं पहुँच सकता, सूर्य भी नहीं पहुँच सकता।'

'अब भी तू मुझ से रूठी रहेगी।' अब तू नहीं मानेगी कि मेरा तेरा दुख एक है, मेरे और तेरे दिल का घाव भी एक है।'

'हाँ मान लिया, परन्तु एक बात है जिसमें तू मुझ से बढ़ी हुई है।'

'कौन सी बात है।'

'मैं परवेज को पा न सकी, और अब उसकी सेवा के लिए भी जीवन भर के लिए वंचित हो गई, तू भी उसे पा नहीं सकेगी, परन्तु उसकी सेवा करके अपने दिल को शान्ति तो दे सकती हो।'

'नहीं सरोजिनी यह भी नहीं हो सकता।'

'क्यों। क्यों नहीं हो सकता!'

'इसलिए कि मैं भी खुददार हूँ।'

'मैं नहीं समझी यह बात!'

'मेरे दिल के टुकड़े-टुकड़े क्यों न हो जायें। मैं मर क्यों न जाऊं लेकिन जो मुझसे खिचता हो, मैं उसकी ओर बढ़ नहीं सकती, उससे मुहब्बत और दया की भीख नहीं माँग सकती, यह हो सकता था कि वह मेरी ओर एक पग बढ़ता, और मैं उसकी ओर दस पग बढ़ती, परन्तु नहीं हो सकता, कि वह पीछे हटता रहे, और मैं सर झुकाकर उसके सामने

अपना दिल न्यौछावर करती रहूँ समझ गयी सरोजिनी।'

'हां समझ गई, जानती हूँ तू भी जिदी है।' सरोजिनी।

सरोजिनी स्वप्न में जीनत से बातें कर रही थी, कि शेर की गर्जन की भाँति सेठ साहिब खाँसे, वह चौंक पड़ी। फिर उसने आँखें बन्द की तो जीनत जा चुकी थी।

१७

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इन्सान का स्वभाव और विचार नहीं बदल सकते। यह विचार कहाँ तक ठीक है, परन्तु कभी इन्सान के जीवन में ऐसी घटनाएँ आ जाती हैं जो इन्सान के स्वभाव और विचारों में क्रान्ति उत्पन्न कर देती हैं। जीनत की यह दशा थी कि तनिक दिल को ठेस लगी और उसकी आँखें आँसुओं से डबडबा आईं। कोई बात अच्छी लगी और उसके सुरीले कहकहों से वातावरण गूंज उठा। परन्तु परवेज़ का पत्र पढ़ने के पश्चात् उसकी विचारधारा में क्रान्ति हो उठी। उसका स्वभाव और विचार बदल गए। अकस्मात वह गम्भीर हो उठी और उसकी गम्भीरता इतनी बढ़ गई कि माँ-बाप को भी आश्चर्य होता था, उसके अधर मुस्कराना भूल चुके थे, उसकी आँखों के आँसू न जाने कहाँ लोप हो गए थे। बड़े से बड़ा शोक समाचार उसे रुला नहीं सकता था। बड़ी से बड़ी प्रसन्नता की घटना उसके अधरों पर मुस्कराहट नहीं उत्पन्न कर सकती थी। वह न हँसती थी, न रोती थी। वह एक चलती-फिरती बेजान मूर्ति बन कर रह गई थी। उसके इस परिवर्तन पर सब हैरान थे। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

वह कालेज जाती थी, पूरी दिलचस्पी और शौक से पढ़ती थी।

लेकिन गुमसुम, किसी से अनावश्यक बात वह करती ही न थी। अपनी सहेलियों के यहाँ जाना भी उसने बन्द कर दिया था। अब वह किसी की मित्र न रही थी। कालेज में पार्टियाँ हों, जल्से हों, कवि-सम्मेलन हों नाटक हों, ज़ीनत सबसे अलग उसका काम अब केवल यह रह गया था कि निश्चित समय पर कालेज आए और कालेज बन्द होते ही घर चली जाए। घर जाए और अपने कमरे में या तो पुस्तकें पढ़ने लगे; या कुछ सोचती रहे। रेडियो से उसे बड़ी दिलचस्पी थी। लेकिन वह एक बिन स्वर का संगीत बन कर रह गई थी। कभी भूले से भी उसे हाथ न लगाती थी। कमरे की सफ़ाई से उसे बड़ा लगाव था। परन्तु अब किसी नौकर का जी चाहा, उसने आकर साफ कर दिया और अगर न ध्यान आया किसी को तो दो-दो दिन सफाई नहीं हो रही है। यदि कोई आ कर कमरा साफ़ कर जाए तो ज़ीनत की ओर से प्रशंसा नहीं मिलेगी। और न करे तो किसी को डांट न पड़ेगी। मां ने एक-दो बार पूछा भी कि आखिर यह बात क्या है ? मगर वह मुस्करा कर खामोश हो गई। बाप ने पूछा—बेटा चुप-चुप क्यों हो ? कोई बात हो तो हमें बताओ हम तुम्हारी सहायता करें। वह मुस्कराई और 'अब्बाजान क्या बात होती ?' कह कर मौन हो गई।

एक दिन मुमताज़ ने कालेज से वापसी में उसे पकड़ लिया, और कहने लगी—'अब बच कर कहाँ जाएगी ?'

(मुस्करा कर) 'घर।'

'मैं भी चलूंगी तुम्हारे घर।'

'सर आँखों पर चलो रोका किसने है ?'

'बातें न बनाओ चलो।'

घर पहुँचने के पश्चात मुमताज़ ने बड़ी गम्भीरता से कहा :

'हम कुछ बातें करना चाहते हैं तुम से।'

'कहिए, मैं बड़े ध्यान से सुनूंगी।' ज़ीनत ने कहा।

'तुम चुप-चुप क्यों रहती हो ?'

'तुम बक-बक क्यों करती हो। वह तुम्हारी आदत है यह मेरी।'

'यह कोई कारण नहीं। साफ-साफ कहो अन्यथा अदालत तुम्हें कठोर दण्ड देगी ?'

'अदालत का काम न्याय है अन्याय नहीं।'

'यह जानते हैं हम।'

'फिर मुझसे अन्याय क्यों किया जा रहा है ?'

'यह अन्याय नहीं न्याय है।'

'जी नहीं यह अन्याय है।'

'क्यों ?' कैसे ?'

'मुझ से वह बात क्यों पूछी जा रही है जिसे मैं स्वयं भी नहीं जानती।'

अर्थात, तुम्हें भी नहीं मालूम कि तुम चुपचाप क्यों रहती हो ?'

'नहीं।'

'अपने उत्तर पर फिर एक बार विचार कर लो।'

'विचार कर के ही कह रही हूँ।'

'तो अब हमें दूसरे अपराधी को ही बुलाना पड़ेगा।'

'वह कौन है हजूर।'

'परवेज।'

यह सुनते ही जीनत का चेहरा सफेद पड़ गया। लेकिन शीघ्र ही इसने अपने आपको संभाल लिया और कहा—

'लेकिन वह अपराधी छिपा हुआ है।'

'कहाँ गया।'

'यह अदालत ही को मालूम होगा।'

'वह अपने ही घर में छिपा बैठा है। इसे इसी समय बुलाया जाये !'

'और अगर इसने अदालत में उपस्थित होने से इन्कार कर दिया।'

'तो इसे कठोर दण्ड दिया जाएगा।

जीनत कमरे से बाहिर चली गई थोड़ी देर बाद इसने आ कर कहा—

'वह उपस्थित होने से इन्कार करता है हजूर ।'

'क्या कहता है वह ?'

'इसके शब्द दोहराने का साहस मुझ में नहीं है, मी लार्ड !'

'फिर क्या किया जाये ?'

'इसे फांसी की सजा दी जाए । शीघ्र ही इसे फांसी के तख्ते पर लटका दिया जाय । यह इसकी कम से कम सजा है ।'

'आज्ञा का पालन किया जाएगा हजूर ।'

जीनत फिर बाहिर चली गई । दो मिन्ट पश्चात वापिस आ कर इसने कहा—'आज्ञा का पालन कर दिया गया मी लार्ड ।'

शीघ्र ही मुमताज ने अदालत का यह गम्भीर रूप छोड़ दिया और कहा—'ऐ है बड़ी आई फांसी देने वाली अपने चाहक को फाँसी देगी । यह किसी और को भी नहीं । लो, तनिक इसकी भी सुनो ।'

मुमताज ने यह शब्द कुछ इस प्रकार कहे कि वह स्वयं ही हंस पड़ी और आज कई दिनों के पश्चात पहली बार जीनत भी खिल खिला पड़ी । मुमताज ने बढ़ कर जीनत की बलायें ले लीं । जीनत ने मचल कर कहा—'ऐ वाह ! हटो भी ।'

'समझ लो यह हाथ परवेज के थे ।'

'इतनी ही रीझी हुई हो तो सामने जाकर प्रेम स्वीकार क्यों नहीं कर लेतीं ।'

'रकीब बन जाऊँ ।'

'किस की बनोगी ।'

'तुम्हारी और किस की ।'

'क्यों इसमें मेरा क्या सम्बन्ध ।'

'सच कहना, चाहती तो नहीं हो परवेज को ।'

'जी-नहीं, मैं किसी को नहीं चाहती।'

'परवेज को भी नहीं।'

'किसी को भी नहीं ?'

'सच, बिल्कुल सच ?'

'बिल्कुल सच।'

'जीनत तुम मुझसे मत अड़ो। तुम्हें सम्भवतः मालूम नहीं कि मैं उड़ती चिड़िया को पहचान लेती हूँ। लिफाफा देखकर पत्र का विषय भाँप लेती हूँ। आकृति देखकर आदमी को पहचान लेती हूँ।'

'बड़ी प्रवीण हो गई।'

'और नहीं क्या तुम्हारी तरह।'

'मेरी एक बात मानोगी ?'

'मानने वाली होगी तो मान लेंगे।'

'पढ़ना-लिखना छोड़ दो।'

'क्यों ? बड़ी अच्छी शिक्षा दी।'

'ठण्डी सड़क पर बैठकर लोगों की आकृति देख-देखकर, इनके दिल की बातें बताया करो। बड़ी आय होगी, खूब कमाओगी।'

'एक शर्त है।'

'वह क्या ?'

'तुम भी चलो मेरे साथ ?'

'मैं क्यों चलूँ ?'

'खूब गुजरेगी, जब मिल बैठेंगे दीवाने दो।'

'दीवानी तो तुम हो मैं क्यों हुई।'

'यही तो मैं भी कह रही हूँ।'

'क्या कह रही हो ?'

'दीवानी तुम हो, मैं क्यों हूँ।'

फिर दोनों सहेलियाँ हँस पड़ीं। मुमताज ने कहा—'आज मैं तुमसे हाँ कराये बिना नहीं जाऊंगी।'

'पगली कहीं की, काहे की हाँ।'

'परवेज को चाहती है तू ?'

'अच्छा, चाहती हूँ। तब ?'

'फिर इससे दूर-दूर क्यों रहती है, मिलती क्यों नहीं, इसे प्राप्त करने का प्रयत्न क्यों नहीं करती ?'

'मेरी मर्जी, तुम कौन हो बीच में बोलने वाली।'

'मैं तेरी हमदर्द हूँ, सखी हूँ।'

'धन्यवाद।'

मुमताज का मुस्कराता चेहरा गम्भीर हो गया। उसने कहा—'जीनत !'

'कहो।'

'मुझ से यह तुम्हारी दशा नहीं देखी जाती।'

'क्या दशा है मेरी।'

'तुझे चुप क्यों लग गई है। तू हंसी क्यों नहीं ? बुल-बुल की तरह चहकती क्यों नहीं ? फूल की तरह महकती क्यों नहीं ?

'जीवन में ऐसा भी समय आता है मुमताज।'

'लेकिन मैं ऐसा समय तेरे ऊपर नहीं आने दूँगी।'

'तू दूती बन कर मेरा सन्देशा ले जायेगी कहीं ?'

'हाँ ले जाऊँगी कहो क्यों, वहीं परवेज के पास ?'

मुमताज इन बातों को छोड़ो। कुछ और बातें करो।'

'सच कहती हूँ जीनत मुझ से तेरी यह दशा नहीं देखी जाती, मेरा दिल रोता है तेरे लिये।'

'तुम इसके लिये क्यों रोती हो जो स्वयं अपने लिए नहीं रोता ? इसके लिए क्यों कुढ़ती हो, जिसे अपनी चिन्ता नहीं। इसके पीछे क्यों पड़ी हो।'

जिसकी जिन्दगी के सागर में न तूफान है न शान्ति।'

जिस प्रकार आज पहली बार बहुत दिनों के बाद अभी थोड़ी देर

पहले जीनत मुमताज के सामने हंसी थी। इसी प्रकार आज पहली बार बहुत दिनों के पश्चात इसकी आँखों से आँसू गिरने लगे थे।

मुमताज को हंसते और मजाक करते, छेड़ने और बनाने के अतिरिक्त, कोई अन्य कार्य ही नहीं था। वह क्या जाने रोना किसे कहते हैं। और आँसू कैसे बहते है, लेकिन जीनत की यह दशा देख वह अपने आँसुओं को बहने से न रोक सकी, ऐसा प्रतीत होता था, आज बहुत दिनों के पश्चात दोनों का बोझ आँसुओं के रूप में बह रहा था। बहा चला जा रहा था।

मुमताज जीनत के दिल की बात न सुन सकी थी। लेकिन दोनों की आँखों से बहते हुए आँसुओं ने बहुत कुछ कह दिया, जान लिया। पहचान लिया, जो कुछ पहले जाना था। पहले समझा था, आज वह स्पष्ट हो गया था।

बड़ी देर तक दोनों इधर-उधर की बातें करती रही। फिर जब रात बढ़ने लगी तो मुमताज ने जाने की आज्ञा मांगी, और जीनत की कार में बैठकर घर की ओर चल दी।

१८

परवेज को कालेज में वापिस लाने के बहुत प्रयत्न किये परन्तु वह सफल न हुये, वह अपने निर्णय पर पर्वत की भान्ति जमा हुआ था। उसकी आय का एकमात्र साधन कालेज का वेतन था, वह बन्द हो चुका था उसने निश्चय कर लिया था कि वह अब कहीं नौकरी नहीं करेगा, वह बहुत विद्वान था। जितना बड़ा दार्शनिक था, उससे बड़ा साहित्यकार भी था। कालेज में व्यस्त रहने के कारण उसे पुस्तकें लिखने का समय बहुत कम मिलता था, फिर भी जो कुछ लिख लेता था। वह साहित्यिक क्षेत्र में बड़े सम्मान से देखा जाता था। अब कालेज से उसे छुट्टी मिली तो वह पुस्तकें लिखने में लग गया।

प्रकाशक बहुत समय से उसकी मिन्नतें कर रहे थे। और बहुत आसान शर्तों पर पुस्तकें छापने का जाल बिछाते थे। परन्तु वह प्रकाशकों को निराश कर देता था। अब उसकी पुस्तकें छपने लगी कालेज से कहीं अधिक आय अब इसे पुस्तकों से होने लगी उसकी नई पुस्तक "परवाजे-ए-तख्खय्यल" अभी-अभी प्रकाशित हुई थी, वह उसके कुछ अनुभवों और साहित्यिक विषयों का संग्रह थी। यह रचना हाथों हाथ ली गई यह पुस्तक कहीं मुम्ताज के हाथ भी लग गयी। वह पढ़ने बैठी तो रात के दो बजे तक पढ़ती रही। साहित्य आकर्षण ऐसा था। उसका जी चाहता। लिखने वाले का हाथ चूम ले, विचार ऐसे थे। जिन से वह उलझती थी। झुँझलाती थी। इस पुस्तक में एक विषय था सुन्दरता के बारे में वह परवेज के विचारों से कुछ कुछ परिचित थी। वह जानती थी, सुन्दरता और यौवन के विषय में उसके विचार कितने कठोर हैं। फिर भी वह उत्सुकता के साथ पढ़ने लगी, पढ़ते-पढ़ते उसे इतना क्रोध आया कि यदि कहीं परवेज इस समय उसके सामने होता तो वह उससे लड़ पड़ती। इस विषय में उसने बड़े विस्तृत रूप से विचार प्रकट किये थे उसने लिखा था अपनी इस रचना में, कि सुन्दरता सबसे बड़ी झगड़े की जड़ है मर्द की सबसे बड़ी कमजोरी मानवता के माथे पर कलंक का टीका, अगर सुन्दरता न होती, हुस्न न होता तो यह संसार स्वर्ग होता, सुख और चैन का लेकिन सभी झगड़े इसी सुन्दरता के उठाए हुए हैं। यह जहां पहुँच जाती हैं दिलों में हलचल मचा देती है। तूफान उठा देती है। यह गद्दार होती है, बेवफा होती है और छिछोरी होती है। यह बिकती है स्वयं को बेचती है। यह धोखा देती है धोखा खाती नहीं, यह सफल शिकारी की भांति दिलों का शिकार करती हैं और काबू कर लेने के पश्चात अपने शिकार से पूछती भी नहीं कि कैसी गुजर रही है? इसकी एक आँख में जादू होता है दूसरी में धोखा, इसका एक हाथ सोने का है एक चाँदी का। इसका दिल हीरे की कनी है, जिसकी जगमगाहट से इन्कार नहीं किया जा सकता, परन्तु यदि किसी

के दिल में उतर जाये तो उसको समाप्त ही कर दे। यह इन्सान को सुस्त बना देती है। मजनू बना देती है, निकम्मा कर देती है इसके कारण ऐश्वर्यमयी भावनायें उत्पन्न होती है यह कामदेव को भड़काती है और आत्मा की शान्ति छीन लेती है, यह ध्वन्स करती है निर्माण नहीं विष है अमृत नहीं झगड़ा है, सुधार नहीं अन्याय है न्याय नहीं, यह नारी समाज के अतिरिक्त प्रत्येक आँख को मस्त, और प्रत्येक दिल को अपना दास बना लेना चाहती है, इसका लोभ इतना बढ़ा हुआ है कि बड़ी विजय पर भी इसे सन्तोष नहीं होता, यह विजयी से राजा राजा से देवता और देवता से भगवान बन जाना चाहती है। यदि भगवान से बड़ी कोई वस्तु है तो यह उसतक पहुँचने के लिए भी ऐड़ी चोटी का जोर लगा देती है। उसका वाह्य रूप जितना प्रकाशमय और चमकीला है, आन्तरिक उतना ही काला और अन्धकारमय इसकी आकृति जितनी चमकदार है, गुण इतने ही मन्द है, पर कोई नियम नहीं अभिमान है, उच्चता नहीं; यह इस योग्य नहीं कीं इसकी दासता स्वीकार की जाय, यह इसकी अधिकारिण नहीं कि इसे घर में रखा जाय, इसका अपनत्व अभिमान का इसके धोखे और चालबाजी का एक ही उपचार है, यह कि इसे ठुकरा दिया जाये, इससे दूर रहा जाय।

इससे पूर्व सुन्दरता के विरूध परवेज ने एक सभा में अपने विचार प्रकट किये थे, जिस पर वह झगड़ा उठा था जिस का परिणाम यह हुआ कि वह कालेज से अलग हो गया, अब जो विचार उसने प्रकट किये थे। वह तो पहले से भी अधिक आग लगाने वाले, अपमान-जनक, और असहनीय थे।

मुमताज अपने दिल में सोच रही थी कि यदि किसी कालेज से परवेज का अब भी कोई सम्बन्ध होता तो वह अवश्य उसके विरुध मोर्चा लगाती। परन्तु यह मुश्किल थी कि वह कालेज से पृथक हो चुका था। अब यदि सारा कालेज उसका विरोधी हो जाये, शत्रु बन जाये तो उस का बाल भी बाँका नहीं कर सकता।

प्रकाशक पर भी मुमताज को बहुत क्रोध आ रहा था। उसका वश चलता तो प्रकाशक का मुँह नोच लेती उससे सारी पुस्तकें छीन लेती, और चौराहे पर रखकर आग लगा देती, वह सोच रही थी। यह परवेज आदमी नहीं, खतरनाक पागल है। भगवान ने उसको लेखनी की शक्ति दी है प्रतिभा दी है। लेकिन अपने दिमाग़ को, लेखनी को कितने गलत काम पर लगाये हुए हैं। और जनता भी कितनी अन्धी हैं कि ऐसे दीवाने के विचारों पर सर धुनती है और प्रकाशक भी कितने लोभी हैं, कि चन्द सिक्कों के लिए एसी पुस्तकें छाप देते हैं जिस से देश और धर्म को लाभ कुछ नहीं पहुँचता, हानि बहुत अधिक पहुँच सकती है।

कभी पुस्तक पढ़ने लगती कभी बन्द कर देती, कभी कुछ सोचने लगती कभी फिर पृष्ठ पलटने लगती सारी रात इसी उधड़े बुने में कट गई, लाख-लाख सोने का प्रयत्न किया। परन्तु नीन्द नहीं आयी अब तक वह परवेज की बातों पर हंसती थी, परन्तु आज उसे वास्तव में बड़ा क्रोध आ रहा था, सम्भवतः इसलिए और अधिक की इस निबन्ध का संकेत सीधा जीनत की ओर था उसका स्पष्ट अर्थ यह था कि वह जीनत को ठुकरा रहा था उसका अपमान कर रहा था। और उसकी आँखों के सामने जीनत का चित्र नाचने लगता था वही भोला-भाला चेहरा, वही डबडबाई हुई आंखें वही खामोशी उसे जीनत पर भी क्रोध आ रहा था, कि क्यों चाहती है ऐसे सिर फिरे को, वह अपना दिल तोलती थी वह अनुभव करती थी कि यदि मैं होती जीनत के स्थान पर तो ऐसा मजा चखाती दार्शनिक महोदय को, कि उनकी तबीयत राह पर आ जाती, भला यह कोई योग्यता है कि लोगों के दिल अपने पाँव तले रौन्दते फिरो, स्वयं सुन्दर और जवान बने रहो और दूसरे सुन्दर और जवान चेहरों को देख-देख कर जलो, यह जलना नहीं तो और क्या है ? कि सिरे से सुन्दरता ही न पसन्द हो जनाब को, नपसन्द ही नही, घृणा करते है जहाँ पनाह सुन्दरता से पूछिये कौन हसीन है

जो आपके पीछे हाथ बान्धे घूम रहा है ? हुस्न फरेबी है धोखेबाज है, जालिम है, झगड़े की जड़ है विषमय है। मानवता के माथे पर कलंक का टीका है, स्वयं बड़े भोले-भाले बड़े नेक, बड़े न्यायप्रिय। वाह भई यह भी अच्छी रही—यही सोचते-सोचते उसे नींद आ गई, और वह सो गयी।

१६

प्रातः जब मुमताज सो कर उठी, तो उसके हृदय और मस्तिष्क पर परवेज के सुन्दरता सम्बन्धी विचार पूरी तरह छाये हुये थे। वह कालेज पहुंची तो उसने देखा जीनत के हाथ में भी वही पुस्तक है उसने पूछा—'पढ़ डाली यह पुस्तक ?'

'थोड़ी सी बाकी है।'

'कौन-कौन से विषय पढ़े ?'

'बहुत से अब नाम क्या गिनवाऊँ ?'

'सुन्दरता वाला अध्याय पढ़ा ?'

'हां पढ़ लिया वह भी।'

'पसन्द आया।'

'बहुत, कितनी सच्ची बातें लिखी हैं।'

जीनत ने यह कह तो दिया, लेकिन इसके सीने पर एक घूँसा सा लगा। मुमताज अनुभव कर रही थी कि जीनत बड़ी गम्भीर और उदास है। इसका विचार था कि यह परवेज के विचारों का ही परिणाम है। इसे और बेचैन देखकर मुमताज का दुख और बढ़ गया। वह जीनत को धैर्य बन्धाती हुई बोली—'सुनती हो जीनत।'

'कहो बहरी तो नहीं हूँ।'

'हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और।'

'हाँ होते होंगे।'

'तुम मेरा मतलब नहीं समझी।'

'तो समझा दो।'

'असली धोखेबाज यह मर्द होते हैं।'

'होते होंगे।'

'जो आदमी जितना शरीफ बने, समझ लो पहले दर्जे का बदमाश है। जो जितना अधिक सुन्दरता से भागे, समझलो सौन्दर्य प्रेमी है।'

'समझ लिया।'

'दिखा दूंगी एक दिन तुझे परवेज़ साहिब को हुस्न की चौखट पर सिर झुकाते हुए।'

'दिखा देना अवश्य देखेंगे।'

आज जीनत बड़ी उदास सी थी। वह कालेज में नहीं ठहरी, घर चली गई। जीनत के चले जाने के बाद मुमताज का भी जी नही लगा, वह भी चली गई। लेकिन घर जाते-जाते न जाने इसे क्या विचार आया कि वह उस प्रकाशक के पास जाने को मुड़ी जिसके यहाँ से परवेज की पुस्तक प्रकाशित हुई थी। वहाँ जा कर इसने पूछा—'यहाँ का मालिक कौन है ?'

'क्या कीजियेगा ?' कर्मचारी ने पूछा।

मिलना है इनसे।'

कर्मचारी ने एक केबिन की ओर संकेत कर दिया, जहाँ प्रकाशक 'मन्ज़ूर जमाल' बैठे थे। मुमताज इसके सामने पहुँची। प्रकाशक ने इसे सर से पांव तक देखा। फिर एक कुर्सी की ओर सकेत करते हुए नम्रता पूर्वक कहा :

'तशरीफ रखिये—मुझसे कोई काम है आपको ?'

'जी हां बैठती हूँ। आप ही से बहुत जरूरी काम है मुझे।'

'ओ आप कुछ आज्ञा तो दें। कुछ कहें, फिर देखियगा कि······

'होश की बातें कीजिये, आपने मुझे समझा क्या है ?'

(घबड़ा कर) 'मुझसे कुछ गलती हो गई क्या ?'

'जी हां बहुत बड़ी ।'

'मैं क्षमा चाहता हूँ ।'

'आप को अब तक यह नहीं मालूम कि एक शरीफ औरत से किस तरह बातचीत की जाती है ।

'जी क्यों नहीं ?'

'आप अपनी बहिन, माँ, बेटी से इस तरह बातचीत करते हैं—आप इस योग्य हैं कि आपके प्रकाशन का बाईकाट किया जाये; मैं मुकदमा अवश्य चलाऊंगी !'

अब तो प्रकाशक महोदय बहुत घबड़ाये। उन्होंने गिड़गिड़ा कर कहा—'क्षमा कर दीजिये हो गई गलती ।'

'यह पुस्तक आपने छापी है ।' मुमताज ने पुस्तक दिखाई ।

'जी हाँ परवेज साहिब की पुस्तक है हाथों हाथ बिक रही है ।'

'आपने पढ़ी हैं यह पुस्तक ।'

'जी-जी, नहीं ।'

'क्यों ?'

'इतना हमारे पास समय कहाँ ? प्रसिद्ध लेखकों की पुस्तकें हम बिना पढ़े छाप देते हैं ।'

'आप को रुपया कमाने से मतलब है। इससे मतलब नहीं कि क्या छाप रहे हैं आप ? इसका प्रभाव जनता पर क्या पड़ेगा ?'

'जी-जी, यह बात तो नहीं है ।'

'फिर क्या बात है ? कहिये ।'

'पुस्तक तो बढ़ी अच्छी है ।'

'अच्छी है यह पुस्तक (कड़क कर) तनिक यह निबन्ध तो पढ़िये ।'

प्रकाशक महोदय सुन्दरता सम्बन्धी विचार पढ़ने लगे—फिर पुस्तक मुमताज को लौटाते हुए बोले —'जी हां पढ़ लिया मैंने ।'

'इसे प्रकाशित नहीं होना चाहिये था ।'

'क्यों नहीं होना चाहिए था ?'

'इसमें औरत के हुस्न की जो निन्दा की गई है क्या आप उसे सहन कर लेंगे ?'

'जी……'

इतने में परवेज आता दिखाई दिया। प्रकाशक महोदय ने कहा—'लीजिये परवेज साहिब आ गये। आप इन्हीं से पूछ लीजिये।'

परवेज ने मुमताज को देखते ही कहा—

'मुमताज तुम ?'

'जी।' उसने शिष्टाचार से कहा।

'साहिब यह तो बड़ी नाराज है।' प्रकाशक ने कहा।

'क्यों मुमताज क्यों नाराज हो तुम।' परवेज ने पूछा।

प्रकाशक महोदय किसी कार्य से अपने गोदाम चले गये। मुमताज और परवेज में बातचीत होने लगी। मुमताज ने आंखें झुकाये हुए उत्तर दिया—'मुझे आप से ऐसी आशा नहीं थी।'

'क्या हुआ कुछ कहो तो ?'

'सुन्दरता के सम्बन्ध में आपने क्या लिखा है—'कभी सोचा आपने ?'

'तो क्या तुम यह समझती हो बिना सोचे समझे ही मैं लिख डालता हूं।'

'इसके परिणाम क्या होंगे यह भी सोचा कभी आपने।'

'क्या होंगे परिणाम ?'

'कितने दिल टूटेंगे, कितनी आंखों से आंसू बहेंगे।'

'कितने दिल टूटेंगे, कितनी आंखों से आंसू बहेंगे क्या मतलब ?'

'मैंने स्वयं अपनी आंखों से देखा है जीनत यह निबन्ध पढ़कर सर से पाँव तक आँसू बन गई वह वैसे ही खामोश और चुपचाप रहती थी, जाने क्या हो गया है इसे ? और फिर इस निबन्ध ने तो जलती आग पर तेल का काम किया है'

'आखिर क्यों ?'

'आप कुछ नहीं समझते मैं आपको—किस तरह समझा सकती हूं।

'मैंने जीनत पर तो कुछ नहीं लिखा।'

'हाँ लेकिन आप ने इसका दिल अवश्य तोड़ा है।'

'मैंने, नहीं मुमताज मुझे गलत मत समझो।'

'लेकिन आप गलत हैं जो ?'

'वह किस तरह ?'

'वह मैं नहीं बता सकती। आप को सब कुछ मालूम है आप बनते हैं।'

परवेज ने एक कहकहा लगाया वह कुछ कहने वाला था कि मुमताज उठी और इसने कहा—'अब मैं जाती हूं।' इतना कह वह परवेज के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना चली गई।

इसके जाते ही प्रकाशक महोदय आ गये। यह बड़े रंगीले आदमी थे, मुमताज को इधर-उधर की लड़की समझ कर परचाने का प्रयत्न कर बैठे। इसने डांटा तो सहम गये। वह परवेज के सामने से इसलिये हट गये कि कहीं मुमताज इनकी बात न छेड़ बैठे और लेने के देने पड़ जायें। जब इन्होंने देख लिया कि मुमताज जा चुकी है। तब अपने गोदाम से बाहिर आये, फिर भी डर रहे थे कि कहीं परवेज कुछ पूछ न बैठे कहीं इसे मालूम न हो गया हो।

परवेज ने हिसाब-किताब देखा रायलटी के रुपये लिये और अपने घर की ओर चल दिया। मुमताज की बातें इसके कानों में गूंजती रही जीनत का चित्र इसकी आँखों के सम्मुख फिरता रहा।

२०

सरोजिनी ने अब अपने दिल को समझा लिया था। जो मिल नहीं सका, अब मिल भी नहीं सकता। जो मिल गया है जीवन इसी के साथ बिताना है। इसके दिल में अब भी ज्वालामुखी सुलग रहा था। लेकिन चेहरा फूल की तरह खिला हुआ था। वह सेठ साहिब से हँसती, बोलती थी इनकी सेवा करती थी। लेकिन सेठ साहिब की आँखों से ओझल होते ही वह खोई-खोई सी रहने लगी थी। जैसे कुछ सोच रही हो, जैसे कोई आगे-आगे भागा जा रहा हो, और वह पीछा करते-करते थक सी गई हो। निढाल सी हो गई हो। दिल आगे बढ़ने का धैर्य बन्धाता हो लेकिन पाँव लहुलूहान हो चुके हों, शक्ति न रह गई हो आगे बढ़ने की, कदम उठाने की, आगे की ओर देखने की भी, ऐसा आदमी जहाँ पर रहता है, और वहीं हंस बोल कर जीवन व्यतीत कर देना चाहता है। यही दशा थी ठीक सरोजिनी की अब।

सेठ साहिब सरोजिनी का दिल नहीं देखते थे। चेहरा देखते थे, इनकी दृष्टि दिल तक पहुंच भी नहीं सकती थी। इनकी भाँति इनकी आंखें भी तो बूढ़ी थी और कमजोर भी। इनकी दृष्टि केवल चेहरे तक पहुंच सकती थी। वह दिल देख सकते; तो देखते वह सुलग कर समाप्त हो चुका था, राख बन चुका था। अब इसमें कुछ भी नहीं रह गया था। लेकिन वह चेहरा देखते थे, जो फूल की तरह खिला हुआ था। रंग रूप था, अधर मुस्कराते थे।

यही देखकर वह फूल की तरह खिल जाते थे। महक उठते थे, चहकने लगते थे उन्हें यह नहीं मालूम था। कि हरे-भरे पहाड़ के नीचे गर्म और उबलता हुआ लावा भी होता है यह जानने के लिए उन्हें अवश्यकता ही क्या थी उनका पीला, बदसूरत और बूढ़ा चेहरा जब

जवानों की चंचलता उत्पन्न करके, सरोजिनी को उभारने और उकसाने का प्रयत्न करता था तो उसका दिल रोने लगता था परन्तु हंस-हंसकर सेठ साहिब की यह बात सहन कर लेती थी, यह चर्के खा लेती थी, अपने घावों पर नमक छिड़कवा लेती थी, वह यह सब इसलिए करती थी कि मैं प्रसन्न नहीं रह सकती परन्तु मेरे द्वारा यदि दूसरा प्रसन्न हो सकता है, तो क्यों न मैं उसे प्रसन्न होने दूं ?

एक रोज, सेठ साहिब मौज में थे उन्होंने कहा—'सरोजिनी, चलो सिनेमा हो आये।'

'चलिये, हो आयें सिनेमा।'

'चलते हैं—परन्तु मैं पूछता हूँ तुम स्वयं कभी कोई फरमाईश क्यों नहीं करती हो ? तुम्हारा जी नहीं चाहता, सिनेमा जाने के लिए, मनोरन्जन करने के लिये, जीवन का आनन्द उठाने के लिए ?'

उसका जी तो चाहा कह दे, यह घर कब सिनेमा से कम है ? आप के होते हुए किसी दूसरे मनोरन्जन की क्या अवश्यकता है ? और जीवन का आनन्द उठाने का, जवानों को इतना शौक नहीं होता जितना पूँजीपति बूढ़ों को, परन्तु दिल की बात वह जबान पर न ला सकी, उसने कहा—'आप मुझे अवसर ही कब देते हैं कि मैं कोई अनुरोध करूं जो बात मेरे दिल में होती है, वह आपकी जबान पर होती है। आज मैं सोच रही थी कि अवश्य कहूँगी सिनेमा चलने के लिये, परन्तु देखिये आज भी मैं हार गई, और आप बाजी ले गये। बताइये गलत कहती हूँ ?'

सेठ साहिब यह बातें सुन कर झूम उठे। लोगों को अपनी जवानी पर नाज होता है। उन्हें अपने बुढ़ापे पर नाज था वह अपने मित्रों में बड़े गर्व से कहा करते थे। बूढ़ा हो तो ऐसा जैसा कि मैं हूँ, जवान दुल्हन ब्याह कर लाया, और ठाठ से जिन्दगी व्यतीत कर रहा हूँ, सरोजिनी की यह बातें सुनकर उनकी गर्व भावना कुछ और बढ़ गई उन्होंने हंसकर कहा—'सच कहती हो सरोजिनी, दिल से दिल को राह होती हैं।'

'जी और क्या ?'

'अच्छा एक बात बताओ सरोजिनी ।'

'पूछिये ?'

'मेरा दिल तो कहता है जितना में तुम्हें प्रसन्न रख सकता हूँ । कोई नहीं रख सकता यदि तुम्हारा विवाह किसी दूसरे से हुआ होता तो क्या करती तुम ?'

सरोजिनी ने गम्भीरता से कहा—'भाग आती आप के पास ।'

वह इस बारीक ताने को नहीं समझ सके, और अधिक इतरा गये उन्होंने कहा—'मैं भी सच कहता हूँ, तुम्हें भगाये बिना न रहता ।'

सरोजिनी हंसने लगी, वह हँसते हंसते लोट गये ।

दोनों ने तैयारियाँ की और सिनेमा देखने चल दिये । लेकिन सिनेमा में एक विचित्र घटना घटी, जिस का सेठ साहिब पर बड़ा प्रभाव पड़ा, हुआ यह कि ऐसा चित्र दिखाया जा रहा था । जिसमें दिखाया गया था, कि बूढ़े ने एक नौजवान लड़की से शादी की, वह उसे सम्भाल नहीं सका । परिणाम यह हुआ कि उसने तांक झांक करनी शुरू कर दी और एक दिन अवसर पाकर वह मुहल्ले के एक नवयुवक के साथ भाग गई, कहां तो सेठ साहिब सरोजिनी को भगा लेने की बात कर रहे थे । कहां यह दृश्य देखकर, उनका दिल धड़कने लगा वह कुछ सोचने लगे, उनका जी चाह रहा था, कि अपने सफेद बालों को नोच कर फेंक दें, अपने बूढ़े चेहरे पर ऐसा मेकअप करें कि उन्हें कोई बूढ़ा न कह सके, वह सोच रहे थे कि सरोजिनी पर इस दृश्य का क्या प्रभाव पड़ा होगा । कहीं वह भी तो नहीं भाग जायेगी किसी के साथ ? वह भी तो आँख नहीं लड़ाया करती मुहल्ले के नौजवानों से मेरी पीठ पीछे, कहीं इसमें भी तो तांक झांक की आदत नहीं पड़ गई है । परन्तु सरोजिनी के चेहरे पर इस बात के चिन्ह नहीं थे जिससे यह मालूम हो सके कि इस पर क्या प्रभाव पड़ा ? वह पत्थर

की मूर्ति की भाँति चुपचाप बैठी थी। चेहरे पर चित्र सम्बन्धी कोई भाव न था। उन्होंने तमाशा देखते-देखते सरोजिनी से कहा—'देख ली इस फिल्म वाले की हरकत !'

'क्या किया उसने ?'

'यह फिल्म बनाई है, भला कोई शरीफ लड़की किसी के साथ भाग सकती है ऐसा हो सकता है ?'

सरोजिनी को याद आ गया, अभी-अभी घर पर सेठ साहिब कितने प्रसन्न हुए थे, जब मैंने कहा था। यदि किसी और से मेरा विवाह हुआ होता तो मैं भाग आती आपके पास और स्वयं भी कितने जोरों पर थे; कह रहे थे, मैं भी जिस तरह बनता तुम्हें अपने साथ भगा कर दम लेता। परन्तु अब फिल्म में ऐसा दृश्य देख कर घबड़ाये जा रहे हैं दाढ़ी में तिनका इसी को कहते हैं। वह हंस पड़ी। उसने कहा—'क्यों नहीं हो सकता, मैं जो भाग आती आप के पास—और आप भी तो भगा लाते मुझे।'

'(जरा क्रोध से) अरे छोड़ो, इन बातों को मैं तो फिल्म की कह रहा हूँ।'

'जो कुछ दुनिया में होता है वही फिल्म वाले भी दिखलाते हैं।'

'होता है यह सब कुछ ? होना चाहिए यह ?'

'होता तो इससे भी अधिक है, अब रहा होना चाहिए, तो यह अलग बात है। इस पर घर में बहस करेंगे, यहाँ तो तमाशा देखिए।'

थोड़ी देर तक सेठ साहिब चुपचाप तमाशा देखते रहे। परन्तु दिल में तूफान उठ रहा था। काबू न पा सके। फिर उन्होंने सरोजिनी को सम्बोधित किया।

'मैं नहीं मान सकता। कोई शरीफ लड़की ऐसा नहीं कर सकती। दो कौड़ी की फिल्म है, जी चाहता है, यहीं से जूता खींच कर मारूं, पर्दा फट कर रह जाये।'

सरोजिनी फिर मुस्करा दी। हाल के अन्धेरे में उसके सफेद-सफेद दांत मोतियों की भाँति चमकने लगे। वह समझ गई, सेठ साहिब बहुत घबड़ाये हुए हैं और उस समय तक इनकी घबड़ाहट दूर न होगी जब तक मैं कह न दूँ, हाँ फिल्म वाला बहुत बुरा है। बड़ी बुरी है यह फिल्म कहीं ऐसा अन्धेर भी हुआ है, कि कोई शरीफ लड़की किसी दूसरे नौजवान के साथ अपने पति को छोड़ कर भाग जाय। परन्तु इस समय उसे सेठ साहिब की घबड़ाहट पर आनन्द आ रहा था। इसलिये उसने यह बात नहीं की जो सेठ साहिब सुनना चाहते थे। वह बात कही जिसे सुनने के लिये वह तैयार नहीं थे। उसने कहा—'आप तो समझते ही नही किसी तरह ?'

'समझ में आने वाली बात भी हो। समझूं किस तरह ?'

'आप यूं नहीं समझेंगे, देखिये मैं समझाऊँ, मान लीजिये थोड़े समय के लिये, जो लड़की भागी है वह मैं हूं—'(बात काट कर) जो लड़की भागी है, वह तुम हो, यह मान लूं।'

'हाँ-हाँ थोड़े समय के लिए।'

'मैं नहीं मान सकता ऐसी बात।'

'सुनिये तो भई।'

'सुन रहा हूँ परन्तु मानने का नहीं।'

'आगे भी तो सुनिये, बड़े मजे की बात है सच।'

'कहो क्या मजे की बात है ?'

'हाँ तो जो लड़की भागी है, वह मैं हूँ।'

'चलो सुन लिया। आगे कहो।'

'और जिसने उसे भगाया है वह आप हैं।'

'और जिसने उसे भगाया है, वह मैं हूँ।'

'हां-हां कहिए अब तो समझ गए आप।'

'क्या बेकार की बातें कर रही हो तुम ? मुझे यह भागने वागने की

बातें पसन्द नहीं हैं।'

'ऊँ .....कुछ सचमुच थोड़े झूठ-मूठ की है फिल्म।'

'परन्तु बनाने वालों को यह तो सोचना चाहिए कि देखने वालों पर क्या प्रभाव पड़ेगा।'

'यह देखने वालों को सोचना चाहिये।'

'सच कहती हो चलो वापिस चलें।'

'क्यों वापिस चलें क्या मैं भाग जाऊँगी किसी के साथ ? आप घबड़ाये-घबड़ाये से क्यों हैं ?'

'मैं घबड़ाया-घबड़ाया सा हूँ ? क्या बात कहती हो तुम भी ? यदि बैठना चाहती हो तो बैठो, देख के चलेंगे।'

फिर सेठ साहिब बीच में नहीं बोले चुपचाप बैठे तमाशा देखते रहे। सिनेमा देखकर जब घर आये तो, पहले तो सदैव वह स्वयं हीरो बन जाते थे और सरोजिनी को नायिका बनाकर, जीवन का आनन्द उठाया करते थे। आज कुछ खामोश-खामोश से थे। जैसे सांप सूंघ गया हो चुपचाप आए, और चुपचाप अपने बिस्तर पर लेटे, और चुपचाप सो गए क्या मालूम सो गए या जागते रहे ?

२१

सरोजिनी ने मन ही मन यह निश्चय कर लिया था कि अब अपने मैके वह कभी वापिस नहीं जाएगी। जहाँ इसकी आवाजें और तमन्नायें दफ़न कर दी गईं। वहाँ अब वह क्यों जाय ? सन्तान को सब से अधिक चाह मां-बाप की होती है। परन्तु जब मां ने इसे रो-रोकर बेचा और जिस बाप ने घुड़क-घुड़क कर और क्रोधित हो-हो कर और धौंस जमा-जमा कर इसे नीलाम करके अपने दाम खरे कर लिए। इन्हीं मां-बाप के द्वार पर अब वह क्यों जाए, वहीं क्यों न रहे, जहां वह बिक कर

आई है। बान्दी का काम मालिक की सेवा करना है। सैर-सपाटे, मां बाप और सखियों से इसे क्या मतलब ?

फिर वह यह भी सोचती थी। वहाँ ज़ीनत है, मुमताज है, परवेज है। यदि इनमें से किसी से आँखें चार हुईं तो वह क्या कहेगी ? किस तरह की बातें कहेगी। मुमताज कुरेद-कुरेद कर इसके दिल की बातें पूछेगी, क्या उत्तर देगी वह ? ज़ीनत अगर कोई चुभता हुआ प्रश्न कर बैठी तो क्या उत्तर देगी वह और यदि परवेज़ से आँखें मिल गईं, तो वह किस आंख से देखेगी, किस जबान से उससे बातें करेगी, किस दिल से इसके चेहरे पर नजर डालेगी यही सब कुछ सोच कर, इसने घर न जाने का पक्का निश्चय कर लिया था।

पहले सेठ साहिब इससे स्वयं कहा करते थे। एक बार मां बाप के यहां चली जाओ। लेकिन अब जब वह सिनेमा देख कर आए थे। वह एक बूढ़े पति की नौजवान पत्नी को एक नौजवान के साथ घर बार छोड़ के भागते देखा था। वह स्वयं भी यही चाहते थे कि सरोजिनी इनकी आँखों के सामने रहे। क्षण भर के लिए ओझल न हो। जिस प्रकार बूढ़े मां बाप अपने चंचल और शरारती लड़के को अपनी आँखों से दूर नहीं होने देते कि बाहिर जाकर और खराब हो जायेगा। वह स्वयं उसकी देख भाल न कर पायें और लाड़ प्यार से उसे बिगाड़ दें यह दूसरी बात है। परन्तु उनका दिल भरा भरा रहता है। यही हाल सेठ साहिब का था। इस घर में उनकी देख भाल के बावजूद यदि सरोजिनी बिगड़ जाये, आवारा हो जाये, या किसी के साथ भाग जाये, तो दूसरी बात है। परन्तु उनकी नजर से ओझल हो कर वह कहीं—चाहे मैके में ही सही—अब इसकी कल्पना भी नहीं करना चाहते थे। उन्होंने अब सिनेमा देखना और सिनेमा दिखाना भी कम कर दिया था। सरोजिनी भी खामोश थी। वह यदि सिनेमा जाती भी थी तो अपने लिये नहीं। अपने पति के लिए, अब वह भी नहीं जाते तो उसे क्या आवश्यकता थी कि उन्हें विवश करे।

देखने में सरोजिनी बड़ा सुखमय जीवन व्यतीत कर रही थी। परन्तु एक घटना ऐसी घटी जिसने इसके दिल में हलचल मचा दी। वह अपने निर्णय में दुर्बलता सी अनुभव करने लगी। उसके वह पाँव जो पर्वत की भाँति अपने स्थान पर जमे हुए थे डगमाने लगे। हुआ यह कि उसे सूचना मिली उसका छोटा भाई बीमार है, बहुत सख्त बीमार है। स्थिति निराशाजनक है। जीवन की कोई आशा नहीं।

यह ऐसा समय था कि सेठ साहिब भेजने पर और सरोजिनी भी जाने पर विवश थी। सरोजिनी ने सोचा दोष यदि है तो माता-पिता का। मुझे यदि नीलाम किया है तो माता पिता ने? मेरे बिकने में यदि भाग लिया है तो माँ ने, परन्तु मेरे इस छोटे मासूम और प्यारे भाई का क्या दोष है? उसे दुनिया की बातें क्या मालूम? कितना रो रहा था फूट-फूट कर, जब मैं अपने घर से नीलाम होने के पश्चात् विदा हो रही थी। विदा हो नहीं रही थी कि जा रही थी। वह मेरे पाँव से लिपट गया था। हटने का नाम भी नहीं लेता था। एक ही जिद थी उसकी—मैं दीदी के साथ जाऊँगा। मुझे भी नहीं जाने देते तो दीदी को भी रोक लो। परन्तु कौन सुनता था उस मासूम की। वह लाख लाख रोया, परन्तु एक झटका दे कर उसे मेरे पास से हटा दिया गया। दूधारी गाय का जब दूध निकाला जाता है तो बछड़े को उसके पास नहीं फटकने दिया जाता और यदि किसी भाँति पहुंच जाये तो बड़ी निर्दयता से थनों से उसे पृथक कर दिया जाता है। मैं दूधारी गाय थी एक झटके से पृथक कर दिया। मेरे मां बाप ने इस मासूम और प्यारी जान को जिसे मैं बहुत चाहती थी जो मुझे बहुत चाहता था।

अब वही मेरा भाई बीमार है। जीवित रहने की भी कोई आशा नहीं। क्या मैं उस निर्दोष और प्यार करने वाले भाई की सेवा न करूँ? उसके लिये रात रात भर न जागूँ? हर समय उसके पास न रहूं—अवश्य जाऊँगी मैं। वह सीधी सेठ साहिब के पास आ गई—'मुझे आज पहली

गाड़ी से भेज दीजिए।'

सेठ साहिब स्वयं तार पढ़ कर बड़ी देर से विचारों में डूबे हुए थे। इनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें ? किस तरह इस गुत्थी को सुलझायें। परन्तु समस्या थी बड़ी नाजुक इस अवसर पर वह किसी तरह सरोजिनी को नहीं रोक सकते थे। न टाल मटोल कर सकते थे। उन्होंने बुझे स्वर में कहा—'हां अवश्य, अवश्य जाना चाहिये तुम्हें ?'

'और आप ?'

अकस्मात सेठ साहिब को अन्धकार में प्रकाश मिल गया। जिस मार्ग को वह बड़ी देर से ढूँढ़ रहे थे, वह एक दम उन्हें मिल गया वह सोचने लगे, मुझे सरोजिनी के जाने पर भी हिचकिचाहट यही तो थी कि मैं उसे अपनी आँखों से ओझल नहीं करना चाहता था। इसीलिये मैंने उसे मैके भी नहीं भेजा। परन्तु अब तो यह समस्या हल हो गई। मैं भी क्यों न चला चलूँ सरोजिनी के साथ, आम के आम गुठलियों के दाम इसे कहते हैं। घर वालों पर सिक्का बैठ जायेगा, कि ऐसा भला पुरुष है साले की बिमारी की सूचना सुनते ही दौड़ा आया, और सरोजिनी भी मेरी नजरों के सामने रहेगी। वह महीना भर रहे, दो महीने रहे, तीन महीने रहे, छः महीने रहे, साल भर रहे, मैं भी उसके साथ रहूंगा। कोई नौकर हूं किसी का यहाँ न रहा वहाँ रहा, बस यह ठीक है उन्होंने शीघ्रता से उत्तर दिया—'चलूगा क्यों नहीं ? तुम्हारा भाई, मेरा कोई नहीं है ? मेरा जी लगेगा यहाँ, अवश्य चलूँगा।'

'तो सामान तैयार कीजिये ?'

'करना क्या है ? सामान बन्धवाओ सीट अभी बुक हुई जाती है।'

यह कह कर बड़े चैन से वाहिर गये और उन्होंने अपने खजाँची को आज्ञा दी कि शीघ्रता से प्रथम दर्जे की दो सीटें बुक करा ली जायें, इस आज्ञा के पालन में तनिक भी देर नहीं लगी।

सेठ साहब प्रसन्नचित घर आये और कहने लगे—'हो गया प्रबन्ध ।"

सरोजिनी सामान बन्धवाने में लगी थी, उसने कोई उत्तर न दिया, सेठ साहिब ने पुनः कहा—'सुनती हो भई ।'

'जी ।'

'हो गया प्रबन्ध ।'

'अच्छा !' यह कह कर वह फिर काम में लग गयी और सेठ साहिब बाहिर वापिस चले गये ।'

२२

सरोजिनी अपने पति के साथ मैके आ गई, भव्य स्वागत हुआ, भाई भी अब अच्छा हो रहा था, सम्भवतः यह भी सरोजिनी का प्रभाव था। सब लोग कहते थे—जब से सरोजिनी आई है, दिन प्रतिदिन स्थिति अच्छी होती जा रही है रोगी की, कुछ लोगों का कहना तो यह था कि वह बीमार ही इसलिये पड़ा कि बहिन के वियोग का दुःख न सहन कर सका ।

वही घर जो सरोजिनी के जाने के पश्चात वीरान और सुनसान नजर आ रहा था । उसके आते ही फिर स्वर्ग बन गया । घर भर के चेहरे पर रौनक और ताजगी थी । यह अवश्य हैं कि सरोजिनी को दूधों नहाते और फूलों पलते देख कर भी, मां कुछ झेंपी-झेंपी सी रहती थी, बाप कुछ शर्मिन्दा-शर्मिन्दा सा दिखाई देता था, सरोजिनी के चेहरे पर हर समय मुस्कराहट खेलती रहती थी परन्तु इस मुस्कराहट में भी एक दुःख था, एक उदासी थी, एक मुरझायापन था । और कोई स्थिति को भाँप सके या न भाँप सके, परन्तु माँ की आँखें और बाप की नजरें, ऐसी दशा शीघ्रता से ताड़ लेती हैं, दोनों ने सरोजिनी के दुख को अनु-

भव कर लिया परन्तु दोनों में से किसी का साहस नहीं पड़ा, कि पूछे यह निराशा कैसी ? यह उदासी क्यों ? यह ग़म किसके लिये ? दिल में चोर होता है, आत्मा में जब कपट समा जाता है, आत्मा जब धिक्कारती है तो आदमी यही करता है सब कुछ समझता है जानता है, पहचानता है परन्तु अनजान बन जाता है ? इसी में भलाई होती है।

चुपचुपाते सरोजिनी का विवाह हुआ था, चुपचुपाते वह ससुराल विदा कर दी गई थी परन्तु इतने दिनों के पश्चात आई थी, इसकी महक और खुशबू छुप न सकी, फैल गई, फैलती रही, उड़ते-उड़ते यह सूचना मुमताज तक भी पहुंच गई, वह बहुत दिनों से सरोजिनी से मिलने का अरमान लिए बैठी थी, जीनत को भी पकड़ लाई एक दिन अपने साथ। मुमताज ने सरोजिनी के गले लग कर कहा—'पकड़ लिया चोर को।'

'मैंने क्या चुराया है तुम्हारा ?' सरोजिनी ने मुस्कराते हुए पूछा।

'कैसी भोली बनती है बेचारी, जैसे कुछ जानती ही नहीं।' जीनत बोली।

'मैं नहीं समझी कुछ कहो भी तो।' सरोजिनी ने कहा।

'कहाँ थी तुम, कहाँ गई थीं ? किससे पूछ के गई थीं ? आज्ञा ली थी तुमने हम से। बोलो जवाब दो ?' मुमताज ने गर्जते हुए कहा। सरोजिनी हंसने लगी। मुमताज ने कहा—'इससे काम नहीं चलेगा। यह हँसी का जादू सेठ जी पर चलाना। साफ-साफ जवाब दो। अपितु तुम्हें सीदान सुपुर्द कर दिया जाएगा।'

'फिर क्या होगा ?' सरोजिनी ने मुस्कराते हुए कहा।

'फाँसी।' मुमताज ने उत्तर दिया।

'मैं हाईकोर्ट में अपील करूंगी। वह निर्णय रद्द कर देगी।' यह कह कर सरोजिनी ने जीनत की ओर देखा और कहा—'क्यों है न ठीक? मेरी हाईकोर्ट तो तुम ही हो।'

'तो मैं हाईकोर्ट का निर्णय रद्द कराने के लिए प्रिवी कौंसिल में अपील कर दूंगी देख लेना।' मुमताज बोली।

'कहाँ है तुम्हारी प्रिवी कौंसिल ? लन्दन में या हिन्दुस्तान में। जरा यह तो बताओ पहले ?' सरोजिनी ने पूछा।

'हिन्दुस्तान में।' मुमताज ने उत्तर दिया।

'कहां ? यह तो नई सूचना सुनाई तुमने।' सरोजिनी ने कहा।

'जी, यह सूचना नई है, परन्तु बात पुरानी है ?'

'हम नहीं समझे भई।'

'क्यों नहीं समझी ? इसी प्रिवी कौंसिल से तुम्हारा मुकदमा भी तो खारिज हो चुका है।'

'वाह री पगली ! कैसा मुकदमा, कैसी प्रिवी कौंसिल ?'

'सच तो कहती थी जीनत (नकल उतारते हुए) कैसी भोली बनती है। बेचारी जैसे कुछ जानती ही नहीं। (जीनत को ठौंगा लगा कर) क्यों जीनत ?'

'हम नहीं जानते। तुम जानो यह जाने।'

'तुम भी इसी का पक्ष लेने लगीं।'

'अब तुम इस बेचारी के पीछे पड़ गई। पूछ मैं रही हूं मुझे बताओ ?' सरोजिनी बोली।

'क्या पूछ रही हो ? क्या बताऊं ?'

'कहां है तुम्हारी प्रिवी कौंसिल ?'

'मेरी क्यों तुम्हारी ?'

'अच्छा मेरी सही।'

'बता दूं ?'

'हां-हां बताओ।'

'देखो बताती हूं फिर ?'

'तो बताओ न ? ।'

'फिर कहे देती हूं बताती हूं ।'

'हां-हाँ, कुछ फूटो तो मुँह से ।'

'सावधान ।'

'हां सावधान ।'

'परवेज, भूल गई क्यों सरोजिनी ? सच कहना वह प्रिवी कौंसिल है या नहीं ?'

परवेज का नाम सुन कर जीनत के दिल को भी ठेस लगी । और सरोजिनी का तो चेहरा सफेद पड़ गया । जैसे उसके शरीर का सारा खून किसी ने खींच लिया हो । शीघ्र ही मुमताज को मालूम हुआ कैसी बिन अवसर बात वह कह गई । परन्तु अब क्या हो सकता था ? तीर कमान से निकल चुका था । आज मुमताज को मालूम हुआ कि अधिक बोलना कितना खतरनाक होता है ? या तो वह बुलबुल की भाँति चहक रही थी, या बिल्कुल मौन हो गई । उसकी समझ में नहीं आ रहा था, अपने शब्द किस भाँति वापिस ले ? किस भाँति यह दुःखमय वातावरण परिवर्तित कर दे ? और किस तरह वही चहल पहल आरम्भ हो जाये । जो अभी कुछ समय पहले तक इस घर को बहारस्तान बनाये हुए थी । परन्तु कुछ भी उसकी समझ में न आया । कुछ भी न कर सकी, सिवा इसके कि उसकी आँखों में आँसुओं की दो बड़ी बूंदें चमकने लगीं ।

बड़ी देर तक मुमताज और जीनत सरोजिनी के पास रहीं । परन्तु तीनों के मुंह पर ताला लगा हुआ था । किसी में साहस नहीं था कि पहल करे और बात आरम्भ कर दे । सब के चेहरों का रंग उड़ा हुआ था । सब किसी गहरी चिन्ता में डूबी हुई थीं । सब अपनी अपनी जगह सोच रही थीं न जाने क्या ?

जब बड़ी देर हो गई तो मुमताज ने साहस करते हुए कहा—'अब चलेंगे सरोजिनी, चलो जीनत चलती हो तुम भी ।'

'जल्दी क्या है ? बैठो चली जाना ।'

'नहीं सरोजिनी, अब जाती हूं; फिर कभी आऊंगी ।'

'जीनत उठी तो सरोजिनी ने उसे पकड़ कर बिठा लिया—'मैं तो नहीं जाने दूंगी तुम्हें अभी ।'

मुमताज भी बैठ गई—'फिर मैं भी नहीं जाती ।'

सरोजिनी और जीनत मुस्करा दीं—वातावरण का भारीपन इस मुस्कराहट से दूर तो नहीं हुआ परन्तु कम अवश्य हो गया ।

२३

परवेज कालेज छोड़कर आर्थिक दृष्टिकोण से हानि में नहीं रहा । उसकी पुस्तकें धड़ाधड़ प्रकाशित हो रही थीं और प्रत्येक मास उसे रायल्टी के रूप में पर्याप्त धन मिल जाता था ।

विवाह का प्रश्न उसके मित्रों ने भी कई बार उठाया और दिल ने भी । दिल को उसने सदैव झिड़क दिया और मित्रों को टाल दिया । यह बात नहीं थी, कि वह विवाह करना न चाहता हो । उसे जीवन साथी की आवश्यकता थी । यह आवश्यकता वह अनुभव भी करता था, परन्तु वास्तविक प्रश्न पसन्द का था, और यहीं आकर यह प्रश्न समाप्त हो जाता था । वह निर्णय कर चुका था कि किसी सुन्दर स्त्री से विवाह नहीं करना है, हुस्न के आगे सिर नहीं झुकाना है । सुन्दर स्त्रियाँ वह चाहता तो एक से एक मिल सकती थीं । उसके काल्पनिक संसार में श्यामा, सरोजिनी, राधा, जीनत और बहुत सी सुन्दर चंचल और चालाक लड़कियाँ, अपना अपना निवेदन पत्र ले कर उपस्थित हुई थीं, परन्तु वह बिना सोचे विचारे सभी के निवेदन पत्र अस्वीकृत कर दिया करता था, केवल एक निवेदन पत्र था । जिसे रद्द करते समय थोड़ी सी हिचकिचाहट होती थी, वह निवेदन पत्र था जीनत का, परन्तु

अन्त में उसने उसे भी अस्वीकृत कर दिया। प्रश्न नियमों का था, और वह किसी भी स्थिति में नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकता था, उसके समीप यह एक ऐसा दोष था जो क्षमा के योग्य नहीं था।

जीनत का उस पर सबसे अधिक अधिकार था। उसने उसकी बड़ी सेवा की थी। उसके सुख और आराम का बड़ा ध्यान रखा था। जीनत के बाप खान बहादुर साहिब ने अपने घर को उसका घर बना लिया था, परन्तु जिस प्रकार एक सुन्दरता का पुजारी बड़ी से बड़ी दया और सहानुभूति के पश्चात् भी किसी असुन्दर स्त्री से विवाह करने पर तैयार नहीं हो सकता, उसी प्रकार सुन्दरता का विरोधी परवेज खान बहादुर साहिब के प्यार और जीनत के प्रेम के निमन्त्रण देने के बावजूद, स्वयं को जीनत से शादी करने पर तैयार नहीं पाता था। किसी की याद और किसी की कल्पना ने कभी उसके दिल में खटक और दर्द उत्पन्न नहीं किया। परन्तु अपने सुन्दरता विरोधी विचारों के बावजूद जीनत की याद उसे कभी न कभी आ ही जाती थी। और जब याद आती थी, तो कुछ दिल में खटक और दर्द भी होने लगता था।

इस तरह सुन्दर स्त्रियाँ तो उसकी पसन्द से बाहिर निकल गईं। बदसूरत औरत अब तक कोई नजर से न गुजरी थी, जो बदसूरत के साथ-साथ ऐसी आदतों और गुणों की मालिक हो, जो उसके दिल को अपनी ओर खींच सके, उसके दिल को बेचैन कर सके, उसके दिल में मुहब्बत और इश्क के अंगारे सुलगा सके। एक बड़ी मुश्किल यह भी थी कि वह रीति-रिवाज के अनुसार विवाह नहीं करना चाहता था। दिल के लगाव, नजर की पसन्द और विचारों के मिलन के साथ करना चाहता था। इस चीज की टोह उसने लगाई, परन्तु मिली नहीं। अब वह निश्चिन्त सा था कि मिल गई तो शादी रचा ली जायेगी, न मिली तो न सही।

वह अपने मजे में बैठा हुआ किसी लेखक की लिखी रचना को ठीक ठाक कर रहा था कि राधा आई। उसे देख कर परवेज मुस्कराया—

'आईये, आईये ।'

'कहिये क्या समाचार है' राधा कुर्सी पर बैठ गई ।

'दया है आपकी' मेहरबानी है आपकी कभी-कभी इधर का फेरा भी लग जाता है । इसलिए धन्यवाद भी करता हूं ।'

'आप भी विचित्र आदमी हैं ।'

'क्यों भई ! क्या विचित्रता है मुझ में ?'

'आपकी पुस्तक 'माहेराज-ए-तख्खय्युल' मैंने भी देखी है—सुन्दरता से घृणा के विचार जो आपके मस्तिष्क में हैं उन्हें मैं भी जानती हूं । एक ओर तो यह और दूसरी ओर यह कि बातें करेंगे तो इस भांति भावनाओं में डूबकर कि मालूम हो इनसे बढ़कर कोई सुन्दरता का पुजारी है ही नहीं । सच कहियेगा, सच कहिये यह विरोध है या नहीं ? और आप इस कला में निपुण हैं या नहीं ?'

'इसमें विरोध की क्या बात है । जो विचार हैं मेरे, वह मेरे दृष्टि-कोण से ठीक हैं । रहा मेरा बर्ताव, तो आखिर चरित्र भी कोई चीज होता है ।'

'हां साहिब जरूर होता है और मैं मानती हूं कि इस कला में भी आपका जवाब नहीं ।'

'धन्यवाद !'

कुछ समय तक खामोशी रही । फिर राधा ने कहा—'आपको एक शुभ सूचना सुनाने आयी हूं ।'

'शुभ सूचना ? कहिये ।'

'मेरी जिन्दगी का एक नया दौर शुरू होने वाला है बहुत जल्द ।'

'अर्थात आप विवाह करने वाली हैं ।'

'जी हां यही विचार है ।'

'बहुत खूब, बधाई ! बधाई ।'

'धन्यवाद, आप सम्मिलित होंगे ?'

'मुझे निमन्त्रण देने आई हो ?'

'जी हां, बड़ी आशाओं के साथ ।'

'अवश्य आऊंगा, सौ काम छोड़ के आऊंगा। परन्तु यह सम्बन्ध हो किससे रहा है?'

'आप नहीं जानते ? प्रकाश से ।'

'कौन प्रकाश ? क्रिश्चियन कालेज का प्रोफेसर ?'

'जी हां वही ।'

'उसे और मैं न जानूं । वह तो मेरा लंगोटिया यार है—राधा इस पसन्द की दाद देता हूं—खूब गुजरेगी तुम दोनों की जिन्दगी, बड़ा भला मानस है वह, मैं उसे खूब जानता हूं ।'

इतने में नौकर चाय लेकर आ गया और वह दोनों खामोशी से चाय पीने लगे। राधा चाय पीती जा रही थी, और परवेज को देखती जा रही थी। वह आज यह सोच कर आई थी कि अपनी शादी की सूचना सुनाती हूं—देखूं इसका प्रभाव क्या होता है ? यदि परवेज के दिल में जरा भी मेरी जगह होगी, तो इस सूचना के सुनते ही उसके चेहरे का रंग उड़ जायेगा। उसकी बातों से अनुमान लग जायेगा कि इस सम्बन्ध को वह पसन्द नहीं करता है । यदि ऐसा हुआ तो मैं अपना सर उसके कदमों पर झुका दूंगी और कह दूंगी साफ-साफ यह दिल तुम्हारा हो चुका, आज से नहीं बहुत समय से । पड़ा रहने दो इसको अपने चरणों में, मैं तुम्हारे सिवा और किसी की नहीं बन सकती ।

परन्तु यह कुछ न हुआ उसने विवाह की सूचना वास्तव में शुभ सूचना की भाँति सुनी, मुबारिकबाद दी। बड़ी खुशी से सम्मिलित होने का वायदा किया। यदि वह इन्कार कर देता तो भी मैं राय कायम करती। कुछ थोड़ा बहुत ख्याल है इसे मेरा। लेकिन वह सम्मिलित होने के लिये बेताब नजर आ रहा है, कहता है सौ काम छोड़ कर आऊँगा।

नहीं, इसके दिल में मेरा स्थान कभी नहीं हो सकता। मैं कब तक इसका पीछा किये जाऊँगी । मैं किसी और दिल में अपना नीड़ क्यों न बनालूं । माना मुझे शान्ति प्राप्त नहीं हो सकेगी जो इस बे-दिल के दिल

में प्राप्त कर सकती थी। लेकिन जो वस्तुएं मिल न सकतीं हों उसके लिए कुढे क्यों ? हम जानते हैं चाँद हमारे हाथ नहीं आ सकता। तारों को हम पकड़ नहीं सकते। फिर इन्हें पकड़ने के लिये हाथ बढ़ायें क्यों ? यह मेरी गलती थी, परवेज की नहीं। मुझे अपनी गलती की सजा भोगनी चाहिये। चाय की प्याली समाप्त करते-करते इतने सारे विचार आ गये, राधा के दिल में। प्याली समाप्त करके उसने कहा—'देखिये भूलियेगा नहीं।'

'कभी नहीं, दिल पर लिख लिया है। भूल सकता हूं कभी भला ?'

राधा उठी और चली गई अपने घर की ओर।

DEVAL

२४

राधा और प्रकाश का विवाह बड़े धूम-धाम से हुआ, कालेज का सारा स्टाफ उपस्थित था। श्यामा भी आई थी। प्रिन्सिपल खन्ना भी थे। मुमताज अपने साथ जीनत और सरोजिनी को भी पकड़ लाई थी। एक बगीचे में कुर्सियां लगी थीं। अतिथि आ रहे थे।

एक मेज पर खन्ना, वर्मा और श्यामा बैठे बातें कर रहे थे कि परवेज आया और वर्मा ने इसे पकड़कर अपने पास बिठा लिया। श्यामा ने लाख पहलू बदले, परन्तु वह कुछ न कर सकी। मेज से उठ जाना भी असम्भव था और बैठा भी नहीं जा रहा था। इसे वास्तव में परवेज से घृणा हो गई थी; वह मौन बैठी थी कि परवेज ने वर्मा से कहा—'बड़े असभ्य हो गये हो, तुम सभा के नियम ही भूल गये।'

'क्या हुआ भई ?'

'किसी सभा में यदि कुछ परिचित हों और एकाध अपरिचित, तो जानने वालों का कर्तव्य होता है कि दो अपरिचितों में परिचय करायें।'

'हां ठीक है फिर ?'

'तुमने मेरा परिचय कराया ?'

'किससे कराता तुम्हारा परिचय, कौन नहीं जानता है तुम्हें ?'

(श्यामा की ओर संकेत करके) इनसे मैं अपरिचित हूं आपका कर्तव्य था कि परिचय करवाते ।'

'अपरिचित हो, अमाँ, श्यामा को नहीं जानते—पागल कहीं के ।'

'ओ-हो, मिस श्यामा हैं ।'

इतना कह परवेज ने हाथ बढ़ाया। श्यामा ने भी हाथ बढ़ा दिया। परवेज ने कहा—'आप भूल गईं; हमें इतनी शीघ्र।'

'जी-नहीं, परवेज साहिब आपको भला भूल सकता है कोई।'

'धन्यवाद ! लेकिन फिर मुझे देखकर आपने मुंह क्यों फेर लिया ?'

'आपको देख कर मुँह नहीं फेरा। मैं देख रही थी कि राधा किधर निकल गई।'

'अच्छा यह बात थी।'

'जी हाँ।'

'लेकिन आप गिला और शिकवा करने के अभ्यासी कब से हो गए हैं जनाब ?' वर्मा ने कहा।

'यह भी खूब कही, इतने दिनों की मुलाकात है। कभी अगर भूले से मुलाकात हो जाये तो तनिक बातचीत भी न की जाये।'

'क्यों न की जाये। लेकिन जरा यह यह तो बताइये ?'

'कहिये।'

'आप अपनी शरारत से बाज नहीं आयेंगे।'

'शरारत !'

'जी हाँ शरारत, बल्कि बदमाशी, अब साफ-साफ सुनियेगा।'

'कैसी बदमाशी ?'

'यह 'महराज-ऐ-तख्खय्यल' में क्या झक मारी है आपने ?'

'भई, वह मेरे विचार हैं।'

'विचार, हैं कमजोर और फुसफुसे।'

'आपके समीप।'

'जी केवल मेरे ही समीप नहीं मिस श्यामा के भी।'

श्यामा अपनी कुर्सी पर बैठे-बैठे जरा कसमसाई। फिर इसने परवेज की ओर देख कर वर्मा से कहा—'मुझे क्यों घसीट लाये आप बीच में आप दोनों बहस कीजिये।'

'भई इन्हें कायल करने के लिये मैंने तुम्हारा नाम लिया है—मेरी बात को तो यह कुछ समझते ही नहीं। तुम्हारा नाम सुनकर अपने विचारों पर सोचने के लिये विवश हो जायेंगे।'

'मैं अपने विचार सदैव सोच विचार कर प्रकाशित करता हूं।' परवेज ने कहा।

प्रिन्सिपल खन्ना ने एक जोरदार कहाकहा लगाया और कहने लगे—'यारो वर्मा को बोलने दो कुछ देर।'

परवेज ने मुस्कराते हुए कहा—'हाँ-हाँ जरूर बोलें। इन्हें रोका किसने है?' श्यामा ने फिर वर्मा को सम्बोधित करते हुए कहा—'देखिये वर्मा साहिब अब मेरा नाम बीच में न आने पाए।'

'बहुत अच्छा नहीं आएगा। लेकिन जरा परवेज को भी तो टोको।'

'क्या टोको?'

'क्या व्यर्थ बका करते हैं?'

'यह तो अपनी-अपनी राय है।'

'अच्छी राय है, बदतमीज कहीं के।' परवेज ने कहा—'भई क्यों नाराज हो रहे हो अब की पुस्तक लिखूंगा तुम्हें समर्पण करूंगा।'

'क्या मतलब?'

'समर्पण कर दूंगा तुम्हें।'

'और इसमें होगा क्या?'

'होगा तो वही जो मेरी पुस्तकों में होता है जिससे तुम चिढ़ते हो।'

'न भई क्षमा करो, बाज आया मैं इस सम्मान से। क्या मुझे भी कालेज से निकलवाने वाले हो ? तुम तो सहन कर गये यह बात, मैं क्या करूँगा। मुझे पुस्तकें भी तो लिखनी नहीं आतीं, भाई जान।'

खन्ना और परवेज हंसने लगे श्यामा जल कर उठी और उस मेज पर जाकर बैठ गई, जहाँ सरोजिनी, मुमताज और जीनत बैठी हुई थीं। वर्मा ने यह उदाहरण इसलिये नहीं दिया था कि श्यामा पर कोई चोट करे। यूं ही बातों में एक बात निकल गई थी मुंह से। परन्तु श्यामा के यहाँ से जाते ही नाजुक स्थिति का विचार आया हजरत को। वहीं से बैठे-बैठे गर्दन मोड़कर श्यामा से कहा :

'क्यों वहां क्यों चली गयी ?'

'और कह लीजिये, जो बाकी रह गया हो ?'

'आपको तो मैंने कुछ नहीं कहा ?'

'क्यों मेरा सर खा रहे हैं, यह भी खूब रही, अपने साथ दूसरों को भी घसीट रहे हैं, मैं आपसे बात करना नहीं चाहती। अपने स्थान पर बैठे रहिये और जिससे बातें करनी हों कीजिये ?'

इस हमले को वर्मा साहिब सहन न कर सके, श्यामा उन्हें झिड़क देती थी, डांट देती थी, परन्तु यह सब कुछ वह बड़ी खुशी से सहते थे, उसे किसी मूल्य पर नाराज नहीं करना चाहते थे। उन्होंने सोचा अगर यह इसी तरह रूठी रही तो प्रलय आ जायेगी। उसे शीघ्र मनाना चाहिए।

जीनत से उन्होंने कहा—'तुम जरा इधर आ जाओ। मुझे उनसे (श्यामा की ओर संकेत करके) कुछ बातें करनी हैं।' जीनत ने बैठे-बैठे उत्तर दिया—'मैं बड़े आराम से बैठी हूं।'

वर्मा साहिब जरा झेंपे तो, परन्तु पी गए। अब वह सरोजिनी से कहने लगे—'जरा इधर आ जाओ, फिर अभी आ जाना अपने स्थान पर।'

वह बेचारी इन्कार न कर सकी। वह आ कर वर्मा की कुर्सी पर बैठ गई और वर्मा साहिब श्यामा से हाथ बाँध कर परन्तु सबसे छिप कर क्षमा मांगने लगे।

सरोजिनी और परवेज की आँखें चार हुईं। परवेज ने कहा— 'सरोजिनी !' वह गम्भीरता से बैठी रही। उसने कहा :

'जी।'

'कब आईं, तुम ?'

'एक महीना हो गया।'

'अच्छी तो हो।'

'जी हां अच्छी हूं।'

'अभी रहोगी न ?'

'अभी तो कुछ दिन रहूंगी।'

'मिलना कभी हम से।'

वह मौन हो गई। परवेज मिस राधा से बातें करने लगा। जो अभी अभी आ कर खड़ी हुई थीं।

२५

राधा की शादी में जीनत ने भी परवेज को देखा और सरोजिनी ने भी। दोनों को यह विश्वास था कि परवेज वहाँ नहीं आयेगा। दोनों को ही इस विश्वास से सन्तोष था कि अब परवेज से कभी मुठभेड़ नहीं होगी। लेकिन यह विश्वास अविश्वास बन गया। शादी की महफिल में परवेज आया। जीनत ने भी उसे देखा और सरोजिनी ने भी। दोनों के दिल पर जो कुछ गुजर रही थी, चेहरा उसको प्रदर्शित कर रहा था। जीनत निर्णय कर चुकी थी

कि मरते मर जायेगी, परन्तु अब परवेज की ओर बढ़ेगी नहीं। जिसने उसे ठुकरा दिया, उससे वह मुहब्बत और प्यार की भीख नहीं माँग सकती। यही कारण था कि प्रोफेसर वर्मा के कहने पर भी वह अपने स्थान से नहीं उठी और उस मेज पर नहीं गई। जहाँ परवेज बैठा था। परवेज को देखकर उसके दिल पर धक्का सा लगा था। उसे देख कर अपना अपमान उसे याद आ जाता था जो परवेज ने कर डाला था। उसे अपने बाप पर भी क्रोध आने लगता था कि क्यों उन्होंने एक ऐसे आदमी को उसका जीवन साथी बनाना चाहा जो अभिमानी है, जिद्दी है, सरफिरा है। उसे अपने दिल पर भी क्रोध आ रहा था कि वह क्यों ऐसे आदमी को चाहता है, जिसे उसकी तनिक भी चिन्ता नहीं।

सरोजनी दिल ही दिल में परवेज को पूज रही थी। पूजे जा रही थी। विवाह से पूर्व भी वह इसी मूर्ति के आगे सर झुकाती थी और विवाह के पश्चात् भी उसका दिल इसी पत्थर की पूजा करता था। परन्तु वह जीवन में कभी भी दिल की बात जबान पर न ला सकी। परवेज के सामने वह अपना दिल खोल कर न रख सकी उसकी आँखों से आँखें मिला कर भी आँखों-आँखों में दिल की बात न कह सकी। जब तक विवाह नहीं हुआ था, अरमानों का गढ़ था, आशाओं का तूफान था, कि उमड़ा आ रहा था। वह प्रतिदिन बात करने के नये-नये रेखा चित्र बनाती थी और बिगाड़ देती थी। प्रतिदिन सोचती थी मिलूँगी तो यह कहूंगी और यूँ कहूंगी। परन्तु जब कभी सामने पहुंच जाती थी तो जबान गूँगी बन जाती थी। होंठ हिलने से इंकार कर देते थे। वाक-शक्ति जवाब दे देती थी। लेकिन विवाह होते ही वह अपने अरमानों और इच्छाओं का गला घोंट चुकी थी। अब उसका दिल अरमानों और इच्छाओं का घर नहीं था। अपितु समाधि था। पहले इसमें अरमान और इच्छायें पलते थे; बढ़ते थे, परवान चढ़ते थे जवान होते थे, अब वह उसी में दम तोड़ चुके थे। अब न उनमें चमक थी, न शक्ति. न

आदर्श था न साहस, यही अन्तर होता है जिन्दगी और मौत में। अपने अरमानों को अपने सीने में दबा देने के बाद, उसने प्रयत्न किया था कि परवेज की याद को भी समाप्त कर दे। समाप्त न हो तो उसे जबर-दस्ती कैद कर दे। परन्तु वह सफल न हो सकी और आज जब उसने परवेज को देखा परवेज ने उसे मिलने का निमन्त्रण दिया तो ऐसे जोर का धक्का लगा उसके सीने पर कि यह मालूम हुआ एक बड़ा-सा ऐटमबम आकर फटा है ठीक इसी जगह—जहाँ दिल धड़कता है, वह मौन रही, खामोशी से यह वार सह गई। परन्तु उसकी जान पर बनी जा रही थी। आँखें उगली पड़ रही थीं, दिल निकल पड़ रहा था। नसें फटी जा रही थीं। उसकी समझ में नहीं आ रहा था यह क्या हो गया? और अब वह क्या करे? भूली हुई बातें फिर याद आ रहीं थीं। मरी हुई इच्छायें फिर जिन्दा हो रही थीं। . . . . .

श्यामा के दिल में घृणा के अतिरिक्त परवेज के लिए कुछ नहीं था। परन्तु आज एक समय के पश्चात्, परवेज को देखकर फिर उसके दिल में हलचल सी मच गई थी। जिसे टाँके देकर उसने बन्द कर दिया था। वह टाँके आज अकस्मात फूट गये थे और खून बहने लगा था। घाव पुनः रिसने लगा था। ऐसा प्रतीत होता था वह फिर नासूर बन जायेगा और नये टाँके भी इसका इलाज नहीं कर सकेंगे। उसे इस पर आश्चर्य होता था और वह बार-बार सोचती थी मैं जिससे घृणा करती हूं दिल उससे प्रेम करने पर क्यों मचल रहा है? यह ऐसा धक्का था जिसको वह सहन तो कर गई थी, परन्तु जान पर बनी आ रही थी। अकस्मात परवेज से भेंट हो जाने की घटना का प्रभाव तीनों पर भिन्न-भिन्न हुआ।

जीनत ने निर्णय कर लिया था कि भविष्य में कभी ऐसी सभा में सम्मिलित नहीं होगी, जहां परवेज के आने का राई बराबर भी गुमान हो। इसलिए नहीं कि वह परवेज से घृणा करती थी—केवल इसलिए कि वह उसका सामना करते हुए घबड़ाती थी और यह लज्जा अप-

मान की थी। परवेज को देखते ही उसका इन्कार उसे याद आ जाता था और वह कट कर रह जाती थी। जी चाहता था, पृथ्वी फटे और वह समा जाये।

सरोजनी अब इस चिन्ता में थी कि वह शीघ्रातिशीघ्र ससुराल वापिस चली जाये। यहाँ की पृथ्वी उसे काटने को दौड़ती थी। वह अब यहाँ क्षण भर भी नहीं रहना चाहती था। उसका जी चाहता था कि उसके पर लग जायें और वह उड़ जाये यहाँ से। परवेज ने उसे मिलने का निमन्त्रण दिया था। दिल बार-बार यह निमन्त्रण उसे याद दिलाता था और उकसाता था। परन्तु वह दिल को मसोस देती थी। परवेज के घर जाने का, या उससे मिलने का वह विचार भी नहीं आने देना चाहती थी अपने दिल में। वह बार-बार सेठ साहिब को विवश कर रही थी। किन्तु वह आजकल-आजकल वह कह कर टाल देते थे। वास्तव में बात यह थी कि वह जीनत और मुमताज से इतनी दिलचस्पी लेने लगे थे कि उनका दिल नहीं चाहता था कि इस स्वर्ग को छोड़ें। मुमताज़ से वह यद्यपि किसी सीमा तक नाराज़ थे इसलिए कि अवसर पाकर ताने का तीर इतने जोर से चलाती थी कि उनका दिल छलनी होकर रह जाता था। परन्तु वह स्वयं को सम्भाल लेते थे। इस कष्ट में भी वह आनन्द अनुभव करते थे। जीनत और मुमताज—जीनत कम और मुमताज अधिक—उन्हें बहुत सताती थी। साली जीजा का सम्बन्ध था। दोनों सरोजनी को अपनी बहिन समझती थीं। फिर अवसर पाकर वह जीजा को क्यों न छेड़ती? क्यों न परेशान करती? उनकी शरारतों से वह रुष्ट नहीं होते थे प्रसन्न होते थे। सींग कटा कर बछड़ों से मिल बैठने का उन्हें अछूता अवसर मिला था। ऐसे बहुमूल्य अवसर को हाथ से क्यों जाने देते। यही कारण था कि सरोजिनी के विवश करने पर भी वह पहाड़ की भाँति जम बैठे थे, और उठने का नाम नहीं लेते थे।

श्यामा की घृणा के अंगारे परवेज को देख कर तनिक ठण्डे पड़ गये। परन्तु उसकी बातें सुनकर वह फिर भड़कते-भड़कते शोला बन गये।

वह जब राधा के यहाँ आई थी तो परवेज के विरुद्ध इस का दिल नरक बना हुआ था, और जब वहाँ से चली है तो यह नरक और भी अधिक भयानक बन गया था।

२६

सरोजिनी अपने कमरे में खामोश बैठी थी। पास ही एक कुर्सी पड़ी थी जिस पर सेठ साहिब विराजमान थे, वह सरोजिनी को कई दिनों से चुपचाप देख रहे थे, दिल कह रहा था कुछ दाल में काला है। लेकिन यह बात होंठों तक आने का साहस न करती थी। दबे पाँव होंठों तक आयी थी, और उल्टे पाँव वापिस चली गई थी।

सेठ साहिब कई दिनों से चिन्तित थे कि पता लगायें आखिर यह माजरा क्या है? आज इन्होंने अवसर पाकर कहा—'सरोजिनी जरा इधर देखो।'

उसने आँख उठाकर सेठ साहिब को देखा, परन्तु जबान से कुछ न कहा। सेठ साहिब ने यह दृश्य देखा और घबड़ा से गये, परन्तु उन्होंने साहस बटोर कर कहा—'मैं बड़ा परेशान हूं।'

'क्यों? क्या कारण है परेशानी का?'

'तुम्हारे कारण से?'

'मेरे कारण से! यह क्या? मैं समझी नहीं।'

'आखिर तुम चुप-चुप क्यों रहती हो कई दिनों से।'

'मैं—नहीं तो?'

'सच, सच कह दो सरोजिनी।'

'कह तो रही हूं कोई बात नहीं, अब हर समय आदमी बका भी क्या करे?'

'मेरा यह मतलब नहीं। मैं तो यह जानना चाहता हूं कि तुम उदास

क्यों हो, बताओ न।'

'मुमताज आई नहीं अभी तक उसी को याद कर रही हूं।'

इतने में मुमताज भी आ गई जीनत उसके साथ थी। मुमताज ने कहा—'हमारी पीठ पीछे हमारी बातें कौन कर रहा था?'

'हम कर रहे थे।' सेठ जी बोले।'

'क्यों?'

'मर्जी हमारी।'

'सरोजिनी ने आपको जरा भी शिक्षा नहीं दी है? सौभाग्य से बड़ी सीधी लड़की मिल गई है आपको?'

'क्या कहा शिक्षा, पत्नी पति को शिक्षा दे सकती है?'

'जी, और शिक्षा भी ऐसी कि दिन में तारे नजर आने लगें।'

'वह कैसे?'

सरोजिनी मुस्करा कर बोली—'मुमताज का विवाह हो जाने दीजिये। फिर यह बता देगी कि पति को शिक्षा किस तरह दी जाती है।'

सब हंसने लगे। मुमताज ने झेंपे बिना कहा—'और नहीं क्या तुम्हारी तरह? पति की मजाल नहीं होनी चाहिये कि पत्नी के सामने बात कर सके। जिस तरह बकरी शेर से डरती है इसी तरह पति को पत्नी से डरना चाहिये।

'इतना अधिक तो नहीं, पर डरता मैं भी हूं सरोजिनी से। क्यों सरोजिनी है न?'

सरोजिनी ने कोई उत्तर न दिया, मुमताज ने कहा—'अगर आप डरते हैं सरोजिनी से तो अभी इससे झगड़ क्यों रहे थे?'

'झगड़ रहा था, अरे भई, में तो यह पूछ रहा था, कि तुम कई दिनों से उदास क्यों दिखाई दे रही हो, यह कहने लगी, मुमताज को याद कर रही हूं, उदास क्यों होती।'

'अच्छा यह बात थी।'

'और क्या ?'

'तो मैं उपाय बताऊं इनकी उदासी दूर करने का ?'

'अवश्य बताओ। नेकी और पूछ-पूछ— लेकिन भई ऐसा उपाय बताओ कि यह खिल उठें।'

'ऐसा उपाय बताऊंगी कि यह फूल की तरह खिल उठेंगी। और आप इस फूल की महक बन कर महकने लगेंगे।'

'तो बताओ-बताओ।'

'इन्हें सिनेमा ले चलिये।'

'सिनेमा !'

'हाँ, तो क्या हुआ ?'

'नहीं, हुआ तो कुछ नहीं, लेकिन हम लोग सिनेमा जरा कम देखते हैं।'

'आप कम देखते होगें लेकिन सरोजिनी को तो बड़ा शौक था।'

यहाँ सेठ साहिब सटपटा गये कुछ जवाब न बन पड़ा, कहने लगे—'अगर इनकी इच्छा हो तो चलो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है।'

मुमताज ने सरोजिनी से पूछा—'चलती हो सरोजिनी।

'तुम कहती हो तो चली चलूंगी।'

सेठ साहिब को आशा थी कि सरोजिनी इन्कार कर देगी। लेकिन इस समय वह भी सेठ साहिब से मजा लेना चाहती थी। इसे वह सिनेमा याद आ गया जहाँ सेठ साहिब अपने आपको खो बैठे थे। और जहां से यह निर्णय करके उठे थे कि अब कभी सिनेमा नहीं देखेंगे। वास्तविक बात यह थी कि वह सेठ साहिब को वापिस चलने पर विवश करना चाहती थी। वह टाल रहे थे। इसने सोचा अब यहाँ ऐसी हरकतें की जायें कि वह स्वयं घबड़ा कर सामान बाँधने लगें। आज का सिनेमा इसी प्रोग्राम के लिये था।

सरोजिनी का यह उत्तर सुन कर सेठ साहिब कहने लगे—'फिर

मुझे क्या आपत्ति हो सकती है चलो भई।'

'चलो भी क्या, उठिये जल्दी से ?'

'बड़ा शौक है मुमताज तुझे सिनेमा का।'

'क्यों न हो ? हमारा दिल आपकी तरह मर थोड़ा चुका है। जवानी में ही आदमी को यह शौक चर्राते हैं बुढ़ापे में तो बस आपकी तरह बैठ जाये आदमी किसी कोने में और अल्लाह-अल्लाह या राम-राम करने लगे।'

सेठ साहिब झेंपे तो बहुत लेकिन उन्होंने अपने आपको वश में कर कहा—'मैं बूढ़ा हूं।'

'और नहीं क्या जवान हैं आप ?'

'अरे भई जवान नहीं हूं तो बूढ़ा भी नहीं हूं। तुम मुझे समझती क्या हो ?'

मुमताज ने शरारत भरी आवाज में कहा—'बूढ़ा।'

सेठ साहिब को इस हाजिर जवाबी में बड़ा आनन्द आया। यद्यपि दिल पर बनी जा रही थी। फिर उन्होंने कहा—'तो अब चलो न ?'

'चलिये चलिये।'

और सभी सिनेमा देखने चल पड़े। आज पर्दे पर देखा गया कि एक जवान लड़की की शादी एक धनी बूढ़े से कर दी गई। लड़की मुंह से कुछ न बोल सकी लेकिन कुढ़ती रही। परिणाम यह हुआ कि मर गई। कुछ दिन बाद बूढ़ा भी मर गया, बूढ़ा तो था ही।

फिर एक नरक का दृश्य दिखाया गया था कि आग में तपता हुआ लोहे का लट्ठा इस बूढ़े को मारा जा रहा है और उससे पूछा जा रहा है : 'बता तूने एक मासूम लड़की का जीवन बर्बाद क्यों किया ? तूने अपने बुढ़ापे पर एक शरीफ लड़की की जवानी क्यों भेंट चढ़ा दी।'

फिर यह निर्णय सुनाया गया कि आगामी जन्म में ऐ पूंजीपति बूढ़े तू लड़की बनेगा और तेरा विवाह एक तुझ से भी बूढ़े के साथ किया जायेगा। बूढ़ा यह दण्ड तो किसी न किसी तरह भुगतता रहता। परन्तु

जब इसे अगामी जन्म में लड़की बनने की और एक बहुत ही बूढ़े से विवाह होने की शुभ सूचना सुनाई गई, तो वह फूट-फूट कर कर रोने लगा और भगवान के चरणों में गिर पड़ा। बिलबिला कर रोने लगा : 'क्षमा कर दो भगवान ! अगले जन्म में सब कुछ बनाओ परन्तु लड़की न बनाओ। मैं अगले जन्म में जवानी में भी किसी से विवाह नहीं करूंगा।'

यह दृश्य भयानक भी था और हास्यप्रद भी। मुमताज तो इस बूढ़े की यह दुर्गति देखकर हंसी के मारे लोटी जा रही थी। सरोजिनी और जीनत भी लाख-लाख हंसी रोकती थीं, परन्तु जिस भांति रोना आदमी को बेबस कर देता है, इसी भांति कभी-कभी हंसी से भी आदमी बेबस हो जाता है।

सेठजी का यह हाल था कि एक रँग आ रहा था एक जा रहा था। न उठते बनती थी, न भाग सकते थे, न ठहर सकते थे। केवल सरोजिनी होती तो किसी न किसी भाँति, इस अपमान को जो फिल्म उनका कर रही थी सहन कर लेते। परन्तु सरोजिनी के साथ जीनत भी थी और सबसे बढ़कर चंचल मुमताज थी, जिसकी यह हंसी हथोड़े की भाँति उनके सीने पर पड़ रही थी। बार-बार स्वयं से घृणा करते थे, वह कहाँ फंस गये ? क्यों मान लिया इन छोकरियों का कहना मैंने ? क्या शामत आई थी मेरी कि आ गया इन सब के झाँसे में ?

पहली फिल्म जब सेठ साहिब ने देखी थी और उसमें अपने ही जैसे एक बूढ़े की पत्नी को किसी नौजवान के साथ भागते देखा था तो सरोजिनी के सामने फिल्म को बुरा भला कह के दिल ठण्डा कर लिया। यहाँ भी फिल्म के दर्पण में अपना चित्र देख रहे थे। दिल में घृणा, बेचैनी और क्रोध का तूफान उमड़ रहा था किन्तु जबान से एक शब्द भी नहीं कह सकते थे। क्या कहें मुमताज धज्जियाँ उड़ा कर रख देती ?

यह सोचते-सोचते सेठ साहिब ने निर्णय कर लिया कि अब दो-चार दिन में अपने देश चला जाना चाहिये। यहाँ अगर और अधिक रहे, तो

यह मुमताज, सरोजिनी को न जाने क्या बना दे ? अच्छी खासी सुन्दर और सुशील पत्नी भाग्य से हाथ लगी है। कहीं इन छोकरियों की संगति में रह कर निकल गई हाथ से तो ?

यह निर्णय करके सेठ साहिब को तनिक सन्तोष सा हुआ। आदमी को जब यह प्रतीत हो जाये कि कल वह जेल से मुक्त होने वाला है तो आज के कष्ट वह हंसी खुशी सहन कर लेगा। यही स्थिति सेठ साहिब की थी। वह निर्णय कर चुके थे, कि शीघ्र ही देश लौट जायेंगे। अतः इस फिल्म का प्रभाव बहुत कम हो गया था।

सिनेमा देख कर जब सब लोग वापिस चले तो मार्ग में मुमताज ने सेठ साहिब से पूछा—'कैसी थी फिल्म ? पसन्द आई आपको ?

'हाँ, अच्छी थी।'

'अरे ! आप को क्रोध नहीं आया यह फिल्म देख कर।'

'क्यों आता क्रोध ?'

'मुमताज सेठ साहिब को याद दिलाने वाली थी इसलिये कि आप भी बूढ़े हैं और एक बूढ़े की गत बनाई गई है इस फिल्म में। परन्तु सरोजिनी ने एक जोर की चुटकी ली। जिसका अभिप्राय यह था कि चुप रहो। खबरदार अगर कुछ कहा तो।

मुमताज खामोश हो गई। सेठ साहिब को कुशलता इसी में नजर आई कि इस प्रसंग को अधिक लम्बा न होने दें।

घर पहुंचने के पश्चात मुमताज और जीनत तो विदा हो गईं। सेठ साहिब सरोजिनी के साथ अपने कमरे में आये और कहने लगे—'बस इसीलिये तो नहीं जाता हूं फिल्म देखने।'

सरोजिनी मुस्कराईं। उसने पूछा—'किसलिये ?'

'इन सालों को सिवा जवानी और बुढ़ापे के कुछ और भी बनाना आता है ? और फिर इस छोकरी मुमताज के साथ तो यदि स्वर्ग में भी आदमी जाये तो मजा किरकिरा हो जाये। देखा नहीं तुमने तमाशा

भर खी-खी, ही-ही, हो-हो लगा रखा था। मेरा तो जी ऊब गया भई, यहाँ से, अब बहुत दिन हो गये चलो घर चलें।

सरोजिनी को यह आशा नहीं थी कि तीर इतना शीघ्र निशाने पर बैठेगा। वह अपनी सफलता पर दिल ही दिल में बहुत प्रसन्न हुई। उसने कहा—'मैं तो कई दिन से चलने को कह रही हूं। आप ही टाल जाते थे।'

'अजी टाल क्या जाता था—खैर अब निर्णय कर लिया। कब चलती हो ? परसों ?'

'अब इतनी जल्दी भी ठीक नहीं है दो चार दिन में चलेंगे।'

'(सर खुजा कर) अच्छा भई, दो चार रोज में सही। परन्तु अब दो-चार रोज में बस चल ही दो ?'

'हाँ और क्या मेरा स्वयं भी जी नहीं लगता अब यहाँ।'

सेठ साहिब अपने जी में बहुत प्रसन्न हुए कि दाल में कुछ काला नहीं है। सरोजिनी को अब तक इन छोकरियों की हवा नहीं लगी।

२७

आखिर वह दिन आ गया कि सरोजिनी फिर अपनी ससुराल के लिए चल दी। जब वह जाने लगी तो उसकी माँ ने रोते रोते जल थल एक कर दिया। बाप की आँखों में भी बड़े-बड़े आँसू तैर रहे थे। परन्तु स्वयं सरोजिनी की आँखें सूखी थीं; आँसुओं की तरी का कहीं दूर और समीप पता नहीं था। वह हंस-हंस कर विदा हो रही थी। जैसे कोई कैदी लम्बी सजा काट कर प्रसन्नचित्त अपने घर जा रहा हो। सम्भवत: वह अपने मां-बाप पर यह स्पष्ट करना चाहती थी कि तुम्हारी भाँति मेरी आँखें बनावटी आंसुओं की भील नहीं बन सकतीं। पहले मैं रो रही थी और तुम प्रसन्न थे अब तुम रो रहे हो मैं हंस रही हूं। संसार की यह पुरानी

रीत है। कोई हंसता हैं कोई रोता है, हंसने वाला इसलिये हंसता है कि आगे चल कर उसे रोना है, और रोने वाला रोता है परन्तु यह नहीं जानता कि भविष्य में हंसने का समय भी आने वाला है।

माँ-बाप दोनों ने इसे अनुभव किया कि सरोजिनी रोती हुई नहीं, हंसती हुई जा रही है। वह रो रहे हैं, परन्तु वह हंस रही है। इस अनुभव ने उनके दिल में एक चुभन सी उत्पन्न कर दी। चुभन यह थी कि यह हंस-हंस कर हमारे रोने की हंसी तो नहीं उड़ा रही है ? परन्तु न वह अपना रोना रोक सकते थे, और न सरोजिनी का हंसना बन्द कर सकते थे।

मुमताज और जीनत सरोजिनी को स्टेशन तक पहुंचाने गई थी ; जीनत ने कहा—'अब कब आओगी सरोजिनी ?'

'(मुस्करा कर) जब बुलाओ।'

'निष्ठुर कहीं की।' मुमताज बोली।

'क्या निष्ठुरता की मैंने ?'

'हमें अकेला छोड़ के जा रही हो। यह निष्ठुरता नहीं तो और क्या है ?' यह कहते-कहते मुमताज का गला भर आया, जीनत ने कहा—'अरे तुम तो रोने लगी, मुमताज।'

'हुश, मैं रोती क्यों ?'

यह कहकर वह सम्भल गई, यह स्थिति सरोजिनी के लिये बड़ी गम्भीर थी। आँसुओं के रास्ते आँसुओं की बाढ़ उमड़ी आ रही थी। परन्तु वह बराबर उसे रोक रही थी। मुमताज ने कहा—'कुछ दिन और ठहर जाती तो क्या हो जाता ?'

'तुम्हारे साथ तो मैं अपनी सारी जिन्दगी हंसी खुशी में व्यतीत कर दूँ। परन्तु यह भी तो समझो कि मैं अपने वश में कब हूँ।'

जीनत ने कहा—'तुम चली जाओगी। फिर जी घबड़ाने लगेगा। तुम्हारे आ जाने से जरा दिल लग गया था।'

सरोजिनी ने कहा—'जी बहलाने का सामान भी हो जायेगा।'

फिर वह मुमताज से सम्बोधित हुई—'आखिर जीनत का विवाह कब होगा ?'

'विवाह तो कब का हो चुका होता। परन्तु यह राजी कब होती है ?'

अब सरोजिनी के दिल में उत्सुकता उत्पन्न हुई कि यह क्या समस्या है ? उसने पूछा—'तुम्हारा मतलब यह है कि यह विवाह करना नहीं चाहती ?'

'हां यह विवाह करने को राजी नहीं होती। मां की लाडली है। वह भी ज्यादा जोर नहीं देती।'

'लेकिन क्यों नहीं राज़ी होती यह ?'

'मैं क्या बताऊँ, पूछ लो इसी से ?'

सरोजिनी ने जीनत की ओर देखकर कहा—'क्यों जीनत ?'

'कुछ और बातें करो सरोजिनी।'

'इससे बढ़ कर और क्या बात होगी ?'

'हमें नहीं अच्छी लगती यह बातें।'

मुमताज ने कहा—'दर्जनों उम्मीदवार बड़े-बड़े सुन्दर, सुशिक्षित और अमीर अपनी-अपनी अर्जियां भेज चुके हैं। लेकिन जीनत की नजर में कोई जँचता ही नहीं।'

अब सरोजिनी के दिल में हलचल सी पैदा हो गई। वह सोचने लगी; यह क्या बात है ? कि जीनत विवाह नहीं करती और यह दर्जनों उम्मीदवार कौन हैं ? इनमें परवेज भी है या नहीं ? अगर हैं तो जीनत ने उसे कैसे ठुकरा दिया ? अगर नहीं है तो क्या वह जीनत को नहीं चाहता ? मैं अब तक जो कुछ समझ रही थी सब गलत था। बिना सर पाँव के था।'

जब से सरोजिनी यहाँ आई थी यह चोर उसके दिल में समाया हुआ था। वह बातों में बड़ी सावधानी रखा करती थी। इसलिये यह प्रश्न उसकी जबान पर न आ सका, परन्तु निरन्तर इस टोह में थी कि जीनत

और परवेज के सम्बन्ध कहां तक पहुँच चुके हैं । यह मालूम करे और यह बात मुमताज से भी डर के मारे पूछते झिझकती थी। उसे डर लगता था। कहीं यह जीनत से न लगा दे जा कर और न जाने अपनी ओर से भी क्या-क्या उड़ाने लगे, और जीनत से भी यह बात पूछने का साहस नहीं था। वह बड़ी देर तक यही सोचती रही कि किसी प्रकार परवेज के सम्बन्ध में कुछ मालूम करे, परन्तु उसकी समझ में नहीं आता था कि किस भांति प्रश्न करे ताकि लेने के देने न पड़ जायें और मामला भी आसानी के साथ साफ हो जाये। आखिर साहस करके पूछा—'दर्जनों उम्मीदवार आखिर कौन-कौन हैं वह ?'

मुमताज समझ गई सरोजिनी के दिल की बात और उसने कहा—'अब मैं नाम किस-किस के गिनवाऊँ। सब खानदान ही के लोग हैं।'

सरोजिनी को मालूम हो गया कि परवेज इस सूचीपत्र से बाहिर है। उसने कहा—'यदि जीनत इन सब को पसन्द नहीं करती तो किसी को तो पसन्द करती ही होगी। उसी से क्यों नहीं शादी कर दी जाती इसकी ?'

'मुश्किल तो यही है कि यह किसी को पसन्द नहीं करती—तुम ही पूछो शायद तुम्हें बता दे। मैं तो पूछ-पूछ कर हार गई। मुझे तो कुछ भी नहीं बताया इसने।'

सरोजिनी ने फिर मुस्कराते-मुस्कराते जीनत से कहा—'बताओ न जीनत क्या बात है ?'

जीनत—'कोई बात हो तो बताऊं भी।'

सरोजिनी—'आखिर कुछ तो होगी, कोई रहस्य की बात है क्या ? वह भी हम से।'

जीनत—'कुछ भी नहीं, रहस्य क्या होता भला ?'

सरोजिनी—'तुम विवाह ही नहीं करोगी। यह मैं क्या सुन रही हूँ ?'

जीनत—'इसलिये, कि नहीं करूँगी।'

सरोजिनी—'विवाह करना नहीं चाहती या कोई जचा नहीं अब तक ?'

जीनत—'जो समझ लो बात एक ही है।'

सरोजिनी ने जी कड़ा कर के आखिर पूछ ही लिया—'परवेज से भी नहीं ?'

जीनत—'नहीं, उनमें कौन से मोती जड़े हैं।'

सरोजिनी—'अरे ! यह तुम परवेज को कह रही हो ? परवेज को ?'

जीनत—'हां भई, उन्हीं को। मुझे नहीं जचते जरा भी।'

सरोजिनी—'आश्चर्य है ! तुम यह कह रही हो।'

सरोजिनी पुनः विचारों में डूब गई। यह एक विचित्र समस्या उस के सामने आ गई। वह परवेज और जीनत के सम्बन्ध में न जाने क्या-क्या सोचे बैठी थी। लेकिन यहां तो बात ही और निकली। जीनत भी परवेज से उतनी ही दूर है जितनी स्वयं सरोजिनी।

यह बातें सुनकर उसे एक हद तक खुशी भी हुई। खुशी इस बात की थी कि परवेज यदि उसका न हो सका, तो जीनत का भी न बन सका। और दुःख भी हुआ, दुःख इस बात का कि जीनत उसकी चहेती सहेली किस धुन में है ? क्या हो गया है उसे। क्यों अपना जीवन बर्बाद किये जा रही है। परवेज जैसे आदमी से भी वह खुश नहीं है। उसे भी वह अपना जीवन साथी बनाने पर तैयार नहीं है। फिर आखिर उसकी पसन्द क्या है ? और इस पसन्द पर परवेज भी पूरा न उतर सका तो कौन उतरेगा। कोई उतर भी सकेगा या नहीं ?

कुछ देर खामोश रह कर सरोजिनी बोली—'मुझे मुमताज की तो तनिक भी चिन्ता नहीं है यह ठहरी छैल छबीली। यह दूसरे का सर सहलायेगी, भेजा खाएगी और स्वयं आनन्द में रहेगी। उसके पास दुःख फटक नहीं सकता। परन्तु तुम्हारी चिन्ता चाहे यहाँ रहूँ या वहाँ जाऊं हर स्थान पर मुझे परेशान करेगी। तुम तो बिलकुल छुई-मुई का पेड़ हो।

दुःख सहन नहीं कर सकती; मुझे ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई दुःख है। जो अन्दर ही अन्दर दिल मसोस रहा है। यह रोग न पालो जीनत।'

यह कहते-कहते सरोजिनी की आंखें डबडबा आईं। अब तक वह अपने आंसू रोके हुए थी। परन्तु अब उसकी आंखों से आँसू ढलक-ढलक कर, उसके गालों पर गिरने लगे। सरोजिनी की यह सहानुभूति देखकर जीनत भी रोने लगी। मुमताज आश्चर्य चकित हो दोनों का मुँह देख रही थी और खामोश थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था। यह बातों-बातों में दुःख का प्रसंग कहां से निकल आया? वह तो हर बात का सुखमय प्रसंग सामने रखती थी। दुःखमय प्रसंग न देखती थी न देखना चाहती थी। उसे आश्चर्य इस बात पर हो रहा था कि मैं इतने दिनों से जीनत के साथ हूँ परन्तु इसके दुःखमय प्रसंग को इतनी सफाई से देख न सकी, जिस तरह से सरोजिनी ने देख लिया। कहीं यह बात तो नहीं है कि सरोजनी का दिल दुःखी हो। इसके सीने पर भी दुःख के पहाड़ लदे हों। समान दृष्टि के लोग एक दूसरे को शीघ्र ही पहचान लेते है फिर आश्चर्य क्या? जीनत उसके सामने रोने लगी। यद्यपि उसने मेरे सामने कभी एक आँसू भी नहीं बहाया और सरोजिनी ने उसके दिल में दुःख का कांटा चुभते देख लिया और इससे पहले स्वयं रोने लगी।

तीनों मिली जुली पास बैठी थीं कि सेठ साहिब घबड़ाए हुए आए। इससे पूर्व वह कुछ कहते, मुमताज ने उन्हें देखकर कहा—'खैरीयत।'

उन्होंने हंसने का असफल प्रयत्न करते हुए कहा—'हाँ खैरियत है। गाड़ी अब छूटने वाली ही है।'

'तो क्या मतलब उतर जायें हम लोग?'

'अभी तो एक मिनट बाकी है बैठो अभी?'

'आपके साथ क्यों न चले—चलें, यहां तो जी घबड़ाएगा सरोजिनी के जाने के पश्चात—।'

'शौक से—तुम भी चलो, जीनत को भी ले चलो।'

'लेकिन एक शर्त है।'

'क्या शर्त है ?'

'सिनेमा दिखाना पड़ेगा प्रतिदिन आपको। बताइए है स्वीकार ?'

सिनेमा का नाम सुन कर सेठ साहिब तनिक भड़के। सरोजिनी और जीनत दोनों मुस्कराने लगीं। इतने में रेल ने सीटी दी और मुमताज—'खुदा हाफिज' कहती हुई जीनत सहित उतर आई। गाड़ी रवाना हो गई।

२८

जितनी तेजी से रेल जा रही थी। इससे भी अधिक तेज सरोजिनी के विचार दौड़ रहे थे। आज इसने मुमताज से जो कुछ सुना था और जीनत को जिस रंग में देखा था और परवेज के बारे में जो कुछ मालूम किया था। इसने उसे आश्चर्य में डाल दिया था। वह बार-बार मस्तिष्क पर जोर देती थी और सोचती थी। यह कैसा नया माजरा सुनने में आया है। अब तक अपने दिल के अन्दर वह जीनत के बारे में, परवेज के बारे जो कुछ सोचती रही थी सब गलत सिद्ध हुआ।

इसके दिल में जीनत का प्रेम और बढ़ गया। अब इसका जी चाह रहा था कि सुसराल न जाये और कुछ दिन यहीं रहे। जीनत के दिल को देखें। इसकी मरहम पट्टी करे। अपना सारा समय इसकी देख-रेख में व्यतीत कर दे। कभी तो इसके दिल में उमंग उठती थी कि खड़ी होकर जंजीर खींच ले और दौड़ती हुई रेल को अकस्मात रोक ले और हो सके तो इसे पीछे वापिस ले चले जहां से इस पर सवार हुई थी। परन्तु सामने सेठ साहिब बैठे थे और वह इतने बेजार हो चुके थे कि

इनके सामने वापिसी का प्रश्न रखा ही नहीं जा सकता था । और रख भी दिया जाता तो वह कभी स्वीकार नहीं कर सकते थे । वह बार बार मुमताज पर झुंझलाती, कि इस मूर्ख ने पहले से यह बातें क्यों न बताईं, बताईं कब जब मैं रेल में बैठ चुकी थी । जिन्दगी में कभी वह मुमताज से नाराज़ नहीं हुई थी जितनी वह इस समय थी ।

सेठ साहिब ने इसका यह रंग देखा तो वह चुप न बैठ सके बोले— 'क्या सोच रही हो । कोई विशेष बात है ?

'कुछ नहीं ।'

'फिर बातें क्यों नहीं करतीं ?'

'रेल में भला कोई बातें करता है ।'

'यह लो, रेल में ही तो बातें करने को जी अधिक चाहता है । आखिर समय भी तो बीते किसी भाँति ?'

'मुझे तो यह दौड़ते और भागते दृश्य देखने दीजिए बड़ा जी लग रहा है इनमें ?'

'मैं कहता हूँ यह तुम्हारी सहेलियाँ भी विचित्र सी हैं ।'

'यह आपको बैठे-बैठे क्या सूझी । मेरी सहेलियों ने क्या किया आपका ?'

'अरे ! जीनत को तो मैं कुछ नहीं कहता । वह तो बड़ी नेक और भोली लड़की है ।'

'तो मुमताज के बारे में आप कहना चाहते हैं कुछ ?'

'हां-हां बड़ी चलबली है वह । बड़ी चंचल, बड़ी तेज ।'

'क्या कहा आपने, यह मुमताज की प्रशंसा हो रही है ?'

'कह रहा हूँ चलबली आवश्यकता से अधिक है वह । मैंने तो कोई ऐसी लड़की देखी नहीं ।'

'तो आपको क्या ?'होने दीजिये इसे चंचल और तेज और चिल-बिला ।'"

'कुछ नहीं मैं तो एक बात कह रहा हूँ ।'

'बात कहने के लिए दुनिया पड़ी है । जिसे चाहें कहिये । लेकिन मेरी सहेलियों को तो क्षमा ही कीजिये । आप को प्रतीत नहीं मैं मुमताज को कितना चाहती हूँ । अपनी सखि के बारे में ऐसी बातें सुनकर मुझे दुःख होता है । आपने यह भी नहीं सोचा कि वैसे ही अपना घर छोड़ने के गम में मैं कुछ कुढ़ रही हूँ । उल्टे आपने स्वयं भी एक तीर चलाया । वाह !'

यह कहकर सरोजिनी रोने लगी । इसे रोता देख सेठ साहिब बहुत घबड़ाये और बोले—'तुम कभी-कभी बहाना ढूँढा करती हो रोने का ।'

'और क्या आनन्द आता है मुझे रोने में ।'

यह कह कर वह पुनः रोने लगी । सेठ साहिब ने कुछ देर सर खुजाया फिर बोले—'सुनो तो ।'

'बस क्षमा कीजिए, बहुत सुन लिया ।'

'तुम गलत समझीं ।'

'हां मूर्ख ही हूँ ।'

'मेरा अभिप्राय यह कब था कि मुमताज का अपमान कर डालूँ ।'

'आपका अभिप्राय कुछ हो, लेकिन आपने अपमान किया इसका ।'

'अच्छा भई क्षमा करो । गलती हुई अब से मुमताज का वर्णन ही हम नहीं करेगें ।'

यह कह कर सेठ साहिब भी दौड़ते हुए और भागते हुए दृश्य देखने लगे उन्होंने सोचा अब अच्छा ही है कि मौनता साध ली जाये । यदि बात-चीत जारी रही तो सम्भव है बातचीत बढ़ जाये ।

सेठ साहिब को मौन बैठे देख सरोजिनी पुनः जीनत और परवेज के बारे में सोचने लगी । न जाने क्या-क्या ?

घर पहुंचने के पश्चात सरोजिनी बहुत ही सुन्दर कैदखाने में पुनः बन्द हो गई वह दिल ही दिल में सेठ साहिब की सुन्दर हवेली को कैद-खाना ही समझती थी । यहाँ वह स्वयं भी कैद थी । और इसके अरमान

भी, तमन्नायें भी, जिन्दगी की रंगीन इच्छायें भी । वह परवेज के विचार से निराश हो चुकी थी। इसने यह समझ लिया था कि परवेज इसे नहीं मिल सकता। वह परवेज़ की नहीं हो सकती। वह अब सेठ साहिब की है। और जिन्दगी की अन्तिम सांस तक। चाहे सेठ साहिब जीवित रहे या मर जाये। इसे इन्हीं का बन कर रहना है लेकिन परवेज से वह अपना लगाव कम न कर सकी। वह अब परवेज के भविष्य के बारे में सोचा करती थी। यह विचार बार बार उसके दिल में आता था कि आखिर परवेज किस से शादी करेगा। इसका नया जीवन किस प्रकार आरम्भ होगा। कब होगा? यह एक ऐसा टेढ़ा प्रश्न था जिसका कोई उत्तर इसके पास नहीं था।

२६

प्रिंसिपल खन्ना की सेवायें भारतीय सरकार ने शिक्षा विभाग के लिए प्राप्त कर ली। अब प्रश्न उत्पन्न हुआ कि सिटी कालिज का प्रिंसिपल किसे बनाया जाये। ट्रस्टियों की दृष्टि सर्व प्रथम परवेज पर पड़ी थी। परन्तु वह ऐसा ज़िद्दी था कि जिस शान से उसने प्रोफेसरी ठुकराई थी उसने उसी प्रकार प्रिंसिपल बनना भी अस्वीकार किया। आखिर ट्रस्टियों की एक टोली परवेज की सेवा में उपस्थित हुई और उन्होंने अनुरोध किया कि आप कालेज के प्रिंसिपल बनना स्वीकार कर लीजिए। परन्तु परवेज का इन्कार बराबर स्थिर था। कालेज के एक ट्रस्टी पण्डित मिश्रा भी थे। वह परवेज के पुराने मित्र थे। अब नगर में वकालत कर रहे थे। और बहुत सफल भी थे। उन्होंने परवेज का इन्कार सुन कर कहा—'अच्छा भई एक बात तो बताओ तुम?'

परवेज—'पूछो, क्या पूछते हो?'

मिश्रा—'कालेज के प्रिंसिपल बनोगे या नहीं?'

परवेज—'नहीं श्रीमान्, नहीं।'

मिश्रा—'फिर सोच लो।'

परवेज—'मेरे पास न समय है न मैं इस कार्य को निभा पाऊँगा।'

मिश्रा—'यह कुछ नहीं पूछ रहा हूँ। प्रश्न का उत्तर हाँ या न में, बस।'

परवेज—'नहीं ?'

मिश्रा—'नहीं ?'

परवेज—'नहीं ?'

मिश्रा—'अच्छा तो सुन लो फिर।'

परवेज—'(मुस्करा कर) पद्य सुनाओगे कोई।'

मिश्रा—'पद्य-वद्य को मारो गोली, जो मैं कहता हूँ वह जरा होश से सुनो।'

परवेज—'मैं सुन रहा हूँ कहो।'

मिश्रा—'मेरा खून तुम्हारी गर्दन पर होगा।'

परवेज—'क्या मतलब ? कुछ नशे में हो इस समय ?'

मिश्रा—'मतलब यह है कि मैं सत्याग्रह करता हूं, तुम्हारे दरवाजे पर बैठ कर। और साथ ही साथ भूख हड़ताल भी।'

परवेज—'अरे, भई यह क्यों ?'

मिश्रा—'यह मेरा निर्णय है, तुम अपने निर्णय पर स्थिर रह सकते हो और किसी के हिलाये नहीं हिल सकते तो मुझे भी अपने निर्णय पर रहना आता है। अब मुकाबला है मेरा तुम्हारा, देखना है तुम हारते हो या मैं हारता हूँ—सुनना ही नहीं है, मेरा यार किसी की, खुशामद की हद हो चुकी। सब यत्न करके हार गए हम लोग तो तुम टस से मस नहीं होते। अब इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं कि मैं जान की बाजी लगा दूं—मेरे बाद मेरे बाल बच्चों का पालन पोषण और देख-भाल तुम्हारे जिम्मे होगी। यदि किसी को जरा भी कष्ट हुआ तो सच कहता हूँ भूत बन कर तुम्हारी गर्दन पर सवार हो जाऊँगा।'

परवेज मुस्करा-मुस्करा कर पण्डित मिश्रा की बातें सुनता रहा। उसने कहा—'तो ऐड़ियां रगड़-रगड़ कर क्यों मरते हो ? आत्म-हत्या कर लो अभी।'

'कर लूँगा आत्महत्या भी। परन्तु सच कहना मेरे पश्चात तुम्हें जीवन में आनन्द आयेगा। जीवित रहने को जी चाहेगा ?'

'बिल्कुल नहीं।'

'क्यों नहीं मान लेते मेरा कहना—मेरी जान बच जायेगी। जवानी में मेरी पत्नी को वैधव्य का दर्द और मेरे बच्चों को अनाथों का दुःख नहीं सहना पड़ेगा। और कालेज का भी भला हो जाएगा। खन्ना के जाने के पश्चात यह भवन हिलने लगा है। अब गिरी और अब गिरी। तुम आ जाओगे तो इसकी नींव पुनः दृढ़ हो जायेगी।'

आखिर मिश्रा ने परवेज को ऐसा गांठा कि उसे हाँ करनी ही पड़ी, परवेज कालेज का प्रिंसिपल बन गया।' यह सूचना बिजली की भाँति कालेज में फैल गई। छात्र और छात्रायें, अध्यापकों और अध्यापकाओं की बहुसंख्या को इससे बहुत प्रसन्नता हुई, कुछ ऐसे भी थे। जिन्हें खुशी न थी। परवेज के प्रिंसिपल होने का सबसे अधिक दुःख श्यामा को हुआ। वह दिल ही दिल में फुँकी जा रही थी। वह सोच रही थी—'यह वही पुरुष है जिसने मुझे ठुकराया। इसने मेरा अपमान किया। इसने मेरे सामने औरत की सुन्दरता की हँसी उड़ाई। अब यह प्रिंसिपल बन कर यहां आया है। ताकि और अधिक मुझे जलाये और मेरी हँसी उड़ाये, और इससे अधिक मेरे भावों का खून करे—

वह सोचती थी, यह वही है जिसे मैंने कालेज छोड़ने पर विवश कर दिया था। अवश्य जलता होगा मुझसे। अवश्य यह मुझे हानि पहुँचाने अपमानित तथा बदनाम करने का प्रयत्न करेगा। पहले मेरा अवसर था। अब अवसर इसके हाथ आया है। जिस तरह मैंने कोई कमी उठा नहीं रखी थी यह भी कोई कमी नहीं छोड़ेगा, क्यों न मैं त्याग पत्र दे दूँ। आखिर मेरे अन्दर भी अपनत्व का अंश है।

यही बातें वह बैठी सोच रही थी कि वर्मा साहिब आ गए उन्होंने आते ही कहा—'चलो यहाँ बैठी क्या कर रही हो ?'

'कहाँ चलूँ ?'

'परवेज से न मिलोगी। अब तो वह प्रोफेसर से प्रिंसिपल हो गया है भई—

'हुआ करे मैं तो नहीं जाती किसी से मिलने।'

'अरे क्या अनर्थ कर रही हो ?'

'अनर्थ कैसा ? मेरी इच्छा नहीं जाती, क्या कालेज के नियमानुसार यह आवश्यक है कि जाऊँ और उसके सामने सर झुका दूँ।'

'आखिर शिष्टाचार भी तो कोई चीज है ?'

'आप मुझे अशिष्टाचारी कह लीजिए।'

'न जाओ भई ! मैं तो तुम्हारे ही भले की कह रहा था।'

'मेरा भला कौन सा। क्या प्रिंसिपल साहिब मुझे निकाल देंगे कालेज से ?'

'नदी में रह कर मगरमच्छ से शत्रुता क्यों कर रही हो ? क्या वह ऐसा नहीं कर सकते ?'

'यह साहस भी निकाल लें आपके प्रिंसिपल साहिब। परन्तु श्यामा की गर्दन किसी के सामने नहीं झुक सकती। वह टूट सकती है किन्तु मोड़ी नहीं जा सकती ?'

'तुम तो मुझी पर बिगड़ बैठी।'

'श्याम अभी कोई उत्तर न देने पाई थी कि परवेज मुस्कराता हुआ प्रविष्ट हुआ। उसने बड़े जोश से श्यामा से हाथ मिलाया। जैसे इससे पहले उनकी कोई शत्रुता ही न हो उसने कहा—'यह तो आपको मालूम होगा कि मैं इस कालेज का प्रिंसिपल बना दिया गया हूँ।

'जी हाँ मालूम है।'

'तो आपको यह भी मालूम होना चाहिए कि आप भी उप-

प्रधानाचार्य अर्थात वाईस प्रिंसिपल बना दी गई हैं ।'

आश्चर्य से श्यामा की आंखें खुली रह गईं उसने कहा--'मैं ! मैं वाईस प्रिंसिपल बना दी गई हूँ ।'

'जी हां आप ।'

'यह किस तरह ।'

मैंने यह उपाधि इस शर्त पर स्वीकार की है । मैंने ट्रस्टियों से साफ साफ कह दिया था कि कालेज में वाईस प्रिंसिपल होना आवश्यक है और उपाधि के योग्य मिस श्यामा से अधिक कोई नहीं, अपनी योग्यता और शिक्षा की दृष्टि से वह इस उपाधि के योग्य है और मुझे प्रसन्नता है कि ट्रस्टियों ने मेरी यह बात मान ली ।'

श्यामा ने कहा—'बहुत आभारी हूँ आपकी अन्यथा मैं इस उपाधि के योग्य नहीं ।'

वर्मा ने कहा—'अब अधिक बातें न बनाईये हाथ मिलाईये प्रिंसिपल साहिब से ।'

श्यामा ने बड़ी अदा से मुस्करा कर परवेज को देखा हाथ बढ़ाया, और हाथ मिला कर गर्दन झुका ली ।

३०

आज श्यामा बहुत प्रसन्न थी । उसका दिल हंस रहा था । आंखें हंस रही थी । चितवन हंस रही थी—मुखरा पुष्प की भाँति खिला हुआ था अधर कलियों की भान्ति चटक रहे थे । उसका दिल परवेज की ओर से साफ हो गया था । और फिर एक लम्बे समय के पश्चात प्रेम का सागर बन गया था । यह वह दिल था । जिसमें परवेज के प्रति घृणा उत्पन्न हुयी थी और यह बढ़ती चली जा रही थी,

किन्तु अब उसी दिल में घृणा के स्थान प्रेम का एक सागर ठाठें मार रहा था। श्यामा प्रसन्नचित घर में आयी। आज उसका घर में तनिक भी जी न लगा, शीघ्र ही वह क्लब चली गई। मार्ग में उसकी आंखों के सम्मुख परवेज का चित्र घूमता रहा। वह सोच रही थी। प्रेम का कुछ ठिकाना नहीं, प्रेम नियम का बन्दी नहीं, कल तक परवेज सुन्दरता का शत्रु था। सुन्दरता के द्वार पर अपना सर झुकाना अपमान समझता था, परन्तु आज उसका अभिप्राय अभिमानी सर झुका हुआ है। आखिर उसने सुन्दरता की चौरवट पर सर झुका ही दिया, जिस श्यामा के सामने वह सुन्दरता को अपमानित करता था, हुस्न की हंसी उड़ाता था आज वही श्यामा थी जिससे बढ़ कर उसने हाथ मिलाया था जो उसकी शत्रु थी। और जिस शत्रु ने उसे एक बहुत बड़ी हानि पहुँचाई थी। उस शत्रु को उसने वाईस प्रिंसिपल बनवा दिया। क्या यह प्रेम का आकर्षण नहीं है। फिर मैं उससे घृणा क्यों करूँ ? मैं तो उसकी घृणा से घृणा करती हूँ। किन्तु उसके प्रेम का उत्तर घृणा से नहीं दे सकती। मेरे प्रेम के द्वार को स्वयं उसीने बड़ा सा ताला लगा दिया था उसके ऊपर अब वही ताला खोल कर खटखटा रहा है। तो कैसे उत्तर न दूँ ? कैसे झिड़क दूँ उसे ? जिस को घृणा के बावजूद मेरा दिल सदा उसे पूजता रहा, चाहता रहा, मानता रहा, नहीं यह नहीं हो सकता, मैं अवश्य उससे प्रेम करूँगी और उसी की होकर रहूँगी। आज अपना दिल टटोलती हूँ तो प्रतीत होता है कि मैं कभी भी उससे घृणा नहीं करती थी। यह केवल दिखावा था। यदि घृणा करती थी तो कहां गई मेरी वह घृणा ? मैं उसे ढूँढ रही हूँ, और उसका कहीं पता नहीं, मिल जाये तो आज उसके टुकड़े-टुकड़े उड़ा दूँ, हवा में। इतने दिनों के मानासिक कष्ट और दुःख के पश्चात आखिर अपना लक्ष्य पाने में सफल हो ही गई। परवेज के बिना मुझे अपना जीवन अधूरा नजर आता था। परन्तु अब वह पूरा हो चुका है। अधूरेपन का कहीं पता ही नहीं ?

यही सोचती वह क्लब में प्रविष्ट हुई वर्मा साहिब काफी देर से इसकी प्रतीक्षा कर रहे थे देखते ही बरस पड़े—'बड़ी प्रतीक्षा करवाई भई।'

श्यामा—'ऐ वाह, तो क्या कालेज से सीधी यहां चली आती ?'

वर्मा—'आज तो बहुत खुश-खुश दिखाई दे रही हो श्यामा।'

'तो मैं उदास और गम्भीर कब दिखाई देती थी आपको सदा खुश रहती हूँ, मैं तो दुःख को समीप भी नहीं फटकने देती।

बड़ी दार्शनिक बातें कर रही हो। परवेज का साया पढ़ गया है क्या ?

श्यामा— 'साये जिस पर पड़ते होंगे, पड़ते होंगे, साये-वाये को नहीं मानती, मैं खयाम के नियमों को मानती हूँ।'

वर्मा—'वह तो न जाने क्या-क्या कह गया है जालिम।'

श्यामा—'जो कुछ भी कह गया है सब ठीक कह गया है।'

वर्मा—'वह तो बड़ा दार्शनिक था।'

'श्यामा—'तो इससे क्या होता है ?'

वर्मा—'आखिर आज आप पर दार्शनिकता इतनी क्यों सवार है ? इसलिए तो कहता हूँ कि यह परवेज का साया है। 'अभी तो इसका आरम्भ ही हुआ है।'

श्यामा—'अन्त क्या होगा ?'

वर्मा—'क्या मालूम ? खुदा खैर करें, आगे-आगे देखिये होता है क्या ?'

श्यामा—'मुझ पर दार्शनिकता सवार है तो श्रीमान पर आज शायरी की धुन सवार है।'

वर्मा—'क्यों न हो भई, अवसर कैसा है ?'

श्यामा—मैं समझी नहीं।'

वर्मा—'तुम्हें देखकर जो शायर न बन जाये उससे अधिक मूर्ख होगा कोई इस दुनिया में ?'

श्यामा—'खूब बहुत खूब, जरा फिर से तो कहिये ?'

वर्मा—'अजी क्या करोगी सुनकर दुबारा, जो कुछ पहली बार सुन लिया उसी को जरा समझो, समझने का प्रयत्न करो। यह ही बहुत है।'

श्यामा—'अब आप पहेलियाँ भी बुझवाने लगे।'

वर्मा—'पहेलियाँ नहीं बुझवाता साफ बात करता हूँ, कि अब तुम फिर परवेज की ओर आकर्षित हो।'

श्यामा—'वर्मा साहिब सीमा से आगे न बढ़िये।'

वर्मा—'यह लो बुरा मान गईं ?'

'श्यामा—'आप मुझसे ऐसी बातें क्यों करते है ? क्या अधिकार हैं आप को ऐसी बातें करने का ?'

वर्मा—'अच्छा भई नहीं कहेंगे कुछ, हमने तुम्हारी भलाई के लिये कहा था।'

'श्यामा—'क्या कहा था जरा कहिये तो सही ?'

वर्मा—'यही कि परवेज से जरा सावधान रहना।'

श्यामा—'क्या मतलब ? उससे सावधान क्यों रहूँ ?'

वर्मा—'विष की गाँठ सिद्ध होगा वह।'

श्यामा—'अर्थात् आज तो बड़ी दूर की बात कर रहे है आप।'

वर्मा—'यह न समझना कि उसने तुम्हें वाईस प्रिन्सिपल बना कर कोई उपकार किया है वह तो इस प्रकार अपमानित करना चाहता है तुम्हें, कहना चाहता है देखो, विरोधी की गर्दन इस भाँति झुकाई जाती है।'

श्यामा—'बड़ी दूर की बात की आपने।'

वर्मा—'देखो श्यामा मुझे पहले तुम से एक प्रकार का लगाव था।'

श्यामा—'फिर आपने लगाव का नाम लिया ?'

वर्मा—'वाह भई पहले प्रेम पर बिगड़ गयीं आज्ञा हुई प्रेम का नाम

न लिया करो हमारे सामने, अब इस से भी एक हलका शब्द लगाव हमने निर्माण किया इस पर भी डीफेंन्स आफ इन्डिया की धारा चिपका दी—आखिर बात भी किया करूँ तुम्हारे सामने या नही ? इसका निर्णय आज होना चाहिये ।'

श्यामा—'इसका निर्णय मैं बहुत पहले कर चुकी हूँ ।'

वर्मा—'नहीं समझे ? साफ़ कहो ।'

श्याम—'दया करके ऐसी बातें मुझ से न किया कीजिये, क्यों लगाव है आपको मुझसे ? मुझे तो जरा भी लगाव नहीं है—आपसे ।'

वर्मा—'तुम्हें नहीं है तो मुझे भी न हो, कोई जबरदस्ती है ?'

श्यामा—'जी हां जबरदस्ती है, ताली दोनों हाथों से बजती है, एक हाथ से नही बजती जब मुझे आपसे तनिक भी लगाव नहीं है तो आपका लगाव धोखा है । मै आपको धोखे में रखना नहीं चाहती । निकाल दीजिये यह विचार अपने दिल से ।'

वर्मा—'यदि भाषण समाप्त हो गया हो तो मैं भी कुछ निवेदन करूँ ?'

श्यामा—'कहिये ।'

वर्मा—'परन्तु फिर तुम रूठ जाओगी, बड़ी कठिनता तो यही है ।'

'श्यामा—'कहिये कहिये रूठने क्यों लगी मैं ?'

'वर्मा—'बात यह है कि आदमी को आदमी से लगाव हो ही जाता है ? और इसमें कुछ अपना बस भी नहीं चलता । फिर इसमें रूठने की क्या बात है ?—तुम कितना मुझे डाँटती रहती हो, परन्तु मेरा लगाव है कि घटने के स्थान पर बढ़ता ही जाता है, अब तुम ही बताओ कि मैं क्या करूँ ?'

श्यामा—'बताऊँ, पालन करेंगे आप ?'

'वर्मा—'अवश्य पालन करूँगा, बताओ ।'

'श्यामा—'आप मुझसे मिलना छोड़ दीजिये । फिर स्वयं यह

'लगाव' का रोग दूर हो जायेगा, न दूर हो तो मुझे कहना।'

वर्मा—'मैं तो पालन नहीं कर सकता तुम्हारे इस आदेश का।'

श्यामा—'तो मैं स्वयं मिलना छोड़ दूँगी आपसे फिर क्या करेंगे आप ?'

वर्मा—'सर फोड़ लूँगा अपना। आत्म-हत्या कर लूँगा। मर जाऊँगा—ले लो एक आदमी की हत्या व्यर्थ अपने सर पर मेरा क्या जायेगा ?'

श्यामा—'अच्छा, तो एक बात कीजिये।'

वर्मा—'वचन तो नहीं देता, परन्तु कह दो सुन लूँगा।'

श्यामा—मेरे सामने आप सारी दुनिया की बातें कीजिये, परन्तु·······?'

वर्मा—'परन्तु क्या—?'

श्यामा—'ऊँ-हूं ! सुनिये तो सही पूरी बात···प्रेम और लगाव की बातें न कीजिये—यदि यह बात आपने न मानी तो मैं सच-मुच ही आप से मिलना छोड़ दूँगी।'

वर्मा—'अच्छा मान ली यह बात, नहीं करेंगे प्रेम या लगाव की बातें परन्तु एक बात तो बताओ ?'

श्यामा—'पूछिये।'

वर्मा—'परवेज का वर्णन भी न करूँ मैं ?'

श्यामा—'कीजिये। परन्तु बुराई से नहीं।'

वर्मा—'(जोर से) पकड़ लिया चोर।'

श्यामा—'देखिये फिर आप बहके ?'

वर्मा—'फिर तुम्हारे पांव लड़खड़ाये। फिर तुम डगमगाई।'

श्यामा—'वह कैसे ?'

वर्मा—'क्यों साहिब, परवेज का वर्णन बुराई से क्यों न करूँ ?'

श्यामा—'नहीं सुनना चाहती मैं किसी की बुराई।'

वर्मा—'अच्छा किसी को छोड़ दो—परवेज की बात करो कल तक

तुम उसकी बुराइयाँ करती थीं या नहीं ? उसकी बुराइयाँ, इसी मेरी जबान से बड़े चाव और उत्सुकता से सुनती थीं या नहीं—सच कहना ।

श्यामा—'कल यदि एक गलती करती थी, तो आवश्यक है कि आज भी वह गलती किये जाऊँ ? आप का कर्त्तव्य है, कि मुझे गलत मार्ग पर चलने से रोके या यह कि सीधे मार्ग पर पत्थर बन कर गिर पड़े, और आगे न बढ़ने दें ।'

वर्मा—'मैं बच्चा नहीं हूँ श्यामा, खूब समझता हूँ इन बातों को और इन बातों का अर्थ भी ।'

श्यामा—'अच्छा यही सही, आगे चलिये क्या कहते हैं आप ।'

वर्मा—'कुछ नहीं मेरा क्या साहस कि कुछ कहूँ, कुछ कहूँगा तो, या स्वयं मिलना बन्द कर दोगी, या मुझे मिलने से मना कर दोगी, बात एक ही हुयी । छुरी खरबुजे पर गिरी तो, और खरबूजा छुरी पर गिरा तो, हानि तो खरबूजे की ही होगी । छुरी का क्या बिगड़ेगा ?'

श्यामा—'ठीक समझे आप—अच्छा अब मैं चलूँगी ।'

यह कह कर श्यामा उठी और वर्मा साहिब को एक नजर देखती हुई चली गई, उन्होंने चाहा कि उसे न जाने दें । या जाते-जाते एक आध बात और कर लें, परन्तु न हाथ काम आया, न जबान, ऐसा मालूम हुआ कि हाथ शिथिल हो गया है और जबान गून्गी हो गयी है ।

३१

श्यामा के स्वभाव में अब बहुत परिवर्तन हो गया था । उसको शृंगार का शौक बहुत बढ़ गया था । बहुत बन ठन के कालेज आया करती थी । शिकारी तीर कमान से सुसज्जित हो कर घर से निकला करता है । वह भी शिकारी की भाँति नजर के तीर और अदा के खंजर

से सुसज्जित हो कर घर से कालेज आती थी, पहले वह दिल ही दिल में जलती रहती थी, कुढ़ती रहती थी, प्रतिशोध की अग्नि उसके सीने में भड़कती रहती थी। इससे उस का स्वभाव चिढ़चिढ़ा हो गया था। वह बात-बात पर क्रोधित हो उठती थी। परन्तु अब ? अब उसकी दुनिया बदल चुकी थी। अब उसमें एक बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया था। अब वह मुस्कराती थी हंसती थी तो ऐसा प्रतीत होता था, कली खिली, कोंपल फूटा, और फूल खिल गया। अब वह स्वयं दूसरों को छेड़ती थी। वह अब सर से पैर तक चंचल ही चंचल बन गई थी, न जाने किस नशे में हर समय मस्त रहती थी, उबल पड़ती थी—मस्ती उसकी आंखों से, उसके मुखड़े से उसकी अदाओं से।

विवाह के पश्चात राधा ने कालेज छोड़ दिया था। एक दिन कपड़े की दुकान पर राधा और श्यामा की मुठभेड़ हो गई। वह उसे अपने साथ घर ले गई। और वहां बैठ कर सन्तोष पूर्वक बातें करने लगीं। इसने कहा—'क्यों श्यामा, बहुत खुश हो। क्या बात है ?'

'कोई बात नहीं, क्या खुश होना बुरा है।'

'नहीं, परन्तु खिली क्यों जा रही हो बात-बात पर ?'

'खिलने का समय तो तुम्हारा है।'

'तुम्हारा समय भी तो आ रहा है, सम्भवतः बहुत शीघ्र।'

'अब खैर से तुम ज्योतिषी भी बन गईं। सच कहना ज्योतिषी बनना कैसे आ गया ?'

'न जाने यह कैसा सच है ?'

'सुना है अब परवेज से खूब निभ रही है। उसने तुम्हें वाईस प्रिंसिपल भी बना दिया है—हां भई, अब क्यों सीधे मुँह बात करोगी ?'

'जल गईं तुम ?'

'ऐ-वाह ! मैं क्यों जलूंगी ?'

'भूल गई परवेज को ? निकाल दी उसकी मुहब्बत सीने से ?'

'स्पष्ट है, मैं अपनी दुनिया बसा चुकी। इस दुनिया में अब प्रकाश के अतिरिक्त कोई नहीं आ सकता।'

'बधाई-बधाई !'

'बधाई बाद में देना पहले एक बात बताओ।'

'कहिये क्या बात है आपकी ?'

'परवेज आया मार्ग पर ? कुछ खुला, कुछ झुका। देखो सच-सच कहना।'

'राधा तुम से क्या छिपाऊंगी ? जो कुछ तुम समझ रही हो वही मैं समझ रही हूँ। आगे क्या होगा यह तो मैं जानती नहीं ?'

'प्रेम और वहम में बड़ी पुरानी मित्रता है।'

'नहीं वहम नहीं। वर्मा ने एक ऐसी बात कह दी, जिस पर मैंने उसे झिड़क तो दिया। किन्तु वह मेरे दिल में बराबर खटक रही है।'

'क्या कह रहा था वर्मा ?'

'कह रहा था, परवेज तुम से प्रतिशोध लेना चाहता है। अपमानित करना चाहता है तुम्हें, इसलिये उसने यह जाल बिछाया है—तुम उसकी पुरानी शत्रु हो। वह तुम्हारा पुराना शत्रु है। फिर उसने तुम्हें वाईस प्रिन्सिपल कैसे बना दिया ? सोचती हूँ तो यह बात जी को लगती भी है। वह चाहे मेरा शत्रु न हो। परन्तु मैंने उसकी शत्रुता में कब कमी उठा रखी थी। फिर उसका यह बर्ताव समझ में नहीं आता—तुम्हारी क्या राय है राधा ?'

'तुम तो पागल हो अच्छी खासी—और वर्मा को क्या कहूँ ?'

'तुम्हारा विचार है वर्मा गलत कहता है।'

'बिल्कुल—परवेज को तुम भी जानती हो, मैं भी जानती हूँ। वह सब कुछ है परन्तु वह कपटी नहीं है। यह नहीं हो सकता कि उसके दिल में कुछ हो और जबान पर कुछ। वह खरा आदमी है धोखा नहीं दे सकता।'

'हाँ कहती तो ठीक हो, लगता तो ऐसा ही है।'

'अरे कहो क्या रंग है ?'

'ठीक है।'

'तुम ने यह नहीं बताया कि परवेज़ कुछ पसीजा भी ?'

'अभी मैं कुछ नहीं कह सकती।'

'क्यों अब भी नहीं कह सकती ?'

'नहीं।'

'कारण ?'

'अभी तक मेरी और परवेज की कोई बात चीत नहीं हुई है। सोचती हूँ कि एक दिन साफ-साफ बात करूं हज़रत से।'

'जरूर टटोलो।'

थोड़ी देर तक दोनों में इधर-उधर की बातें होती रही। फिर श्यामा वापिस चली गई। दूसरे दिन वह कालेज थोड़ी देर से पहुँची। परवेज़ से इसने कहा—'आज तो देर हो गई मुझे !'

'कोई चिन्ता नहीं, कोई काम था क्या ?'

'काम तो कुछ नहीं था—रात को देर से सोई थी। प्रातः नौ बजे उठी—अब तो प्रायः देर से सोती हूँ।'

'क्यों ? कोई पुस्तक लिख रही हैं आप, आजकल क्या ?'

'नहीं पुस्तक लिख तो नहीं रही हूँ पढ़ रही हूँ।'

'कौन सी है वह ?'

'दिल की पुस्तक।'

परवेज चौंका उसने कहा—'खूब, बड़ी दिलचस्प पुस्तक पसन्द की है आपने। यह पुस्तक कहां से मिल गई आपको ?

'आप ही की देन है।'

यह कह कर श्यामा कुछ झेंप सी गई। अपने आप ही उसकी गर्दन झुक गई। परवेज भी चकरा गया। उसकी समझ में नहीं आया। अब क्या कहे ? कुछ देर श्यामा खामोश रही। फिर एक हल्की सी नजर

परवेज पर डाली। और धीरे से कहा—'आपने भी पढ़ी है यह पुस्तक ?'

'क्या कहा ?'

'आपने भी पढ़ी है यह पुस्तक।'

'मेरा अभिप्राय है दिल की पुस्तक।'

परवेज—(सर खुजाकर) यह अब तक नौबत नहीं आई और सम्भवतः आये भी नहीं।'

'कितने बेदर्द हैं आप ?'

'इतने कठोर शब्द प्रयोग न करो।'

'और क्या—ज़रा भी तो नहीं सोचते कि किसी दूसरे के दिल की क्या दशा है ? उसकी रातें किस भाँति जाग-जाग कर कटती हैं। उसके दिन किस भाँति दुःख और बेचैनी में व्यतीत होते हैं। उसे खाना किस तरह जहर लगता है और उसे दिलचस्प संगति से कितना भय लगता है।'

'यह आप किसकी ओर संकेत कर रही हैं : मैं बिल्कुल नहीं समझा।'

'आप बिल्कुल नहीं समझे, मैं किसके सम्बन्ध में कह रही हूँ।'

'नहीं श्यामा ! नहीं समझा।'

'इन्सान अपनी ही विपदा का बखान करता है। दूसरे के दिल की बात नहीं जानता ?'

'तो आपका मतलब यह है कि—?'

'जी हां मेरा अभिप्राय यह है कि यह कहानी मेरी ही थी और केवल मेरी थी अब कहिए आप क्या कहते हैं ?'

'यह कहानी आपकी थी ? इतनी विचित्र !'

'जी हां, मेरी।'

'मिस श्यामा मैं आपको धोखे में रखना नहीं चाहता। मेरे दृष्टिकोण और विचारों से आप परिचित हैं और अब तक उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। मैं आपका मित्र बन सकता हूँ। इससे अधिक कुछ

नहीं ।'

'आप अपने विचारों और दृष्टिकोणों पर कब तक स्थिर रहेंगे ?'

'सम्भवतः जीवन भर ।'

'आपके विचारों और दृष्टिकोणों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ ?'

'नहीं, तनिक भी नहीं ।'

'आप मेरे केवल मित्र बन सकते हैं । इससे अधिक कुछ नहीं ?'

'जी नहीं, परन्तु मेरा विचार है कि मित्रता बड़ी बहुमूल्य वस्तु है ?'

'तो मैं धोखे में थी अब तक ?'

'यह तो आप ही समझ सकती हैं ।'

'आपने धोखा दिया मुझे, बर्बाद कर डाला मुझको, क्या बिगाड़ा था मैंने आपका ?'

'मैंने धोखा दिया ? मैंने बर्बाद कर दिया आपको ?'

'जी हाँ आपने, केवल आपने ।'

'विचित्र बात सुन रहा हूँ ।'

'अब इतने भोले न बनिये—मैं आपको कदापि इतना हरजाई और बेदर्द नहीं समझती थी । अगर आपने इसी तरह पृथक रहना था, तो आप मेरी ओर बढ़े ही क्यों ? आपने मेरी मुरझाई आशाओं को जीवित क्यों किया ? आपने मेरी आरज़ुओं के उजड़े हुए चमन में दुबारा जीवन की बहार क्यों उत्पन्न की ? मैं आपको भूल चुकी थी, बिसार चुकी थी, आपसे घृणा करने लगी थी—आप आये मुस्कराते हुये, लुभाते हुये, आपने मुस्कराहट में मुझे जीत लिया, आपने मुझे लुभा लिया । मेरी घृणा, प्रेम में परिवर्तित हो गई—आप मुझे फिर याद आने लगे । फिर मेरे हृदय और मस्तिष्क पर छा गये । फिर मेरे दिल की धड़कन बन गये । मेरी आँखों की तमन्ना बन गये, मेरे दिल की आरज़ू बन गए और जब यह सब कुछ बन गए, आपने एक जोर से ठोकर लगा कर मुझे अपने दिल से निकाल फेंका । यह आपकी मानवता, शराफ़त, चरित्र

जिसकी दूर-दूर तक प्रशंसा है। जिस पर आपको अभिमान है?—आप मेरी ओर इसलिए बढ़े थे कि मुझे बदनाम करें, और मेरा अपमान करें। मुझ से प्रतिशोध ले पिछली बातों को, मैं मानती हूँ, आप सफल हो गए। आप जीत गए मैं हार गई—।'

यह कह कर श्यामा रोने लगी। परवेज विस्मय से उसकी बातें सुन रहा था। बड़ी देर तक वह चुपचाप बैठा रहा। और श्यामा सिसकियाँ ले लेकर रोती रही। फिर उसने श्यामा को कहा—'मुझे बड़ा दुःख है कि आपको गलत फहमी हुई। मेरा कदापि यह अभिप्राय नहीं था कि आपको धोखा दूँ। हो सकता है आप कभी मेरी शत्रु हों। परन्तु मेरे दिल में एक क्षण के लिए भी आपके लिये घृणा नहीं उत्पन्न हुई। मैंने आपका न तो अपमान किया और न ही बदनाम किया, रहा प्रतिशोध जब मेरे दिल में आपके विरुद्ध कोई बात ही नहीं थी। तो प्रतिशोध क्यों लेता? बेशक मैं आपकी ओर बढ़ा एक मित्र के रूप में, मेरे दिल में आपकी योग्यता का मान है। यही कारण था कि यहाँ आकर मैंने आपकी उन्नति के लिये प्रयत्न किया। यह बड़ा अन्याय होता। यदि मैं आपकी योग्यता और अनुभवों से कालेज को वंचित रखता।'

श्यामा चुपचाप बैठी परवेज की बातें सुनती रही। वह कुछ देर मौन रहा फिर उसने कहा—'मैं जानता हूँ मेरा दिल प्रेम से खाली है। इसमें किसी का प्रेम नहीं है न आपका न किसी और का, कुछ दिलों ने मुझ से प्रेम माँगा। परन्तु मैं वह चीज कैसे किसी को दे सकता हूँ जो स्वयं मेरे पास न हो? प्रेम यदि एक आनन्द है तो मैं इस आनन्द से वंचित हूँ। यदि एक रोग है तो अब तक इस रोग से बचा हुआ हूं और जहाँ तक हो सका इससे दूर ही दूर रहूँगा।'

श्यामा ने कहा—'सच ही होगा जो आप कह रहे हैं। गलती मेरी ही थी। मैंने क्यों रेत पर महल बना डाला। क्षमा कीजिये, अब ऐसी गलती न होगी।'

'मुझे बड़ा खेद है कि मेरी बातों से आपको गलत फहमी हुई।'

'खेद की कोई आवश्यकता नहीं । मैं एक औरत हूँ। धोखेबाजी और छलकपट करना मर्द की आदत है, और आप भी एक मर्द हैं।'

'आप इससे अधिक कठोर शब्द कह सकती हैं। मैं उन्हें सहन कर लूंगा। परन्तु फिर आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मेरा अभिप्राय कदापि यह नहीं था कि आपके दिल को ठेस पहुँचाऊँ या आपके भावों को उभारूं। क्या आप क्षमा कर दोगी मुझे?'

'क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिए न कि आपको—इस विषय पर अब बातचीत बन्द हो जानी चाहिए।'

फिर वह उठी और अपनी कक्षा में चली गई।

३२

आज फिर श्यामा का स्वभाव बिगड़ा हुआ था। वह अपने विचारों में मस्त थी। अकस्मात किसी ने उसे पुकारा। वह विचारों की सुन्दर वादियों में खोई हुई थी। कि किसी ने उसे जलती हुई रेत पर डाल दिया। वह जीवन की रंगीनियों में खोई हुई थी। अति रंगीन विचार उसके हृदय में एकत्रित हो गए थे कि किसी ने उसे झंझोर कर जगा दिया। आँख खुली तो प्रतीत हुआ।

'ख्वाब था जो कुछ कि देखा जो सुना अफसाना था।'

उसे रह-रह कर अपने पर क्रोध आ रहा था कि क्यों न उसने वर्मा की बात का विश्वास किया। क्यों आ गई वह परवेज के समीप? क्यों उसने धोखा खाया? और क्यों उस धरती पर चली गई जहाँ परवेज ने बड़ी चतुरता से जाल बिछाया था। अब फिर उसका दिल प्रतिशोध घृणा और क्रोध का निवास-गृह बन गया, वह कालिज से छुट्टी पाकर आयी और घर से फिर क्लब चली गई। प्रति दिन की भाँति वर्मा साहिब उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उसे देखते ही लपक कर बढ़े, हाथ

मिला कर बातें करने लगे ।

'आज फिर तुम्हारा चेहरा उतरा नजर आ रहा है क्या बात है ?'

'कुछ नहीं, कोई बात नहीं ।'

'मैं नहीं मानूंगा । कुछ न कुछ अवश्य हुआ है ।'

'ऐ-वाह, खाह-मखाह ।'

'जी-नहीं आप छिपा नहीं सकतीं, यहाँ तो आदमी का चेहरा पढ़ लेते हैं चेहरा ।'

'तुम सच कहते हो वर्मा ।'

'किस विषय में ?'

'परवेज के विषय में ।'

'अब तो मानती हो । अब माना उस्ताद को ?'

'हाँ मान गई मानना ही पड़ा ।'

'वह कैसे '? लगे हाथों मुझे भी बता दो ।'

'बस इतना काफी है जो कुछ कह रही हूँ । इससे अधिक न तुम पूछो न बताऊँगी । वास्तव में परवेज एक सफल शिकारी है । उसने जाल बिछाया और मैं आ गई उसमें—काश ! उस दिन मैंने तुम्हारी बात मान ली होती । मैं तो उल्टा तुमसे लड़ने लग गई थी, न जाने क्या हो गया था उस दिन मुझे ?'

'वह कम्बख्त जादूगर भी तो है—उसने तुम्हें फाँसा और तुम फँस गई' ।'

'हाँ सच है—प्रतिशोध' ले लिया ।'

'ले लिया बदला ? कम्बख्त ने !'

'हाँ, बड़ा भयंकर प्रतिशोध ।'

'क्यों कर ? कैसे ?'

'उसने मेरा अपमान किया । मुझे ज़लील किया, धोखा दिया ।'

'हम, न कहते थे ?'

श्यामा अभी कोई जवाब न दे पाई थी कि कुँवर साहिब आ गये उनका नाम किसी को मालूम नहीं था। सब लोग उन्हें—कुँवर साहिब कहा करते थे। यह इसी नगर में सुपरिंटेन्डेन्ट पुलिस थे। बड़े मिलनसार व्यक्ति थे। जितने वह चरित्रवान व्यक्ति थे, उतने रोबदार भी। आँखों से हर समय क्रोध बरसता था। माथे पर हर समय शिकनें पड़ी रहती थी। किसी को देखते तो इस तरह जैसे बिल्ली चूहे को देखती है, या शेर बकरी को देखता है। कमजोर दिल के लोग तो उनकी निगाह ही देखकर सहम जाते थे। लेकिन श्यामा के सामने वह बड़े भोले बन के आते थे ? कुँवर साहिब, कुँवर साहिब नहीं रहते थे। एक भावुक व्यक्ति बन जाते थे। वह प्रेमी की आँखों को देख कर काँप जाता है, जो उसकी बातें सुनकर सर धुनता रहता है। श्यामा ने अब तक उन्हें खुलकर खेलने का अवसर नहीं दिया था। वह स्वयं उनसे कम बातचीत करती थी। वह बढ़ कर मिलते, मुस्करा कर बातें करते थे। परन्तु वह उन्हें एक ऐसी दृष्टि से देखकर मुस्कराती थी। जिसका स्पष्ट अभिप्राय यह था, मिलिये शौक से, परन्तु प्रेम करने का साहस न कीजियेगा। ऐसी दृष्टि देखकर उनका साहस समाप्त हो जाता। और फिर दिल में चाहे जो कुछ सोचते परन्तु श्यामा के सामने, अधिक खुलने का साहस अपने में नहीं पाते थे।

आज उन्हें आता देख कर श्यामा मुस्कराहट की बिजलियाँ गिराती हुई आगे बढ़ी। भव्य स्वागत किया, और अपने साथ लाकर उस स्थान पर बिठा लिया, जहाँ वर्मा साहिब बैठते थे। श्यामा की इस बदत्तमीजी पर वह मन ही मन कुढ़ उठे। परन्तु कर क्या सकते थे। चुपचाप उठे और दूसरी जगह जा कर बैठ गए। जो वहाँ से काफी दूर थी।

अब सन्तोष से श्यामा और कुँवर साहिब में बातें शुरू हुईं। कुँवर साहिब ने फरमाया।

'काश ! आप सदा इसी तरह मिलती रहें मुझसे।
(मुस्करा कर एक अदा के साथ) किस तरह ?'
'इसी तरह, बिल्कुल इसी तरह।'

'(मुस्करा कर) क्या बात है इस तरह के मिलने में जरा बताइये तो ?'

'क्या बताऊँ ? निगाहें निगाहों को पहचानती हैं। परन्तु आपकी निगाहें मेरी निगाहों को न पहचान सकीं। दिल को दिल से राह होती है। परन्तु आपके दिल तक मेरा बीमार दिल न पहुँच सका। इससे और अधिक क्या कहूँ ? साहस भी तो नहीं होता। भय लगता है आप की आँखों से, आँखों की नाराजगी से।'

'खूब, बहुत खूब—आप खैर से दार्शनिक भी हैं और कवि भी।'

'मैं कुछ नहीं हूँ। केवल आपका···।'

'कहिये-कहिये रुक क्यों गए ?'

'मैं केवल आपका···'

'हाँ-हाँ, आगे—अरे ! कुछ कहिए भी तो।'

'मैं केवल आपका पुजारी हूँ। आपका चाहक हूं—मैं क्या जानूँ कवि किस जानवर का नाम है। और दार्शनिक किस मूर्ख को कहते हैं ?'

'सच कह रहे हैं आप ?'

'बिल्कुल सच।'

'आप मुझ से प्रेम करते हैं ?'

'हाँ, दिलो जान से।

'आप मुझे चाहते हैं ?'

'हाँ दिल की गहराइयों से।'

'आप मुझसे प्रेम करते ?'

'हाँ, सच्चा प्रेम।'

'अब मैं और आगे बढ़ती हूँ और पूछती हूँ। आप मुझसे शादी करना चाहते हैं ? मुझे अपना बनाकर रखना चाहते हैं ? मेरा जीवन साथी बनना चाहते हैं ?'

'हाँ श्यामा हाँ, यही चाहता हूं—यही इच्छा है। यही जीवन का

अभिप्राय है। आँखों की यह मंजिल और दिल की यही तमन्ना है। (ठण्डी सांस लेकर) सच कहा है 'मीर' ने—

'चाहें तो तुम्हें चाहें, देखे तो तुम को देखें,
ख्वाहिश दिलों की तुम हो, आँखों की आरज़ू तुम।'

'काश तुम समझ सको मेरे दिल को। मेरी तमन्नाओं और मेरे अरमानों को।'

आपके यह शब्द, मेरे दिल पर प्रभाव डाल रहे हैं, अपने दिल को टटोलती हूं तो आपका विचार इसमें बसा नजर आता है। मैंने बहुत संयम किया। अपने दिल से लड़ी, परन्तु अब मेरे संयम का बन्धन टूट रहा है। मेरा हृदय मुझ से विद्रोह कर रहा है। फिर भी एक फांस है जो हृदय में खटक रही है।'

'मैं नहीं समझा कैसी फांस।'

'पुरुषों पर विश्वास करने को जी भी नहीं चाहता। वह निर्मोही होते हैं, हरजाई होते हैं, धोखेबाज होते हैं, और औरत को एक खिलौना समझते हैं——।'

'होगा ऐसा, होते होंगे ऐसे पुरुष भी। परन्तु श्यामा, मुझे दूसरों के सम्मुख न रखो दूसरे-दूसरे हैं और मैं-मैं हूँ—निर्मोही नहीं हो सकता, मैं बेवफाई नहीं कर सकता। मैं तुम्हें धोखा देकर जिन्दा नहीं रह सकता—मैं तुम्हें खिलौना नहीं समझता—मैं पुष्प समझता हूँ जिस पर भँवरा जान देता है। वह ज्योति समझता हूं जिस पर पतंगे जल मरते हैं। मैं चाँद समझता हूँ जिसके इर्द-गिर्द चकोर घूमता रहता है। वह—'

'बस बस, कहाँ तक गिनवाते जाइयेगा मानती हूँ जितने बड़े आप दार्शनिक और कवि है, इससे बड़े आप साहित्यकार हैं—(मुस्करा कर) कहिये अब तो हुए खुश।'

'मेरी खुशी तुम्हारे हाथ में है। केवल खुशी ही नहीं जीवन भी।'

'परन्तु कब तक ?'

'सदा के लिए।'

'नहीं, केवल उस समय तक के लिये जब तक मैं आपकी नहीं बन जाती। जब बन जाऊँगी, मेरी खुशी आपके हाथ चली जायेगी। मेरी जिन्दगी के आप स्वामी बन जायेंगे। तब मैं कुछ न रहूंगी। आप सब कुछ बन जायेंगे। मैं बान्दी बन जाऊँगी। आप स्वामी बन जायेंगे। मैं······।'

'बस करो, श्यामा बस करो। इससे अधिक सुनने की शक्ति मुझ में नहीं हैं। कब तक मेरे दिल पर तीर चलाती रहोगी। मेरी श्रवण शक्ति को घायल करती रहोगी। जो कुछ कह रही हो वह सब गलत है।'

'गलत है ?'

'हाँ बिल्कुल गलत है। मैं तुम्हारा हूँ। मरते दम तक तुम्हारा रहूँगा। तुम मुझ पर शासन करोगी। आखिर मेरी बातों का विश्वास क्यों नहीं करती ?'

'हाँ-हाँ, एक बार नहीं सौ बार कर लूँगी। परन्तु···।'

'इसे क्या करू कि दिल को नहीं एतबार होता !'

'आखिर तुम्हारा यह अविश्वास किस प्रकार दूर हो सकता है। जो कहो वह करने को तैयार हूँ। कहो तो दासता-पत्र लिख दूँ तब तो मानोगी ?'

'जी नहीं दासता-पत्र लिखने की आवश्यकता नहीं है। आपकी बात ही पर्याप्त है।'

'कर लिया विश्वास तुमने मुझ पर ?'

'जी हाँ कर लिया।'

'मान ली तुमने मेरी बात।'

'मान ली।'

'मेरे प्रेम और सच्चाई का विश्वास है तुम्हें ?'

'(मुस्करा कर) किन्तु आपकी सेवा के लिए।'

'फिर वही श्यामा ?'

'देखिये आपकी सेवा कितनी प्रिय है। मैंने वह बात मान ली जिसे मानते हुए मेरा दिल हिचकिचाता है।'

'अब भी हिचकिचाता है तुम्हारा दिल ?'

'इतना तो नहीं। परन्तु कुछ-कुछ।'

यह कह कर हंस पड़ी। कुँवर साहिब भी मजे में आ गए। उन्होंने अपनी मस्ती भरी आँखों से देखा और कहा।

'तो तैयारी करो फिर।'

'कैसी तैयारी ?'

'विवाह की, और किस की।'

'वाह ! उंगली पकड़ते-पकड़ते पहोंचा पकड़ने लगे आप तो।'

'तो मैं जो कुछ समझा था। वह गलत था, धोखा था ?'

यह कह कर कुँवर साहिब इस प्रकार श्यामा को देखने लगे, जैसे वह अपराधी हो जिसे मृत्यु दण्ड मिल चुका हो। दया के लिये प्रार्थना करने के पश्चात न्यायालय की आज्ञा की प्रतीक्षा करता है।

श्यामा ने बड़ी गम्भीरता से कुँवर साहिब को देखा और कहा—'आप इतने शीघ्र निराश क्यों हो जाते हैं ? आपको तो औरत होना चाहिये था।'

'ऐसा क्यों ?'

'और नहीं क्या—इतना कमजोर दिल औरत का होता है।'

'जी नही प्रेमी का हृदय औरत से भी कमजोर होता है।'

'अच्छा साहिब मान लिया आपका प्रेम अब पीछा छोड़िये।'

'फिर आज्ञा दो कि मैं विवाह की तैयारियाँ शुरू कर दूँ।'

'इतनी भी जल्दी ठीक नहीं।'

'अब इन्तजार मौत है मेरे लिए।'

'बड़े बेसबर हैं आप, तोबा !'

'यही सही खुदा करे तुम भी मेरे जैसी बन जाओ।'

'हो जायेगा विवाह भी इतनी जल्दी क्या है ?'

'क्यों नहीं है, मन्जिल मेरे सामने है पर आज्ञा नहीं है कि वहाँ तक पहुँचू । यह आज्ञा जब तक नहीं मिलेगी । मेरा दिल कुढ़ता रहेगा, रोता रहेगा, बेचैन रहेगा ।'

'अब देख लीजिये अपनी ज्यादत्ती ।'

'मैं भला क्या ज्यादत्ती कर सकता हूं ?'

'यह ज्यादत्ती नहीं है कि एक-एक करके अपनी सब बातें मनवा लीं । हद है कि शादी तक की बात हो गई । परन्तु तुम्हें अब भी सन्तोष नहीं हैं ।'

'सन्तोष तो है, परन्तु विश्वास चाहता हूँ ।'

'आखिर किस तरह होगा विश्वास ? कुछ बताईये तो ?'

'कितनी बार कहूं—केवल इस तरह कि तुम हाँ कर दो और मुझे शीघ्र अति शीघ्र वह दिन मना लेने दो जिसके पश्चात हम दोनों एक हो जायें । हमें दुनिया की कोई शक्ति अलग न कर सकेगी ।'

'तो मैं इन्कार कब कर रही हूं ।'

'लेकिन तुम्हारा यह इकरार भी तो इन्कार से कम नहीं है ।'

'आप तो हथेली पर सरसों जमाना चाहते हैं । जरा मुझे भी तो कुछ सोचने का समय दीजिये ।'

'हाँ-हाँ, सोच लीजिए लेकिन सोचने के लिए भी समय निश्चित कर लीजिए ।'

'तो कहो तुम्हीं ।'

'नहीं आप बताइये ।'

'अधिक से अधिक•••।'

'एक वर्ष हां-हाँ ठीक है यह ?'

'जी नहीं अधिक से अधिक एक महीना । यह भी केवल तुम्हारे लिये । नही तो मैं एक भी दिन का समय नहीं देता तुम्हें ।'

'बड़े जल्दबाज हैं आप सच !'

'तुम मेरी जगह होतीं तो दीवानी बन गईं होतीं । वह तो में हूँ

कि अपने आपको काबू में रखे हूँ ।'

श्यामा अभी कोई उत्तर न देने पाई थी कि वर्मा साहिब तशरीफ लाये ।

'अच्छा मैं जाता हूँ श्यामा ।'

'ठहरिए, मैं भी चलती हूँ ।'

श्यामा ने उठकर कुँवर साहिब से बड़ी खुशी से हाथ मिलाया। और वर्मा के साथ अपने घर की ओर चल दी । कुंवर साहिब उसे तब तक टकटकी बांधे देखते रहे जब तक वह ओझल न हो गई ।

३३

मार्ग में वर्मा ने कहा—'बहुत घुल मिल कर बातें हो रही थीं कुँवर साहिब से, जैसे दो पुराने वियोगी गले मिले हों ।'

'तो ? आपको क्या ? जल क्यों गए आप ?'

'फिर नाराज़ हो गईं ।'

'लाख बार कह चुकी हूँ मेरी बातो में हस्ताक्षेप न किया कीजिए । किन्तु आप मौन रहते ही नहीं ।'

'लाख बार नहीं करोड़ बार मौन रहूँ । परन्तु मुझ कम्बख्त से तुम्हारी तबाही भी तो नहीं देखी जाती । मैं कहता हूं तुम्हारे भले के लिए और तुम समझती हो इसे शत्रुता ।'

'फिर कोई नई भलाई सूझी है आपको ?'

'जी हां सूझी तो है, आज्ञा हो तो कहूँ ।'

'फरमाईए ।'

'यह कुँवर साहिब भी एक ही हजरत है । सोच लीजिए ।'

'क्या मतलब ?'

'कह तो रहा हूँ बड़े चलते पुर्जे हैं यह । पुलिस के आदमी से तो बस

दूर ही दूर रहना चाहिए।'

'क्या बात देखी है उनमें आपने ?'

'एक हो तो बताऊँ। बस समझ लो विष की पुड़िया है यह।'

'आपके कहने से समझ लूं ?'

'न समझो बाबा हमारा क्या है ?'

'आखिर कुछ बताईए तो।'

'कुछ नहीं बड़े अच्छे हैं वह, अवतार हैं अवतार।'

'अब जली कटी सुनाने लगे।'

'अरे ! तुम मानती ही नहीं।'

'कैसे मान लूं ?'

'कुछ मालूम भी तो हो।'

'हमारा कहना काफी है।'

'अवतार हैं आप ?'

'परवेज के विषय में जो कुछ कहा था, सच निकला या नहीं ?'

'हाँ निकला तो ?'

'बस यही यहाँ भी समझ लो।'

'समझ लूँ कि कुँवर साहिब बड़े बुरे आदमी हैं ?'

'आज न मानोगी तो कल मानोगी।'

'जिस आदमी से मैं मिलती हूं। वह बुरा क्यों हो जाता है आपकी दृष्टि में, जरा यह तो बताइये !'

'मिलती ही बुरे आदमी से हो मैं क्या करूं ?'

'तो आपका क्या अभिप्राय है सब को छोड़कर आपकी ही रहूँ ! क्यों ?'

'यदि ऐसा करोगी तो कौन सा गजब हो जायेगा। होता ही रहता है दुनिया में यह भी।'

'फिर आप हद से बढ़े।'

'मैं क्यों बढ़ता हद से । तुम ने एक बात कही मैंने उसका सीधा सा उत्तर दे दिया ।'

'क्षमा कीजिये मैं आपके उपदेश नहीं सुनना चाहती । मैं कुँवर साहिब से मिलूँगी और अवश्य मिलूँगी । मुझे कोई रोक नहीं सकती । बड़े आये रोकने वाले ।'

'मिलो—मिलो, जरूर मिलो ।'

'हां-हां अवश्य मिलूंगी । यह भी कान खोल कर सुन लीजिये कि मेरे और कुँवर साहिब के सम्बध अब उस मन्जिल तक पहुंच चुके हैं । जहाँ दूरी मिट जाती है और दो शरीर एक दूसरे में समा कर एक बन जाते हैं ।'

'क्या कह रही हो श्यामा ? आखिर विचार क्या है तुम्हारा ? क्या विवाह करने वाली हो उस कुँवर से ?'

'जी हाँ विचार तो ऐसा ही है ।'

'गजब कर दिया यह क्या सुन रहा हूँ मैं ? काश ! मैं बहरा होता ।'

'आखिर यह सूचना सुनकर आप इतने बेचैन क्यों हो गये ?'

'निर्णय कर लिया तुमने । यह तुम्हारा अन्तिम निर्णय है ।'

'जी हां, निर्णय किये बिना मैं कोई बात मुंह से नहीं निकालती ।'

'क्या कर रही हो श्यामा । इस कम्बख्त कुँवर से तो परवेज ही अच्छा था ।'

'तो आप ही परवेज से शादी कर लीजिए । मेरी नजर में तो कुँवर परवेज ही से नहीं सारी दुनिया से अच्छा है ।'

'अधिकार है तुम्हें भई ।'

'धन्यवाद—किन्तु मैंने आपसे आज्ञा नहीं चाही थी । केवल सूचना दी थी ।'

इस बात चीत के पश्चात वर्मा खामोश हो गया । श्यामा ने भी कोई बात नहीं की । श्यामा अपने घर चली गई और वर्मा साहिब मुंह फूलाए हुए आगे बढ़ गए ।

श्यामा का नियम था, क्लब से आने के पश्चात कुछ देर अध्ययन करती, फिर सो जाती, आज उसने तनिक भी अध्ययन नहीं किया और सोने के लिए लेट गई।

उसकी आंखों के सामने परवेज का चित्र घूम रहा था। परवेज को देख कर उसका दिल फिर धड़कने लगता था। उसका जी चाहता था। परवेज इस समय आये। मुझसे क्षमा मांगे, मैं क्षमा कर दूँ। मेरे सामने प्रेम का इकरार करे। और मैं उसके सामने अपना दिल खोलकर रख दूँ, यह सोचते-सोचते उसका दिल घृणा का दहकता हुआ अंगारा बन जाता था। और यही अंगारा शोले की भाँति भड़कने लगता था। वह सोचने लगती थी, मैंने परवेज को चाहा। दिल और जान से प्रेम किया। पूजती रही उसे परन्तु उसने बदला क्या दिया। वह मुझसे बराबर दूर रहा, उसके दिल में मेरे प्रेम की आग कभी नहीं भड़की। वह सुन्दरता को व्यर्थ समझता रहा। वह नारी को तुच्छ समझता रहा, नारीत्व का मजाक उड़ाता रहा। ऐसा आदमी इस योग्य नहीं, कि उसे चाहा जाये। वह केवल इस योग्य है कि उससे घृणा की जाये, घृणा की आग में जला कर राख कर दिया जाय, भस्म कर दिया जाए, वह दया की भीख माँगे, लेकिन उसको ठुकरा दिया जाये। वह रोये और गिड़गिड़ाये मिन्नतें करे, परन्तु उसकी बात पर कान न धरे जायें। वह प्रेम की भीख माँगे, परन्तु उसकी झोली छीन ली जाये। उससे बदला लिया जायें, और ऐसा बदला लिया जाये कि वह जीवन भर याद करे, दूसरे उसकी दशा देखें, और शिक्षा ग्रहण करें, काँप जाए उसकी दशा देख कर।

फिर उसके सामने कुँवर साहिब का चित्र आया। उस चित्र में रोब भी था और सुन्दरता भी, प्यार भी था और आकर्षण भी, पैसा भी था और व्यक्तित्व भी। दिल उससे मुहब्बत न करे, यह दूसरी बात है, परन्तु उससे निभ सकती है। जीवन उसके साथ व्यतीत किया जा सकता है—जिन्दगा के जीवन साथी की स्थिति से इसे सहन किया

जा सकता है। यह सुन्दर भी है और सुन्दरता का पुजारी भी। यह हुस्न के मन्दिर में माथा टेक सकता है, यह हुस्न को अपने दिल की दुनिया का मालिक मान सकता है। फिर ऐसे आदमी को क्यों निराश किया जाये, क्यों न उसका अनुरोध स्वीकार कर लिया जाए, ठीक है। यही मेरा पति बन सकता है। इससे मैं विवाह करूँगी।

कँवर की तस्वीर एकाकार होकर वर्मा की तस्वीर बन गई। यह तस्वीर अपनी जबान से पुकार-पुकार कर कह रही थी।

'निगाह—लुत्फ के उम्मीदवार हम भी हैं।'

परन्तु श्यामा ने 'हुश' कह कर ऐसी डाँट बताई, कि शीघ्र ही तस्वीर कल्पना पट से गायब हो गई। वह दिल ही दिल में कह रही थी—'हूँ-अ' आशिक बने फिरते हैं। जरा सूरत को एक बार शीशे में देख लें।

'चाहते हैं खुबरूयों को असद आपकी सूरत तो देखनी चाहिए।'

यही उम्मीदवारों के तमाशे देखते देखते उसे नींद आ गई और वह सो गई—बेखबर और मस्त नींद, जो केवल जवानी ही में आती है और जवानी ही में शोभा देती है।

३४

आखिर प्रतीक्षा के दिन समाप्त हुए कुँवर साहिब को श्यामा ने आज्ञा दे दी विवाह के प्रबन्ध करे। उन्होंने बड़े ठाठ-बाठ से प्रबन्ध आरम्भ किए। खानदानी आदमी थे। अच्छे खासे ज़मींदार भी थे, और पुलिस सुपरिंडेंडेण्ट के पद पर थे। रुपये की क्या कमी हो सकती थी उन्हें? दिल खोल कर पानी की तरह रुपया बहाया। ऐसा प्रतीत होता था कि किसी राजकुमार का विवाह हो रहा है। वह धूम धाम हुई कि लोग दंग रह गए। नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति पुलिस के बड़े

अफसर सम्बन्धी सब ही सम्मिलित थे।

श्यामा ने इस अवसर पर अपनी सखियों और कालेज के स्टाफ को भी निमन्त्रण दिया था। श्यामा को दुल्हन बनाने, उसे बनाने सवारने और सजाने में राधा सबसे आगे थी।

व्यर्थ ही प्रन्बध की कर्ता-धर्ता बन गई थी। वह जीनत को भी लाना चाहती थी। परन्तु उसने इन्कार कर दिया और सम्मिलित नहीं हुई।

अतिथियों में परवेज़ भी था। वर्मा साहिब श्यामा से नाराज़ थे। वह नहीं आए।

राधा ने, श्यामा के एक तीर जोर से सीने पर मारा—'यह क्या देख रही हूँ मैं? दूल्हा किसे बनना था और बना कौन?'

श्यामा ने तड़प कर उत्तर दिया—'राधा तुमने जोर से मेरे दिल में चुटकी ले ली, भला इस अवसर पर यह बात कहना कहाँ तक उचित था?'

राधा—'बुरा मान गई?'

श्यामा—'कुछ बातें ऐसी होती हैं, चाहे कितनी भी भलाई के लिए की जायें। परन्तु वह बुरी ही लगती हैं।'

राधा—'अच्छा तो गलती हुई क्षमा कर दो।'

श्यामा ने राधा के इस भोलेपन पर उसे गले लगा लिया। उसने कहा—'जाओ नहीं क्षमा करते।'

राधा—'तो दंड दे लो।'

बड़े प्यार से श्यामा ने राधा के मुखरे की ओर देखा और कहा—'दण्ड दे तो दूँ परन्तु वह दिल कहाँ से लाऊं दण्ड देने वाला?'

राधा—'ओ-हो बड़ा प्यार आ रहा है मुझ पर।'

श्यामा—'क्यों न आए प्यार, जो प्यार के योग्य होता है उस पर प्यार आता ही है।'

राधा—'फिर कुछ कहूँगी तो बिगड़ जाओगी?'

श्यामा—'अब क्या कहोगी भला ?'

राधा—'प्यार के योग्य जो है वह तो देखो—वह बैठा है—वह उस मेज़ पर।'

श्यामा हँसने लगी, और उसने कहा—'बड़ी नटखट हो गई हो तुम राधा, आखिर अपनी असफलता का बदला मुझसे क्यों ले रही हो ?'

राधा—'मेरी असफलता।'

श्यामा—'हां और क्या— कितना कुछ पीछा न किया तुमने परवेज का ! घर तक गईं मनाने लेकिन वह जाल में न आना था न आया। अब इस असफलता में मुझे अपना साझीदार बना कर दिल की भड़ास निकालना चाहती हो क्यों ?'

राधा—'चलो हटो भई, कैसी असफलता ! मैं बिसरी बातें याद नहीं करती, भविष्य को देखती हूँ—बड़े मजे में गुजर रही है मेरी।'

श्यामा—'तुम्हारे ही पदचिन्हों पर तो मैं भी चल रही हूँ। मैं भी भूतकाल को हृदय से निकाल देना चाहती हूं और वर्तमान की रंगीनियों में खो जाना चाहती हूँ लेकिन तुम हो कि घाव फिर छेड़ देती हो।'

राधा—'मैं तो यूँ ही तुम्हें छेड़ रही थी।'

श्यामा—'वाह ! भई।'

'किसी की जान गई। आपकी आदा ठहरी।'

राधा—'जान क्यों गई और वह भी किसके लिए अन्धे के लिए। परवेज इस योग्य कब है कि इसे चाहा जाये। वह तो पत्थर की मूर्ति है, जिसे चाहा नहीं जा सकता। वह एक खुश रंग का कागजी फूल है। जो सुगन्ध विहीन है। इसे हाथ नहीं लगाया जा सकता। जब तक मैं इस सत्यता को न समझती थी। मैं भी कुढ़ा करती थी, जला करती थी, सोचा करती थी। परन्तु जिस दिन से यह सत्यता समझ में आ गई है, न दिल में कसक होती है न आंखों में खटक। तुम इतनी समझदार हो, लेकिन तुम अब तक इस सत्यता को नहीं समझ पाई।'

'अब समझती जा रही हूं इस सत्यता को राधा।'

'अगर यह बात है तो चलो मेरे साथ।'

'कहां ले चलोगी मुझे ?'

राधा—'परवेज़ के पास।'

श्यामा—'क्यों वहाँ जाकर क्या करोगी ?'

राधा—'चलो इससे मिलो। इस तरह मिलो, जैसे तुम्हारे दिल में इसका विचार ही नहीं है। तुम खुश हो इस पर यह सिद्ध कर दो—उठो चलो भी मेरे साथ।

श्यामा—'मैं नहीं जाऊँगी राधा।'

राधा—'क्यों नहीं जाग्रोगी, यही तो कमजोरी है और मैं इस कमजोरी को दूर करके रहूँगी, आग्रो चलें।'

यह कह कर राधा ने श्यामा का हाथ पकड़ा और इसे मेज़ के सामने लाकर खड़ा कर दिया, जहाँ पर परवेज बैठा था।'

'लीजिए परवेज साहिब दुल्हन से मिलिये, देखिये कैसी जच रही है आज श्यामा बहिन।' परवेज उठा उसने राधा और श्यामा से हाथ मिलाया फिर श्यामा को इस नई जिन्दगी पर बधाई दी और एक छोटी सी पुस्तक श्यामा की ओर बढ़ा दी राधा ने पूछा 'यह क्या है ?

'मेरी एक छोटी सी रचना है। अभी अभी प्रकाशित हुई हैं।'

राधा ने श्यामा से कहा—'क्या नाम है इस किताब का।'

'किताबे दिल।'

राधा शीघ्र ही पृष्ठ पलटने लगी। श्यामा जरा चौंकी और राधा के साथ जहाँ से आई थी वही चली गयी श्यामा ने कहा—'क्या झिंगर की तरह सारी किताब चाट के दम लोगी, लाओ जरा मैं भी तो देखूं।' राधा ने किताब श्यामा की ओर बढ़ा दी। यह सौ पृष्ट की एक छोटी सी पुस्तक थी। श्यामा ने शीघ्र ही सारी किताब पढ़ डाली जब पढ़ चुकी तो इस का मुख क्रोध से लाल सुर्ख हो गया। इसने राधा से कहा—

'देख लिया तुमने इस आदमी को।'

'क्या हुआ ?'

'वही कमीनी हरकते और जलील बातें।'

'कुछ कहो भी तो।'

'क्या कहूँ स्वयं ही देख लो।'

यह कह कर श्यामा ने किताब राधा की तरफ बढ़ा दी और कहा—'तनिक चौथा अध्याय देखना।'

राधा ने चौथा अध्याय पढ़ना शुरू किया।

'विवाह का उद्देश्य सन्तान उत्पन्न करना है न कि आनन्द प्राप्त करना, प्रायः आज के मानव इस उद्देश्य को बिसार चुके है, आजकल लोग शादी सन्तान पैदा करने के लिये नहीं करते केवल आनन्द प्राप्ती के लिये ही करते है। इस आधार से जानवर इन्सान से अच्छे हैं वह वासना के दास नहीं है और जो जानवर इस रोग से पीड़ित हैं वह जानवरों से भी गये बीते हैं।'

यह वासना का ही परिणाम है कि पुरुष सुन्दर स्त्री का दास बना रहता है और स्त्री सुन्दर पुरुष की दासी बनी रहती है। सुन्दरता के कारण ही दोनों वासना के हाथों बिक जाते है।

यही कारण है कि जनसंख्या बढ़ती जा रही है और मनुष्यता का हनन होता जा रहा है जो मनुष्य खाना इसलिये खाता है कि जिन्दा रहे वह हृष्ट-पुष्ट रहता है और अधिक दिनों तक जीवित रहता है। वह खाना जो जीवन प्रदायक हो इतना स्वादिष्ट नहीं होता जितना वह खाना जो स्वादिष्ट होता है और बढ़िया होता है इस तरह वह औरतें जो सुन्दर हो इतनी अच्छी नहीं होती जितनी अच्छी वह औरतें होती है जिन्हें दुनियाँ बदसूरत कहती है जो लोग औरतों को स्वादिष्ट खाने की तरह खाते है वह अपने हाथों अपनी जिन्दगी बरबाद करते है।

यह भावना तब तक रहेंगी जब तक खूबसूरती और बदसूरती खेर और खोटे सिक्के की भाँति इन्सानियत के बाजार में चलती रहेगी। आवश्यकता इस बात की है कि सुन्दरता को वरदान न समझ कर

अभिशाप समझा जाये, राधा अभी और आगे पढ़ना चाहती थी पर श्यामा ने किताब छीन ली और क्रोध से पूछा।'

'सच कहना यह शरारत है या नहीं।'

'शरारत क्यों कहती हो परवेज के इन विचारों को कौन नहीं जानता।'

'राधा तुम नहीं जानती हो यह शरारत है आखिर किस तरह ?'

'इस पुस्तक का नाम किताबे दिल क्यों रखा।'

'क्यों रखा ? यह आपत्ति तो हर नाम पर हो सकती है।'

'तुम नही जानती एक बार किताबे दिल पर मुझसे बातचीत हुई थी यह इसकी ओर संकेत है।'

'अच्च्छा यह बात है ।'

'हाँ – और सुनों यह पुस्तक मुझे क्यों दी गई, सिर्फ इसलिये की मेरा मजाक उड़ाया जाये मुझे बताया जाये की हम सुन्दरता को पांव की धूल समझते हैं।'

'होगा यही होगा।'

'परन्तु मैं क्षमा नही करूंगी।'

'क्या करोगी तुम।'

'जो कुछ कर सकूंगी, मैंने पिछली बाते सहन कर ली थी लेकिन इसे सहन नहीं कर सकती मेरे घर पर आ मेरी तोहीन की जाये मेरी जाती का मजाक उड़ाया जाये।'

'यह सब ठीक है पर आखिर तुम करोगी क्या, यह तो बताओ ?'

'अभी कुछ नहीं बताऊंगी समय आने पर तुम्हे सब कूछ प्रतीत हो जायेगा, थोड़ी प्रतिक्षा करो।'

'न जाने कैसी बाते कर रही हो इस समय।'

'मुझे पागल कह दो और मैं इस वक्त हूँ भी पागल परन्तु याद रखो मैं श्यामा हूँ राधा नहीं हूं मैं भूल नहीं सकती, मैं क्षमा नही कर सकती मैं बदला लूंगी जरूर लूंगी चाहे इधर की दुनियां उधर हो जाये देख लेना।'

'अच्छा देख लेंगे भई, अब छोड़ो इस कहानी को !'

३५

श्यामा को अपने दिल की रानी बनाकर कुँवर साहिब इतने प्रसन्न थे कि फुले नहीं समा रहे थे। इन्हें एक ऐसी निधि मिल गयी थी, जिसकी इन्हें आशा तकन थी; वह बहुत पहले से श्यामा को चाह रहे थे। परन्तु उनकी प्रेम, मुस्कराहट और नजरबाजी से आगे नहीं बढ़ सकी। वह बड़े शेरदिल व्यक्ति थे। परन्तु श्यामा के सम्मुख भीगी बिल्ली बन जाते थे। उनमें इतना साहस नहीं था, कि उसकी आँखों का सामना कर सके, और उनकी क्रोध मिश्रित दृष्टि के आगे ठहर सके, वह प्रसन्नता से मिलती थी। मगर उसने कभी उन्हें खुल कर बात करने का अवसर नहीं दिया; परिणाम यह हुआ कि वह अपनी हार्दिक इच्छा जबान पर न ला सके। परन्तु अकस्मात वह इनकी ओर झुक गयी। उसने मुस्कराहट का उत्तर मुस्कराहट से दिया, मुस्कराती हुई आँखों से मुस्कराती हुई आँखें मिला दी। अन्त में स्वयं को उन्हें समर्पित कर दिया, इससे बढ़ कर श्यामा की शराफत क्या हो सकती थी। और इससे बढ़ कर कुँवर साहिब का सौभाग्य क्या हो सकता था। वह अपने भाग्य पर इतराते थे। अपने दिल को प्रसन्नता के झूले-झुलाते थे और अपनी आँखों को सफलता की ज्योति देते हुए उस कमरे में पहुँचे जहाँ श्यामा दुल्हन बनी बैठी थी।'

कुँवर साहिब को आशा थी कि जिस प्रकार वह प्रसन्नता से पागल हुए जा रहे है उसी प्रकार वह भी प्रसन्नता के तूफान में बह रही होगी परन्तु इन्होंने देखा कि श्यामा प्रसन्नता के स्थान पर दुःख के तूफान में घिरी हुई है। उसका चेहरा मुरझाया हुआ है उसकी आँखें भीगी है उसके अधर मुस्कराहट से खाली है। यह देख कर उनके दृढ़ हृदय पर

बिजली गिर पड़ी । वह पास आये, बैठ गये, बड़े प्रेम से इन्होंने श्यामा का हाथ अपने हाथ में लिया और पूछा—'क्या बात है ? यह तुम्हें किस दशा में देख रहा हूँ ।'

श्यामा कुछ न बोली । वह फर्श को टकटकी बांधे देख रही थी । वैसी ही गुमसुम बैठी रही । कुँवर साहिब अपने आप पर काबू न पा पूछने लगे । 'आखिर कुछ बताओ तो ।'

परन्तु वह अब भी मौन रही । यह रंग देखकर वह बहुत घबड़ाए उन्होंने फिर पूछा—'श्यामा तुम चुपचाप क्यों हो ?'

'कुछ नहीं कोई विशेष बात नहीं ।'

'कोई बात तो अवश्य है ।'

'मुझे प्रतीत हो तो तुम्हारी सहायता करूँ ।'

'वैसे तो कोई बात नहीं । यदि है भी तो ऐसी नहीं है कि आप मेरी सहायता कर सकें ।'

'तुम कह के तो देखो प्रतीत हो जायेगा कि मैं सहायता कर सकता हूँ या नहीं ।'

'ऐ-वाह ! जैसे मेरे संकेत की ही तो प्रतीक्षा में हैं आप ।'

'अवश्व, बताओ तो, कहो तो ।'

'क्या कीजिएगा सुन कर ? कह तो दिया आप से कोई सम्बन्ध नहीं है ।'

'न हो सम्बन्ध, लेकिन मैं जानकर रहूँगा । मैं तुम्हें उदास नहीं देख सकता । यह अधर इसलिए हैं कि मुस्करायें, इसलिए नहीं कि शराब की बन्द बोतल बने रहें । यह मुखरा इसलिए है कि पुष्प की भांति खिले, इसलिए नही कि पतझड़ के पत्तों की भांति मुरझा जाए । यह आँखें इसीलिए हैं कि स्वयं मस्त रहें और दूसरों को मस्त कर दें । इस-लिए नहीं कि इनसे दुःख और उदासी की वर्षा होती रहे । यह हुस्न इस-लिए है कि चांद की भांति चमके, सूर्य की भांति प्रकाशमय हो और

सितारों की भाँति जगमगाए। इसलिए नहीं कि दुःख इस पर अधिकार कर ले और यह निढाल हो जाए !

'अरे ! अब समाप्त भी कीजिएगा यह शायरी या नहीं।'

'उसी समय समाप्त करूँगा। जब अपनी उदासी का कारण बताओगी।'

'कह तो रही हूँ—ऊँ-हूँ क्या कीजिएगा सुन के, आप इसमें कुछ भी नहीं कर सकेंगे।'

'भई अगर मैं तुम्हारी यह उदासी न दूर कर दूँ तो मेरा मुँह न देखना कभी। यह अपनी बड़ी-बड़ी मूछें...साफ करवा दूँगा। तुम अभी तक समझी ही नहीं कि कुँवर क्या हैं और क्या कर सकता है ?'

'परवेज की थी एक बात।'

'परवेज ! वही तुम्हारे कालिज का प्रिंसिपल है, वही न।'

'हाँ-वही।'

'फिर उसने क्या किया ?'

'मेरा अपमान।'

'तुम्हारा अपमान किया है उसने ?'

'क्या पागल हो गया है वह ?'

'उसने मेरा अपमान भी किया और जलील भी।'

उसने मुँह चिढ़ाया, उसने मेरा मजाक उड़ाया, उसने मुझे बदनाम किया, उसने मेरी बुराइयाँ की। वह मेरा शत्रु है। मैं उससे बदला लेना चाहती हूँ।'

'लेकिन वह तुम्हारा शत्रु क्यों है ?'

'यह भी नहीं समझे आप ?'

नहीं समझा, समझा होता तो पूछता क्यों ?'

'बड़े भोले हैं आप ?'

'आखिर हुआ क्या बताओ ?'

'वह मुझे फांसना चाहता था, मैं उसकी हो रहूं। पर मैंने उसके प्रेम का उत्तर घृणा से दिया। वह मेरा शत्रु हो गया। अब वह मेरा मज़ाक उड़ाया करता है। मुझे अपमानित और बदनाम किया करता है।' यह कह कर श्यामा रोने लगी। क्रोध के कारण कुँवर साहिब का मुखड़ा लाल सुर्ख हो रहा था। उन्होंने अपनी जेब से सुगन्ध से भरा रूमाल निकाला, श्यामा के आँसू पोंछे और कहा।

'वह स्वयं जलील है कुत्ता!'

'लेकिन दुनियाँ उसे नहीं जानती। वह तो उसे बड़ा ज्ञानी और बुद्धिमान समझती है।'

'समझने दो—मैं भी वह मजा चखाऊंगा कि हजरत जीवन भर याद करें।'

'क्या करोगे तुम? तुम क्या कर सकते हो उसका?'

'देख लेना, समय शीघ्र आ जाएगा।'

'कुछ मालूम भी तो हो।'

'अभी नहीं तनिक धैर्य रखो।'

'धैर्य रखूंगी परन्तु करोगे क्या यह बता दो?'

'काम वह अच्छा होता है जिसकी चर्चा न की जाए। और जो सुगमता से हो जाए।'

'तो कब होगा वह काम?'

'बहुत शीघ्र, तुम्हारी आशा से कहीं पहले।'

'तुम बदला ले लोगे, उससे मेरा।'

'अवश्य—मेरे सीने में प्रतिशोध की अग्नि धधक रही है। मैं उस समय तक चैन से नहीं बैठूंगा जब तक उस कमीने और बदमाश को जलील और बदनाम न कर लूं—वह समझता क्या है अपने आपको? कहाँ श्यामा कहाँ यह? जो श्यामा के पांव की धूल भी नहीं बन सकता। वह इसके गले का हार बनना चाहता है। मैं उसे पाठ सिखा कर रहूँगा।'

'श्यामा ने मुस्करा कर कहा—'लेकिन तुम से तो सुन्दर है वह ?'

'हो सकता है उसकी आकृति मुझसे अच्छी हो। परन्तु उसका दिल मेरे दिल से बाजी नहीं ले जा सकता। मेरा हृदय प्रेम का झरना है, उसका हृदय गन्दगी का ढेर। मैंने सच्चा प्रेम किया और तुम्हें पा लिया। उसने तुम्हें धोखा देना चाहा और मुँह देखता रह गया—मेरी और उसकी क्या तुलना ?'

श्यामा मुस्करा-मुस्करा कर कुँवर साहिब की बातें सुनती रही। कोई और समय होता तो वह श्यामा को मुस्कराता देख कर काबू से बाहिर हो जाते। परन्तु इस समय वह क्रोध में थे। श्यामा की मुस्कराहट से उनका क्रोध कम न हुआ, अपितु बढ़ गया। वह इस समय परवेज़ को अपना शत्रु समझ रहे थे। और उसे प्रतिशोध की आग में जला कर भस्म कर देना चाहते थे। गर्जते हुए उन्होंने कहा—'तुम ने उसी समय क्यों नहीं बताया ?'

'तो क्या कर लेते तुम ?'

'पिस्तौल हर समय मेरी जेब में रहता है। ढेर कर देता वहीं।'

'अब इतना क्रोध भी न करो। मेरा अभिप्राय यह थोड़ी है कि परवेज़ से बदला लेने के जोश में तुम्हें भी खो बैठूँ। तुम्हें अगर मैंने खो दिया, तो जीवन किसके सहारे व्यतीत करूँगी।'

'मेरे दिल को कौन शान्ति पहुँचाएगा। मैं तो यह चाहती हूँ कि सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे।'

'इन बातों को तुम न सोचो श्यामा, सांप अवश्य मरेगा। चाहे लाठी बनी रहे या टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाए।'

'बाज आई मैं इस बदले से। नहीं चाहती मैं बदला वदला—वाह मैं तो एक बात कह कर गुनहगार बन गई।'

'यह तुम्हारा कर्तव्य था। मैं प्रसन्न हूँ कि तुम ने अपना कर्तव्य निभा दिया। अब देखना मैं अपना कर्तव्य किस प्रकार निभाता हूँ।'

'अवश्य निभाओ अपना कर्तव्य, परन्तु सीमा में रह कर।'

'क्या मतलब ?'

'कोई ऐसा काम न कर बैठना, जिससे तुम पर कोई आँच आ जाये—अच्छी तरह याद रखो तुम्हें पा कर मैं अपने आपको संसार की सबसे भाग्यवान स्त्री अनुभव कर रही हूँ। मेरा यह सौभाग्य न छीन लेना ?' यह कहते-कहते श्यामा की आँखें भर आईं, इसका गला रून्ध गया और आवाज भर्रा गई, कुँवर साहिब ने प्रेम भरी नजर से श्यामा को देखा और बड़े प्रेम से पूछा—'इतना चाहती हो तुम मुझे ?'

'क्यों न चाहूँ ? दिल को दिल से राह होती है, आप बताइए आप मुझे कितना चाहते हैं ?'

'मैं ! दुनिया की कोई वस्तु मुझे तुम से प्रिय नहीं है। यहाँ तक कि प्राण भी।'

'फिर यही आप मेरे विषय में भी क्यों नहीं समझते ?'

'फिर आप ! तुम कहते-कहते आप क्यों कहने लगी मुझ से आखिर यह परायापन कब तक ?'

'अच्छा तुम सही—तुम तो बोलने भी नहीं देते हमें।'

३६

परवेज के स्वभाव से कुँवर साहिब ने पूरा-पूरा लाभ उठाया। वह भी एक चंचल हृदय युवक था। परवेज रखरखाओं, इन गुणों से वह बिल्कुल खाली था। उसके मिलने वालों में कांग्रेसी भी थे। और मुसलिमलीगी भी, वह सरकारी व्यक्ति से भी मिलता था और सरकार के शत्रुओं से भी, वह किसानों का भी हमदर्द था और जमींदारों से भी उसकी मित्रता थी। वह मजदूरों का भी मित्र था और सरमायेदारों से भी मिलता था, वह देश भक्तों को भी पसन्द करता था और टोडियों से

भी बड़े चाव से मिला करता था। उसका यह उच्च विचार इसलिए नहीं था कि वह सब को पसन्द करता था। सब को अच्छा समझता था, सब को देखना चाहता था अपितु इसलिए कि यह देखना चाहता था कि कौन कितने पानी में है। यह स्टेज पर चीखने वाले, समाचार पत्रों में वक्तव्य देने वाले, यह बड़ी-बड़ी सभाओं में जोशीले भाषण देने वाले, यह सरकार के संकेत पर घर बाहर लुटा देने वाले, यह देश और जाति के नाम पर जेल जाने और चक्कियाँ पीसने वाले, यह मजदूरों के आशिक, यह किसानों के हमदर्द, यह पूँजी एकत्रित करने वाले, वह काले बाजार वाले, आखिर हैं क्या ? इनके सम्मुख वास्तविक नियम क्या हैं ? इनके जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या है ? यह जी किस लिए रहे हैं ? यह मरना किस लिए चाहते हैं और मरना चाहते भी हैं या नहीं ? यही सब देखने और परखने के लिए वह सब से मिलता था सब को सुनता था, सब को छेड़ता था। और फिर ऐसी क्रान्तिकारी रचनायें लिखता था, जिसे पढ़ कर सब तिलमिला उठते थे। वह सब के सम्मुख एक दर्पण रख देता था : जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी आकृति देख सकता था वह ऐसी-ऐसी चुटकियाँ लेता था कि लोग बेताब हो-हो जाते थे। वह ऐसी-ऐसी नसें पकड़ता था कि सब तिलमिला उठते थे। लेकिन इसकी बातें ऐसी तीखी, ऐसी खरी और ऐसी बेलाग होती थीं कि इसकी सब कुछ सुनने के पश्चात कुछ कहने का, इसकी बात काटने का साहस किसी में नहीं होता था।

एक दिन दो बजे रात को पुलिस ने इसके घर को घेर लिया—वह निश्चिन्त सो रहा था। कुँवर साहिब ने उसे जगाया। और रोबीली आवाज में बोले :

'चलिए हमारे साथ।'

'कहाँ ले चलेंगे आप मुझे ?'

'हमारा काम तो यही है कि अदालत के सामने पेश कर दें। फिर आप जाने और अदालत जाने।'

'लेकिन मेरा अपराध क्या है ? यह भी बता दीजिए।'

'प्रत्येक देश-द्रोही, गिरफ्तारी के समय बड़ा मासूम बन जाता है।'

'यह बात है, मैं देशद्रोही हूँ।'

'श्रीमान जी।'

'मैं समझ गया चलिए।'

दूसरे दिन एक देश-द्रोही के रूप में परवेज़ अदालत में पेश किया गया। सबसे पहले जमानत की समस्या उठी। खान बहादुर साहब बड़ी-से-बड़ी जमानत देने को तैयार थे। लेकिन परवेज़ ने अदालत के सम्मुख कहा—'मैं जमानत पर छूटना नहीं चाहता—काम करते-करते थक गया हूँ, विश्राम करना चाहता हूँ। जेल की ऐकान्त में विश्राम का अधिक समय मिलेगा मुझे।'

बहुत से लोग अदालत में मुकदमे की कार्रवाई देखने आये थे। सब को परवेज़ की गिरफ्तारी पर आश्चर्य था। सब बड़ी दिलचस्पी से उसे देख रहे थे। जब वह एक अपराधी के रूप में जमानत पर छूटने से इन्कार करके हवालात की ओर चला तो उत्सुक निगाहें बार-बार उस पर पड़ रही थी। वह इस निडरता और धैर्य से जेल की ओर जा रहा था। जैसे एक खिलाड़ी मैदान में उतरता है। चेहरे पर मुस्कराहट आँखों में शरारत, बातों में शोखी।

दूसरे दिन से मुकदमे की कार्रवाई नियमित रूप से आरम्भ हो गई, पुलिस की ओर से यह सिद्ध कर दिया गया कि वह क्रान्तिकारी विचारों वाला, एक खतरनाक विद्रोही है। एक पुलिस के गवाह ने यह भी सिद्ध कर दिया कि वह परवेज का सहायक था। परन्तु जब परवेज की बारी आई न तो उसने अपनी सफाई में कुछ कहा न किसी गवाह पर बहस की, न अपराध अस्वीकार किया, न्यायाधीश के विवश करने पर यदि उसने कहा तो केवल इतना—'कि मैं एक अकेला आदमी, इतने शरीफ

और सच्चे आदमियों को कैसे झुठला सकता हूँ मुझे शर्म आती है इनको झुठलाते हुए। मुझे अपना इतना ध्यान नहीं है जितना इन पुलिस के गवाहों के धर्म का, वास्तव में ऐसे नेक और सच्चे व्यक्ति झूठ नहीं बोल सकते। इन्होंने जो कुछ कहा है उसका एक एक शब्द सत्य है। अब अदालत को अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिये, और अपने अधिकारों से पूरा-पूरा लाभ उठा कर मुझे कड़े से कड़ा दण्ड देना चाहिए।

सब को विश्वास था कि परवेज़ निर्दोष है उसने कोई अपराध नहीं किया है। उसका वक्तव्य उच्च न्यायालय में हलचल मचा देगा। उसकी जोरदार बहस से गवाहों की जबान परिश्रम करने लगेगी। परन्तु यह सब न हुआ। उसने अपराध स्वीकार कर लिया। और मुस्करा-मुस्करा कर न्यायालय के न्याय की प्रतीक्षा करने लगा।

न्यायालय ने समस्त घटनाओं को सम्मुख रख कर, परवेज को दो साल की सख्त सजा दे दी। इस समय कुँवर साहिब का मुखरा प्रसन्नता से खिला जा रहा था। श्यामा का मुखरा न जाने क्यों एक अपराधी की भाँति पीला था और मुमताज की आँखों से आँसुओं की वर्षा हो रही थी। परवेज यह मुस्कराते हुए चेहरे और रोती हुई आँखें एक नजर देखता हुआ अदालत से फिर जेल चला गया। थोड़े समय के लिये नहीं, दो साल का लम्बा समय व्यतीत करने के लिये।

खान बहादुर का दिल यद्यपि परवेज़ से साफ नहीं था। लेकिन उनके हृदय में उसके व्यवहार, चरित्र और धैर्य की बड़ी इज्जत थी कि उपाधि प्राप्त होने के बावजूद भी परवेज़ जैसे देश-द्रोही की जमानत देने पर तैयार हो गए थे। उन्होंने अपनी ओर से एक योग्य वकील का इन्तजाम भी किया था। लेकिन परवेज ने न उनकी जमानत स्वीकार की और न ही इनके वकील को कुछ कहने का अवसर दिया। अपराध स्वीकार कर लिया और खुशी-खुशी जेल चला गया।

इस घटना से खान बहादुर साहिब बहुत प्रभावित हुए। परन्तु वह

आदमी थे दृढ़ हृदयी, अपनी परेशानी और उलझन किसी को नहीं बताई। जब लोग अदालत से बाहिर जाने लगे, तो मुमताज ने श्यामा के पास से गुजरते हुए धीमी आवाज में कहा—

'आज जा के दिल ठण्डा हुआ।'

३७

जेल में पहुँच कर ऊँच नीच का अन्तर समाप्त हो जाता है। सब एक ही समानता पर आ जाते हैं। समानता का जो नमूना जेल में नजर आता है, वह अन्यत्र कहीं नहीं। यदि कुछ अन्तर होता है तो उन राजनैतिक बन्दियों की जिन्दगी में, जो बड़े लीडर होते हैं और अहिंसा का उपदेश देते-देते जेल में आ बसते हैं। इनमें और साधारण बन्दियों में, ऊँच नीच की दीवार खड़ी कर दी जाती है। वह अच्छा खाते हैं, अच्छा पहनते हैं, पृथक रहते हैं, दूसरे बन्दियों से सेवा करवाते हैं। पुस्तकों का अध्ययन करते हैं, पत्र लिखते हैं, सिगरेट पीते है, टहलते हैं, घर से अधिक आनन्द में रहते हैं। परन्तु राजनैतिक बन्दियों और उनकी जिन्दगी में कोई अन्तर नहीं होता। जो हिंसा के तोड़-फोड़ करने के या स्वतन्त्रता के लिए लड़ने के अपराधी होते हैं। उन्हीं खूनी और लुटेरों के साथ एक ही कोठरी में जीवन व्यतीत करना पड़ता है।

परवेज़ यद्यपि उच्च शिक्षा प्राप्त था, यद्यपि वह राजनैतिक कैदी था। लेकिन बहुत कठोर अपराध पर उसे दो साल के लिये जेल भेजा गया था। इसलिए उसमें और साधारण कैदियों में कोई अन्तर नहीं था।

इस बर्ताव से उसके दिल को दुःख नहीं था। जिस रुचि और आनन्द, प्रसन्नता से वह क्लब की रंगीन जिन्दगी व्यतीत करता था। उसी रुचि और आनन्द, प्रसन्नता से वह जेल के उन साथियों के साथ रह रहा था जो खून के अपराधी थे, जो डकैती के अपराध में यहाँ आए थे, जो

लुटेरे थे जिस भाँति वह अपने मित्रों से गम्भीर विषयों पर बातें किया करता था। उसी भांति वह लुटेरों, डकैतों और खूनियों से भी किया करता था। कभी अपनी कहता था और कभी उनकी सुनता था। कभी वह सेन्ध की दार्शनिकता प्रतीत कर रहा है और कभी गर्दन मरोड़ देने की कला जान रहा है। वह लोग भी परवेज़ से ऐसे घुल-मिल गए थे, उसकी बातों और अदाओं पर ऐसे रीझ गए थे कि घन्टों उनकी बातें सुना करते थे और उसके अनुरोध पर अपने जीवन के कारनामे भी कभी कभी लज्जित होकर सुनाया करते थे। वह बातों-बातों में उपदेश भी कर जाता था और कर्तव्य निभाने की भी, उसकी यह बातें सीधी दिल में उतरती थी। धीरे-धीरे वह इन कैदियों की टोली का नायक बन गया, जो वह कह दे वह पत्थर की लकीर बन जाये। इस प्रकार न जाने कितनों को बहुत अच्छे मार्ग पर ले आया। न जाने कितने पशुओं को उसने मानव बनाया, न जाने कितनी अपवित्र आत्माओं को उसने पवित्रता के पाठ पढ़ा दिये, लेकिन उसने यह सब कुछ लीडर या उपदेशक बन कर नहीं, अपितु मित्र और हमदर्द बन कर।

परवेज में एक विशेष गुण यह था कि वह जिस वातावरण में जाता था, उसी में खो जाता था। भूत उसके लिये बिसरी कहानी थी, भविष्य उसे अर्थ कोष में एक निरर्थक शब्द था। जो कुछ था वह केवल वर्तमान था, बस, वर्तमान में ही वह मग्न रहता था। न भूत का विचार न भविष्य की चिन्ता, जब तक वह जेल के जीवन से परिचित नहीं हुआ था। उसने कभी भूले से भी यह नहीं सोचा था कि जेल का जीवन कैसा होता है। वहाँ किस प्रकार के व्यक्ति रहते हैं। उनका चरित्र और विचार क्या होते हैं? उनका रोग और बीमारी क्या है। परन्तु वह जब से जेल का निवासी बना था। वह यह भूल गया था कि जेल से बाहिर की दुनिया में क्या हो रहा है या क्या हुआ करता था। अब वह इसी दुनिया में प्रसन्न था। अब उसे केवल इसी दुनिया की चिन्ता थी। अब वह इसी दुनिया का हो चुका था। जब तक वह जेल

नहीं आया था, उसने तनिक भी नहीं सोचा था कि उसे कभी जेल भी जाना पड़ेगा। परन्तु जब से वह यहाँ था उसके दिल में कभी यह इच्छा नहीं उत्पन्न हुई कि सजा समाप्त हो और वह जेल से बाहिर जाये। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे उसे आयु भर की सजा हुई है और वह सारा जीवन यहीं इसी वातावरण में इन्हीं लोगों के साथ व्यतीत करने पर विवश है। उसका यह रंग देख-देखकर उसके जेल के साथी उस पर और अधिक भरोसा करने लगे थे। और अधिक उसके दिल के समीप हो गए थे और अधिक उसका सम्मान करने लगे थे।

जो कार्य उसको सौंपे गए थे। इन्हें वह बड़ी सतर्कता और कर्तव्य पालन की भावना से वह पूरा करता था। जेल के मित्रों ने बार-बार प्रयत्न किया कि उसका हाथ बटायें, उसका कार्य स्वयं कर दें। उसे राजा बनाकर रखें और स्वयं उसके दास बन कर रहें, परन्तु उसने कभी अपने परिश्रम में कभी किसी को सम्मिलित नहीं होने दिया। अपना कार्य वह स्वयं करता रहा और पूरी जिम्मेदारी के साथ। जेलर ने यह रंग ढंग देख कर उसे कुछ सुविधायें दे दी थीं। अब उसे आज्ञा थी कि पुस्तकालय में जा कर पुस्तकों का अध्ययन कर सकता था। पुस्तकालय से पुस्तकें ला कर अपनी कोठरी में पढ़ सकता था।

एक दिन वह पुस्तकालय में बैठा कोई पुस्तक देख रहा था कि एक दुबली-पतली स्त्री सफेद कपड़ों में दुःख-दर्द की मूर्ति बनी उसके सम्मुख आई। दोनों के नैन चार हुए। परवेज़ के मुँह से अनायास ही निकल गया—'सरोजिनी !'

'जी, मैं हूँ !'

'तुम यहाँ कैसे ?'

'जब आप आ सकते हैं तो मैं क्यों नहीं आ सकती ?'

'क्या तुम जैसी भोली-भाली स्त्री से भी कोई अपराध हो सकता है।'

'जब आप जैसे देवता स्वरूप मानव अपराधी हो सकते है, तो मैं क्यों नहीं कर सकती कोई अपराध ?'

'तुम्हें बताना पड़ेगा सरोजिनी, तुम यहाँ कैसे आईं ? क्यों आईं,

क्या दोष लगाया गया तुम पर ?'

पहले तो सरोजिनी टालती रही, परन्तु जब परवेज ने हठ की तो उसने सक्षेप में अपनी कहानी सुनाई—'मैं अब एक विधवा स्त्री हूं। मेरे पति की मृत्यु हो चुकी है। उन्हें सन्तान की इच्छा थी, परन्तु उनकी यह इच्छा पूरी न हुई। सारी सम्पति उन्होंने मेरे नाम लिख दी थी। मैं उन्हें प्रेम न कर सकी। लेकिन वह मुझे बहुत चाहते थे मैं उनकी सेवा न कर सकी। परन्तु उन्होंने मेरी सेवा में अपना जीवन व्यतीत कर दिया। मैं उन्हें कुछ न दे सकी। लेकिन उन्होंने अपना सब कुछ—जो कुछ भी उनके पास था दिल, आभूषण, रुपया, मकान, सम्पति मुझे दे डाली।

मैंने सोचा—जिन्दगी में उनकी कोई सेवा मैं न कर सकी। तो अब उनके मरने के बाद जो कुछ कर सकती हूँ कर डालू। मैंने जायदाद, सम्पति किसानों को दे दी, रुपया मजदूरों को दे डाला, मकान उनके सम्बिन्धियों को दे दिया और स्वयं देश सेवा में अपना समय गुजारने लगी। अब मेरे दिल में न कोई आरजू थी न तमन्ना। उसी जमाने में स्वतन्त्रता का आन्दोलन चला। एक जलूस का नेतृत्व करती हुई गिरफ्तार कर ली गई। मुकदमा चला और एक वर्ष की सजा काटने यहाँ चली आई। तो आप मिल गये—खूब गुजरेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो। लेकिन यह तो बताइये आप यहाँ कैसे पहुंच गये ?

'तुम्हें कुछ नहीं मालूम ?'

'बिल्कुल नहीं।'

'मुमताज से भी नहीं मिली तुम ?

'जी नहीं, जब से विधवा हो कर आई हूँ, अपनी किसी सहेली से नहीं मिली। न मुमताज से और न जीनत से। मुमताज से तो इतना नहीं, परन्तु जीनत से मिलने को तो मेरा बहुत दिल चाहता था।'

'फिर क्यों नहीं मिलीं तुम उससे ?'

'नहीं मिली, क्या करती मिल कर ?——एक बुझा हुआ दिल

दूसरे बुझे हुए दिल को गर्मी नहीं पहुँचा सकता। यदि मैं यह देखती कि वह प्रसन्न है, कुशलपूर्वक है, आबाद हैं, तो अवश्य मिलती। उसकी खुशी मेरी खुशी बन जाती। लेकिन जब वह मेरी भाँति दुःखी हैं तो उससे मिलकर उसका दुःख बढ़ाने के अतिरिक्त और क्या कर सकती थी ?'

ज़ीनत का वर्णन सुन कर परवेज़ के दिल में एक हलचल सी पैदा हुई लेकिन वह दबा गया। उसने कहा—'क्यों उसे क्या हुआ ?'

'जब आप नहीं जानते तो मैं क्या जानूं ?'

'तुम्हें जानना चाहिये, तुम उसकी सखि हो। मैं उसका कौन हूँ भला ?'

'कोई नहीं ! आप किसी के कोई बन ही नहीं सकते।'

'यही तो मैं भी कह रहा था।'

'यही तो मैं भी कह रही थी।'

परवेज़ आश्चर्य से सरोजिनी का मुँह देखने लगा। सरोजिनी तनिक मुस्कराई, पुनः गम्भीर हो गई। जैसे घने अन्धकार में कभी-कभी बिजली चमक जाती हैं, और फिर अन्धेरा छा जाता है, तनिक चमक लुप्त हो जाती है।

बड़ी देर तक सरोजिनी और परवेज़ बातें करते रहे। दोनों एक दूसरे के दिल को टटोलने का प्रयत्न कर रहे थे। लेकिन दोनों अपना भेद दिये बिना दूसरे का चोर पकड़ना चाहते थे, परिणाम यह हुआ कि बातें बड़ी देर तक होती रहीं, लेकिन किसी पर किसी का भेद न खुल सका, कोई किसी के चोर को न पकड़ सका।

जब सरोजिनी जाने लगी तो परवेज़ ने कहा—'कभी-कभी मिलती रहना सरोजिनी।'

'अवश्य मिलूँगी—आप से तो मुझे बहुत कुछ सीखना है।'

'सरोजिनी ने यह कहा और चली गई अपने वार्ड में। परवेज़ आश्चर्य से उस समय तक उसे देखता रहा जब तक वह नजरों से ओझल न हो गई।

३८

DEVAL

जीनत के विवाह की समस्या अब निश्चित रूप धारण करती जा रही थी। वह खोई-खोई सी रहती थी, न मुँह से बोलती थी न सर से खेलती थी। उसका स्वास्थ्य क्रमशः गिरता जा रहा था। वह एक अनजान समस्या बन गई थी जिसे कोई नहीं सुलझा सकता था। वह एक पहेली बनी हुई थी, जिसे कोई नहीं बूझ सकता था। बस एक मुमताज थी जो उसके भेद से परिचित थी। उसके गम को समझती थी, लेकिन वह विवश थी, बेबस थी, वह जानती थी परवेज को सीधे मार्ग पर नहीं लाया जा सकता। वह जानती थी जीनत को उसके मार्ग से हटाया नहीं जा सकता। दोनों जिद्दी हैं, मनमानी करते है, दोनों चट्टान की भाँति कठोर हैं और पर्वत की भांति अटल हैं, परिणाम कुछ भी हो लेकिन न परवेज को जीनत से विवाह करने के लिये मनाया जा सकता है, न जीनत को विवश किया जा सकता है कि वह किसी दूसरे को अपना जीवन साथी बना ले।

माता पिता ने निर्णय किया कुछ भी हो लेकिन अब जीनत दुल्हिन बनेगी, उसका विवाह अवश्य हो कर रहेगा, यह नहीं हो सकता कि सारी जिन्दगी कुँवारी बैठी रहे, उसकी जिद्द पर खानदान की मर्यादा न्यौछावर नहीं की जा सकती, उसकी मनमानी पर खानदान का सम्मान भेंट नहीं चढ़ाया जा सकता।

खान बहादुर साहिब ने बिरादरी के अन्दर और बाहिर बहुत से योग्य और सुन्दर अमीर और होनहार युवकों को परखा, जाँचा और पसन्द कर लिया। उसकी दृष्टि में विशेषकर चार नौजवान जँचे। वाजिद, रफीक, महमूद और तसलीम और सब के सब गुणवान थे। वाजिद अभी आई० सी० एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था। रफीक ने इसी वर्ष इंजीनियरिंग का डिप्लोमा अच्छे अंकों से प्राप्त किया था। महमूद लन्दन

से एम० डी० की डिग्री लेकर आया था और बहुत सफल चिकित्सा कर रहा था। तसलीम ने व्यौपार आरम्भ किया था और दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा था। यह सब नवयुवक प्रत्येक दृष्टिकोण से अच्छे चरित्र और आदतों के स्वामी थे। इनमें से जिस किसी को जीनत पसन्द कर ले, खान बहादुर साहिब उसी से जीनत का विवाह कर देंगे और यदि इन चारों में से वह किसी को भी पसन्द न करे तो भी उन्हें कोई आनाकानी नहीं। अपनी पसन्द और इच्छा से जिससे चाहे विवाह कर ले लेकिन विवाह उसे करना ही पड़ेगा। बिन विवाह वह जीवन व्यतीत नहीं कर सकती, यह उनका अन्तिम और अटल निर्णय था।

एक ओर यह चारों नवयुवक थे। वह एड़ी चोटी का जोर लगा रहे थे। और यह चाहते थे कि शीघ्र अति शीघ्र उनके भाग्य का निर्णय कर दिया जाये। दूसरी ओर जीनत थी, जिसने इनमें से किसी को भी पसन्द करने से इन्कार कर दिया। अब समस्या बहुत टेढ़ी हो गई थी। खान बहादुर साहिब की नम्रता क्रोध में परिवर्तित होने लगी थी। अब तक वह प्रेम से काम निकालना चाहते थे, परन्तु अब न चाहते हुए भी वह कठोरता और जबरदस्ती पर उतर आये थे। अन्त में बड़े सोच-विचार के बाद खान बहादुर साहिब ने मुमताज से कहा कि वह किसी प्रकार जीनत को समझा बुझा कर मार्ग पर लाये। वह बुझे हुए दिल और टूटी हुई हिम्मत के साथ जीनत के कमरे में पहुँची, जीनत इस समय खामोशी से कोई पुस्तक पढ़ रही थी, मुमताज ने दरवाजे पर पहुँच कर आवाज लगाई।

'मैं आ सकती हूँ अन्दर?'

'कौन मुमताज?—आओ।'

मुमताज आई और जीनत के बिल्कुल समीप बैठ गई।

'मिठाई खिलाओ तो एक बात कहूँ।'

'मिठाई चाहे जितनी खा लो, लेकिन मैं कोई बात सुनने के लिए तैयार नहीं हूँ?'

यह उतर सुन कर मुमताज सटपटा गई, उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि बात किस प्रकार आरम्भ करे।

'जीनत तुम्हे क्या हो गया है ?'

'पागल हो गई हूँ—अब कहो क्या कहती हो ?'

'काश ! तुम पागल ही होतीं।'

'हो जाऊंगी, कुछ दिन और प्रतीक्षा करो।'

'मुझ से भी ऐसी रूखी-रूखी बातें करोगी जीनत।'

'फिर तुम मुझे छेड़ती क्यों हो ?'

'क्या छेड़ा मैंने तुम्हें ?'

'तुम क्या कहने आई थीं; क्या मैं समझती नहीं ?'

'मान लिया समझ गईं तुम, लेकिन यह तो बताओ, तुम्हारी यह जिद्द चलेगी माता-पिता के सामने ?'

'क्यों नहीं चलेगी ?'

'कहीं ऐसा हुआ है कि खाते-पीते घर की लड़की आयु भर यूं ही कुंवारी बैठी रहे ?'

'नहीं हुआ है तो अब हो जाएगा।'

'अब नहीं हो सकता, अब भी नहीं होगा।'

'यही तो पूछती हूं आखिर क्यों ?'

'यह अनहोनी बात है।'

'बहुत से पुरुष विवाह नहीं करते उनकी प्रशंसा होती है। फिर यदि कोई स्त्री विवाह न करे तो उसके पीछे लोग क्यों पड़ जाते हैं ? उसकी प्रशंसा क्यों नहीं होती ? उसे गालियाँ क्यों दी जाती हैं ?'

'धान्धली है पुरुषों की और क्या ?

'जब यह मानती हो, तो मुझे समझाने क्यों आयी हो ? पिताजी को क्यों नहीं समझाती ?'

'वह भला मेरे समझाये समझेंगे, तुम भी कैसी बातें करती हो ?'

'तो मुझे भी न समझाओ, यह तो कर सकती हो। या यह भी नहीं कर सकती तुम ?'

'यह कर सकती हूं, लेकिन करना नहीं चाहती ?'

'क्यों ?'

'यदि मैं हट गई मार्ग से तो तुम पर अत्याचार होंगे। और मैं यह नहीं देख सकती कि अत्याचार करे कोई तुम पर।'

कुछ देर तक खामोशी रही। जीनत ने मुमताज की बात का कोई उत्तर न दिया। थोड़ी देर तक चुप रहने के पश्चात मुमताज ने कहा—'आखिर वाजिद में क्या बुराई हैं।'

'कुछ नहीं।'

'वह बड़ा अच्छा आदमी है।'

'बेशक मानती हूँ अच्छा आदमी है।'

'सुन्दर भी है और गुणवान भी।'

'हाँ यह भी मानती हूँ।'

'फिर क्यों नहीं कर लेतीं तुम उससे विवाह ?'

'मेरी मूर्खता है जो मैं इतने अच्छे आदमी से विवाह नहीं करती। तू बुद्धिमान है, तुम ही कर लो उससे विवाह।

मुमताज पुनः निरुत्तर हो गई, सारी तेजी और चालाकी समाप्त हो गई, कोई जवाब उससे न बन पड़ा। वह दिल ही दिल में कहने लगी, सच तो कहती है जीनत। जिससे दिल न मिले उससे शादी कैसे की जा सकती है ? लेकिन कम्बख्त ने दिल लगाया भी तो कहां ?'

बड़ी देर तक दोनों में बातचीत होती रही। लेकिन कोई परिणाम न निकला। मुमताज का कहना व्यर्थ सिद्ध हुआ और उसने खान बहादुर साहिब से साफ-साफ कह दिया कि जीनत किसी तरह राजी नहीं होती विवाह पर वह किसी से विवाह करना नहीं चाहती।

मुमताज का यह जवाब सुनकर खान बहादुर साहिब बहुत क्रोधित

हुए, उसी समय उन्होंने निर्णय कर लिया कि जीनत पागल है, उसकी बकवास का हमारे निर्णय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। उसे बता दो कि वाजिद से बात पक्की कर ली गई है। तैयारियाँ शुरू हो गई हैं। एक सप्ताह के पश्चात वाजिद इस घर में दुल्हा बन कर आयेगा और जीनत को दुल्हन बना कर ले जायेगा। यह अन्तिम और अटल निश्चय है इसमें परिवर्तन नहीं हो सकता।

मुमताज ने लाख-लाख खान बहादुर साहिब को ठण्डा करने का प्रयत्न किया ऊँच-नीच समझाई, लेकिन वह एक जिद्दी व्यक्ति थे, जब एक निर्णय कर लिया तो अब दुनिया की कोई शक्ति उनके निर्णय मैं परिवर्तन नहीं कर सकती थी।

मुमताज ने खानबहादुर साहिब का यह निर्णय जीनत को सुना दिया। उसने मौनता से सुन लिया, कोई उत्तर न दिया। दूसरे दिन से घर में विवाह की तैयारियाँ आरम्भ हो गईं। जीनत खामोशी के साथ थी। प्रातः जब वह सोकर उठी तो बड़ा तेज बुखार चढ़ा हुआ था दौड़ धूप आरम्भ हो गयी, एक से एक डाक्टर और बड़े से बड़ा हकीम उपस्थित था, बुखार उतारने के लाख लाख प्रयत्न किये गये, लेकिन वह था कि घटने के स्थान पर बढ़ता जा रहा था।

तीसरे दिन भर भरा कर चेचक निकल आयी, शरीर का कोई अंग ऐसा न था जहां चेचक के बड़े-बड़े दाने न हों, यह अंग देखकर मां बाप के हाथों के तोते उड़ गये, ड़ेढ़-दो महीने के इलाज और सेवा के बाद जीनत बिल्कुल अच्छी हो गयी, लेकिन अब धरती आकाश बदल चुके थे, जीनत का चेहरा कुरुप और भयानक हो चुका था, वह जवानी का रस, वह यौवन की मस्ती, वह हुस्न का निखार सब समाप्त हो चुका था जो दिल जीनत के लिये आहें भरते थे, उनमें अब उसके लिए कोई जगह न थी, वाजिद को जीनत का यह हाल मालूम हुआ, तो उसने पत्र लिख कर खान बहादुर साहिब को सूचित किया कि वह जीनत से विवाह नहीं कर सकता खान बहादुर साहिब बहुत क्रोधित हुए, लेकिन जबान से कुछ

न बोले क्या बोलते ? क्या कहते ? विवाह की तैयारियाँ समाप्त हो गई। आभूषण फिर ट्रंक में बन्द कर दिए गए। बहुमूल्य वस्त्र कुछ सिले, कुछ बेसिले फिर से बन्द कर दिये गये। खान बहादुर साहिब ने और कई जगह जीनत के लिए प्रयत्न किया। लेकिन हर जगह से साफ जवाब मिला। अब जीनत से विवाह करने पर कोई भी तैयार नहीं था।

एक दिन मुमताज जीनत से मिलने आई। बीमारी के समय उसने बड़ी सेवा की थी। वह जीनत के पास बैठी हुई थी और दिल ही दिल में उसकी इस दशा पर कुढ़ रही थी न जाने जीनत ने क्या सोचा। मुस्करा कर मुमताज से कहा—'मिठाई खिलाओ तो एक बात कहूँ—बड़े मजे की बात है।'

'क्या बात है कहो ?'

'पहले मिठाई खिलाओ।'

'मिठाई भी खिला दूंगी, पहले कहो तो।'

'कह दूँ ?'

हाँ-हाँ कहो, कहती क्यों नहीं ?'

'वाजिद ने शादी से इन्कार कर दिया, उसने कह दिया, मैं जीनत से शादी नहीं कर सकता।'

'हाँ मालूम है मुझे।'

'मालूम है, परन्तु बधाई तो दी नहीं तुमने ?'

'मुझे मत छेड़ो जीनत, मेरा दिल न दुखाओ।'

'मेरी आकृति देख-देख कर कुढ़ती हो। परन्तु मैं दर्पण के सम्मुख प्रसन्नता से फूली नहीं समाती।'

'यह क्यों पगली ?'

'इसलिए कि अब कोई भी मुझ से विवाह करने को तैयार न होगा। अब न पिता जी मुझे विवश करेंगे और न माता जी जिद्द करेंगी और—न तू चमचा बन कर आएगी मेरे पास।'

जीनत ने सर उठाया तो देखा, मुमताज रो रही है। वह उसके पास बैठ गई। उसके गले में बाहें डाल दी और स्वयं भी रोने लगी। रोते-

रोते उसने मुमताज से पूछा—'रो क्यों रही है पगली ?'

'तेरी दशा देख कर ।'

'क्या है मेरी दशा ?'

'मुझ से नहीं देखी जाती—हाय ! मैं अन्धी क्यों न हो गई ।'

'यह फूल सा चेहरा जिस पर आँख नहीं ठहरती थी, क्या से क्या हो गया । तुझे देख कर खून के आँसू रोने को जी चाहता है जीनत ।' यह कह कर मुमताज सिसकियाँ लेकर रोने लगी ।

जीनत ने कहा—'मुझे देख—मैं नहीं रोती । तो तुझे क्यों रोना आता है मुझ पर ?'

'तू तो पागल है ।'

'पागल ही सही—लेकिन मैंने अपना अभिप्राय पूरा कर लिया । जो मैं चाहती थी; वह मुझे मिल गया ।'

'मुमताज ने जीनत की बात का कोई उत्तर न दिया । आँखें पोंछती हुई कमरे से बाहिर निकल गई ।

३६

परवेज और सरोजिनी ने जेल से साथ-साथ रिहाई पाई । परवेज का भव्य स्वागत हुआ । नगर के व्यक्तियों ने प्रसन्नचित उसे हाथों हाथ लिया । कालेज के विद्यार्थी भी स्वागती जलूस में सम्मिलित थे । फिर नगर के व्यक्तियों ने एक सभा में उसे सम्मान पत्र देना चाहा, लेकिन उसने धन्यवाद सहित इन्कार कर दिया । उसने कहा—'सम्मान पत्र किस प्रकार स्वीकर कर सकता हूँ, मैं नेता नहीं हूँ, अपनी इच्छानुसार जेल नहीं गया, यह एक अकस्मात घटना थी कि मैं गिरफ्तार हो गया । और मेरा सौभाग्य था कि नये-नये अनुभव और पाठ प्राप्त करने के लिए

जेल भेज दिया गया। यदि वास्तव में आपको सम्मान पत्र देना है, सम्मान बढ़ाना हैं तो कुँवर साहिब इस सम्मान के अधिकारी हैं। न उन्होंने मेरे हाल पर ध्यान दिया होता, न मैं इस उपाधि के योग्य समझा जाता। उन्हें आप यदि सम्मान पत्र देने पर तैयार हो तो मैं वचन देता हूँ सम्मान पत्र मैं स्वयं लिखूँगा और स्वयं सुनाऊँगा।

जो कार्य वह नहीं करना चाहता था उसे इसी प्रकार वह हंसी-मजाक में टाल दिया करता था, लोग समझ गये कि सब प्रयत्न बेकार हैं खामोश हो रहे।

कालेज के छात्र सुगमता से पीछा छोड़ने वाले नहीं थे, उन्हें गर्व था कि हम आपके शिष्य हैं आप इस कालेज के प्रिन्सिपल हैं। यह कैसे हो सकता है कि आप इतनी बड़ी कुर्बानी करें और हम चुपचाप बैठे रहें। हम सम्मान पत्र देंगे और आपको स्वीकार करना पड़ेगा। परन्तु परवेज ने उनकी एक न सुनी और बातों में टाल दिया।

परवेज की जेल यात्रा के बाद अब यह असम्भव था कि उसे फिर से कालिज का प्रिन्सिपल बना दिया जाये। ट्रस्टियों के दिल में उसकी इज्जत थी, सम्मान था। परन्तु उससे अधिक वह सरकार से डरते थे। ऐसे खतरनाक व्यक्ति को कालेज का प्रिन्सिपल बना कर वह अपने आपको खतरे में डालने के लिये बिल्कुल तैयार नहीं थे। न उनकी ओर से बुलावा आया, न परवेज स्वयं ही कालेज गया, अब फिर वह पुस्तकें लिखने लगा। और इसी आय पर जीवन व्यतीत करने लगा।

जेल से छूटने के बाद उसकी सब से प्रथम रचना 'तास्रात जिन्दाँ' के नाम से प्रकाशित हुई और हाथों-हाथ बिक गई। उसने मनोवैज्ञानिक पद्धियों से साधारण कैदियों का बड़ा विस्तृत वर्णन किया था। और उनके सुधार और चरित्र के उपायों पर प्रकाश डाला। उसे जेल में बड़े-बड़े लुटेरों, कातिलों और खूनियों से मिलने का अवसर मिला था। दिन रात का साथ रहा था। उसने उन्हें बड़े समीप से देखा और पहचाना

था। एक तमाशा देखने वाले की भाँति नहीं, एक प्रोफेसर की स्थिति से, एक डाक्टर की स्थिति से, एक विद्यार्थी की भाँति, उसकी दृष्टि बड़ी पैनी थी। उसने उन कैदियों का दिल देखा था। दिल का रोग देखा था, और जो कुछ देखा था उसका यथार्थ रूप उपस्थित कर दिया था। परवेज से पूर्व कई लीडर जेल गये थे और इन्होंने पुस्तक रूप में वहाँ के अनुभव और वातावरण भी लेखनी से उतारे थे। लेकिन इन्होंने जो कुछ लिखा था वह उनके जेल जीवन से सम्बन्ध रखता था। उन्होंने केवल यह बताया था कि उन्हें जेल में क्या-क्या कष्ट हुए। उन्हें किन-किन कठिनाइयों से दो-चार होना पड़ा। ए-क्लास में रखे जाने के पश्चात भी क्या-क्या अत्याचार उन पर किए गए। सेवक कैदियों की संख्या कम थी। मन चाहे समाचार पत्र नहीं मिलते थे। पुस्तकों का सैन्सर होता था। यद्यपि घी मिलता था, चीनी मिलती थी, माँस मिलता था, रसोइये का प्रबन्ध भी जेल के प्रबन्धकों ने कर दिया था, फिर भी भोजन समय पर प्राप्त नहीं होता था। अस्वादिष्ट होता था बस यही दास्तान थी जो इन महानुभावों ने अपनी पुस्तकों में दोहराई थी। किसी ने यह नहीं बताया था कि कातिल ने कत्ल क्यों किया था? उसे क्या दण्ड मिलना चाहिए था और क्या मिला? लुटेरे ने लूटा क्यों था? वह किस दण्ड का अधिकारी था और सजा उसे किस प्रकार दी गई। कातिल का मनोवैज्ञानिक वर्णन क्या है। लूटेरे की वास्तविक कथा क्या है। इन नाजुक समस्याओं पर बड़े लोगों को न विचार करने का समय मिलता, न विचार करने का कष्ट ही करते। परन्तु परवेज ने सब से पृथक होकर इस विषय पर लेखनी उठाई थी। उसकी पुस्तक में उसकी स्वयं की आप बीती दाल में नमक बराबर थी। और कैदियों के वर्णन से सारी पुस्तक भरी हुई थी। फिर उसने एक लेखक के कर्तव्य से यह सब कुछ नहीं लिखा था अपितु विचारक की भाँति परिवर्तित किया जा सकता था। वह दण्ड का अधिकारी होता है या शिक्षा का। दण्ड से सुधारा जा सकता है या शिक्षा से, दण्ड का अभिप्राय क्या है? सुधार

या प्रतिशोध। यह बड़ी गम्भीर समस्याएँ हैं और इन समस्याओं पर उसने बड़ी प्रकार से बहस की थी। विषय नीरस थी, लेकिन लेखनी की शक्ति ने उसे नये साँचे में ढाल दिया था। लोगों ने यह पुस्तक शौक के लिये हाथों में ले ली और उत्सुकता की दृष्टि से पढ़ी। उसकी कोई पुस्तक अब तक प्रसिद्ध नहीं हुई थी। जितनी 'तासरात जिन्दाँ' प्रथम संस्करण तो हाथों हाथ बिक गया था।

४०

सरोजिनी का अब अधिकतर समय परवेज के साथ व्यतीत होता था। वह त्याग और समर्पण की भावना से परिचित हो गई थी। अब इनके सीने में आरजुओं का तूफान नहीं मचलता था, तमन्नाओं की खेती नहीं लहलहाती थीं। अब वह एक नदी थी शान्त और गम्भीर, जिसमें न कोई हलचल थी न तूफान, न लहरें, न भंवर, केवल वह अब आज्ञाकारी शिष्य की भाँति परवेज के पास आई थी, पहरों बैठती थी, बातें करती थी और जब उठती थी तो कुछ न कुछ लेकर, अब इसके जीवन का उद्देश्य आनन्द प्राप्ति नहीं था। अपितु यह था कि जीवन को जीवन के रहस्य को, जीवित रहने के उपाय को सीखे समझे। सिखाने वाला और समझाने वाला परवेज के अतिरिक्त कौन मिल सकता था।

वह परवेज को देखती थी, प्रेम मिश्रित दृष्टि से नहीं सम्मानमयी दृष्टि से वह इसकी सेवा करती थी। किसी तमन्ना और इच्छा से परिपूर्ण होकर नहीं, केवल इसकी बन जाने के लिये। वह इसके आराम से खुश थी, इसके दुःख से कुढ़ती थी। अब वह अपने आप को कोसा करती थी कि इसने परवेज को चाहा क्यों?

एक दिन परवेज बैठा सरोजिनी से इधर-उधर की बातें कर रहा

था कि मुमताज आती दिखाई दी। इसके हाथ में 'तास्रात जिन्दां' की एक प्रति थी। परवेज ने इसे देखते ही सरोजिनी से कहा—'आ गई शामत हमारी।'

इतने में मुमताज आ गई। परवेज ने इसे मुस्कराती आँखों से देखा और कहा—'मैं समझ गया यह पुस्तक लेकर तुम क्यों आई हो?'

'क्या समझे आप बताइये?'

'लड़ने।'

'वाह! मैं क्यों लड़ती—अहा! सरोजिनी तुम कैसी हो, सुना है जेल की यात्रा भी कर आई।'

'हाँ कर तो आई—जीनत कैसी है इसे नहीं लाई।'

'जीनत, मैं नहीं जानती जीनत को।'

'जीनत को तुम नहीं जानती।'

'वह अब इस दुनिया में कहाँ है।'

परवेज का चेहरा पीला पड़ गया। सरोजिनी का रंग सफेद हो गया। परवेज खामोश रहा। सरोजिनी ने घबड़ा कर पूछा—'क्या हुआ जीनत को?'

'मर गई वह।'

अब परवेज खामोश न बैठ सका। इसने कहा—'क्या कह रही हो मुमताज?'

'सच कह रही हूं।'

'मर गई जीनत।'

'कब? कैसे?'

'यह मैं जानती हूं कि मर गई। कब और कैसे का उत्तर क्या दूँ?'

सरोजिनी ने पूछा—'क्या बीमार थी वह?'

'यह तो पता नहीं चल पाया।'

'फिर भी, आखिर कुछ बताओ तो।' सरोजिनी बोली।

मुमताज ने एक ठण्डी सांस भर कर कहा :

'क्या बताऊँ सरोजिनी काश ! कि जीनत मर गई होती । खुदा कसम इसके मरने का दुःख इतना न मुझे होता, जितना इसकी इस दशा का है ।'

सरोजिनी ने कहा—'अब मेरे दम में दम आया । तुम ने तो मेरी जान निकाल ली थी । तुम्हारे मुँह से यह शब्द निकले कैसे ? अच्छी सखि हो तुम उसकी ।'

'सरोजिनी मैं झूठ नहीं कहती । तुम उसे देखोगी तो तुम भी यही कहोगी, जो मैं कह रही हूं ।'

'कुछ बताओ भी तो रहस्य क्या है ?'

'जीनत जिन्दा है लेकिन मुर्दा से भी गई बीती । इसका वह हुस्न बर्बाद हो गया । इसका वह रंग रूप समाप्त हो गया । इसकी वह मद-भरी आँखें उदास हो गई । इसका वह फूल सा चेहरा मुरझा गया ।'

'कैसे ! क्या हुआ इसे ?'

अब मुमताज ने जीनत की एक-एक बात बतानी आरम्भ की । इस की वह मौनता, विवाह से इन्कार, इसकी बीमारी की सारी दास्तान कह सुनाई । वाजिद की घटना भी इसने बता दी । सरोजिनी मुमताज की यह बातें सुन कर रोने लगी । लेकिन परवेज के चेहरा पर उदासी और दुःख का कोई चिन्ह भी नहीं था । वह इस समय मौन दिखाई देता था । इसने मुमताज से कहा—'फिर अब क्या होगा ?'

'कुछ समझ में नहीं आता ।'

'क्या तुम मेरा एक काम कर सकती हो ?'

'अवश्य करूँगी, कहिये ।'

'क्या तुम जीनत को थोड़ी देर के लिये यहाँ ला सकती हो ।'

'जीनत को—यहाँ ।'

'हाँ ।'

मुमताज ने बड़ी गम्भीरता से गर्दन हिलाई और कहा :

'नहीं, यह नहीं हो सकता।'

'क्यों ?'

'वह नहीं आयेगीं यहाँ।'

'यही तो मैं पूछता हूं क्यों ?'

'यह मैं क्या जानूँ ? लेकिन यह जानती हूं कि उसे आपके मिलने पर कोई राजी नहीं कर सकता।'

'तुम भी नहीं।'

'नहीं, मैं भी नहीं।'

'और सरोजिनी तुम।'

'वचन तो नहीं देती—प्रयत्न करूँगी।'

मुमताज ने परवेज से पूछा—'आप क्यों मिलना चाहते हैं इससे ?'

'मेरी मर्जी।'

'जब वह इस योग्य थी कि आप इससे मिलें, तब तो आपने इसकी बात तक न पूछी। जब वह इस योग्य नहीं रही तो आप इससे मिलना चाहते हैं, यह घावों पर नमक छिड़कना नहीं तो क्या है ?'

'मुमताज तुम नहीं जानती, तुम्हें नहीं मालूम। मैं इससे अवश्य मिलूँगा। यदि वह यहाँ नहीं आई तो मैं इसके घर जाऊँगा।'

'यहाँ तो वह नहीं आयेगी, चलिये इसके घर चलिये।'

'चलती हो सरोजिनी।'

'चलिये।'

तीनों इस समय उठ कर जीनत की ओर चल दिये। वहाँ पहुंचते ही मुमताज और सरोजिनी तो अन्दर चली गईं और परवेज खान बहादुर के समीप बैठ गया। वह इससे बड़े प्रेमपूर्वक मिले—जेल की बातें पूछते रहे। बातों के दौरान में परवेज ने कहा—

'मैं जीनत से मिलना चाहता हूं क्या यह सम्भव है ?'

'क्यों नहीं, तुम से पर्दा कौन करता है जाओ मिल आओ।'

परवेज सीधा जीनत के कमरे में पहुंचा सरोजिनी इसे देख-देख कर खून के आँसू रो रही थी और वह मुस्करा रही थी।

परवेज को अपने कमरे में आता देख कर जीनत खड़ी हो गई। इसने बड़ी गम्भीरता से परवेज को सलाम किया और खामोशी से अपनी कुर्सी पर बैठ गई। परवेज ने सलाम का जवाब दिया और बड़े प्रेम से हाथ मिलाया। वह भी पास ही एक कुर्सी पर बैठ गया। इसने मुमताज से कहा।

'बड़ी शरारती हो तुम।'

'क्या किया मैंने।'

'तुम ने इतना भयानक चित्र जीनत का खींचा था कि मैं डर गया था क्या बिगड़ा है जीनत का इस बीमारी से।'

'कुछ नहीं बिगड़ा।'

'बिल्कुल नहीं—वह इसी प्रकार—'

'मैं यह बातें नहीं सुनना चाहती मास्टर साहिब।'

परवेज खामोश हो गया। सरोजिनी न मुमताज से कहा—'चलो अम्मीजान से मिल आयें। दोनों दूसरे कमरे में चली गई।

परवेज ने जीनत से कहा—'नाराज हो गईं हम से।'

'जी नहीं नाराज क्यों होती!'

'मैं एक विशेष उद्देश्य लेकर यहाँ आया हूं।'

'कहिये।'

'मैं यह चाहता हूं हम दोनों की जिन्दगी एक हो जाये—क्या यह हो सकता है जीनत, क्या तुम स्वीकार कर लोगी मेरी बात।'

'यह नहीं हो सकता। मैं आपकी बात स्वीकार नहीं कर सकती।'

परवेज गम्भीर हो गया। इसने बड़ी निराशा से पूछा—'क्यों किस लिये ठुकरा रही हो मुझे।'

'क्यों क्या ठुकराना केवल आप ही को आता है।'

'तुम मुझ से घृणा करती रही अब तक ।'

'और आप ।'

'मैंने तो कभी घृणा नहीं की आप से ।'

'यही मेरे सम्बन्ध में भी समझ लीजिये ।'

'फिर तुम ने मेरी बात क्यों ठुकरा दी ।'

'आप दूसरों की बात ठुकरा सकते हैं, और दूसरे आपकी बात नहीं ठुकरा सकते हैं ! —आखिर ऐसा क्यों नहीं हो सकता ?'

'मैंने किस की बात ठुकराई, क्या कह रही हो तुम ।'

'मैं बिलकुल सच कह रही हूं— आपने अब्बाजान को जो पत्र लिखा था—याद है क्या लिखा था उसमें—कर दीजिये इन्कार !'

'नहीं मैं इन्कार नहीं करता, परन्तु वह समय और था, वह बात और थी ।'

'सब समझती हूं मैं ।'

'क्या समझी तुम ।'

'उस समय मैं सुन्दर, रूपवान थी । आप मेरे सामने गर्दन नहीं झुका सकते थे । अगर झुकाते तो लोग कहते परवेज ने हुस्न की चौखट पर सर झुका दिया, अब मैं बदसूरत हो चुकी हूं, मुझ से विवाह करके आप यह सिद्ध करना चाहते हैं कि आप बड़े दयावान हैं । इस औरत को आपने जीवन साथी बना लिया, जिसे इसका मन्गेतर तक ठुकरा चुका है । जिससे विवाह करने पर कोई तैयार नहीं होता—सच कहियेगा यह बात है न—लेकिन विश्वास रखिये मैं ऐसा नहीं होने दूंगी, मुझे आपकी दया की आवश्यकता नहीं है । मैं आपसे कदापि विवाह नहीं कर सकती ।

'जीनत, यह तुम क्या कह रही हो ? कैसी दया ? और कैसा अभिमान । आज मैं प्रथम बार तुम्हारे सम्मुख इस रहस्य को खोल रहा हूं कि मैं सदैव तुम्हें चाहता रहा, मेरे जीवन का कोई क्षण, ऐसा नहीं व्यतीत हुआ जब तुम्हारी याद मेरे दिल में न हो, जब तुम्हारा चित्र मेरी आँखों के सम्मुख न घूमता रहा हो । जब तुम्हारा प्रेम मेरे सीने में लहरें न मार

रहा हो—बेशक मैंने विवाह से इन्कार किया था और इस विश्वसनीय इन्कार का कारण यह था कि तुममें एक बहुत बड़ा दुर्गुण था कि तुम दुनिया की नजर में सुन्दर थीं और हार्दिक प्रेम के परिणाम स्वरूप भी तुम्हारा यह दुर्गुण मैं सहन नहीं कर सकता था। अब तुम्हारा वह दुर्गुण दूर हो गया है। अब दुनिया तुम्हें सुन्दर नहीं समझती। लेकिन मेरी आँखों में तुम्हारी सुन्दरता और बढ़ गई है। जिस अवगुण के कारण मैं तुम्हें प्राप्त करने में असफल था। अब वह अवगुण मिट चुका है, मेरा प्रेम ज्यों का त्यों स्थिर है, मेरा प्रेम इसी तरह उपस्थित है, जैसे पहले था फिर मैं तुम्हें क्यों न अपने दिल में रखने की, अपनी आँखों में बसाने की, अपने सीने में छिपा लेने का प्रयत्न करूँ—जीनत जल्दबाजी से काम न लो, निर्णय में शीघ्रता न करो, इस दिल को न ठुकराओ, जो तुम्हारे प्रेम से परिपूर्ण हैं। इस दिल को तुम न तोड़ो, जो तुम्हारे तोड़ने के पश्चात फिर कभी नहीं जुड़ सकेगा—बताओ जीनत क्या निर्णय करती हो तुम। तुम्हारे निर्णय पर मेरा जीवन और मृत्यु निर्भर हैं। तुम्हारे बिना मैं कदापि जिन्दा नहीं रह सकता। अब मेरी जिन्दगी और मौत केवल तुम्हारे हाथ में है, बोलो, बताओ क्या कहती हो जीनत।'

जीनत खामोशी से परवेज की बातें सुन रही थी। इसकी आँखों से आँसुओं की नदी बह रही थी। इसका दिल उमड़ा हुआ चला आ रहा था। वह लाख-लाख अपने आँसुओं को रोकने का प्रयत्न करती थी। लेकिन जब नदी में बाढ़ आती है तो वह सागर बन जाती है। इसकी लहर किसी के रोके नहीं रुकती। इसके प्रयत्न असफल रहे और आँसुओं का प्रवाह रोके न रुक सका।

परवेज ने यह दृश्य देखा। वह विकलता से उठा। उसने अपने हाथ से जीनत के आँसू पोंछे और इसके समीप बैठ कर बड़ी कातर मय शब्दों में बोला—'जीनत!'

'कहिये।'

'क्या निर्णय किया तुम ने ?'

'आप मुझ से क्या पूछते हैं—अब्बाजान से यह बातें करिये ।'

'इनसे भी कर लूँगा यह बातें । परन्तु तुम तो बताओ तुम्हारा क्या निर्णय है ।'

जीनत मौन बैठी रही । परवेज ने फिर कहा—'मैं यहाँ से उसी समय जाऊँगा जब तुम हाँ करोगी, मान लोगी कि मैं तुम से प्रेम करता हूं । इकरार कर लोगी कि तुम भी मुझ से प्रेम करती हो । दिन गुजर जायेंगे, सप्ताह गुजर जायेंगे, यहीं बैठा रहूंगा, नहीं उठूँगा यहां से ।'

'तो मैं कब इन्कार करती हूं ।'

'जीनत—' यह कह कर परवेज ने बड़े जोश के साथ जीनत का हाथ अपने हाथ में लिया और चूम लिया । ठीक इसी समय मुमताज कमरे में प्रविष्ट हुई । जीनत ने शीघ्रता से अपना हाथ खींच लिया । मुमताज ने मुस्करा कर गर्दन हिलाई और चुपके से बाहिर निकल गई

—:*: समाप्त :*:—



K.M. TANDON

1967

M. C. Joshi

1978

DEVAL

1992